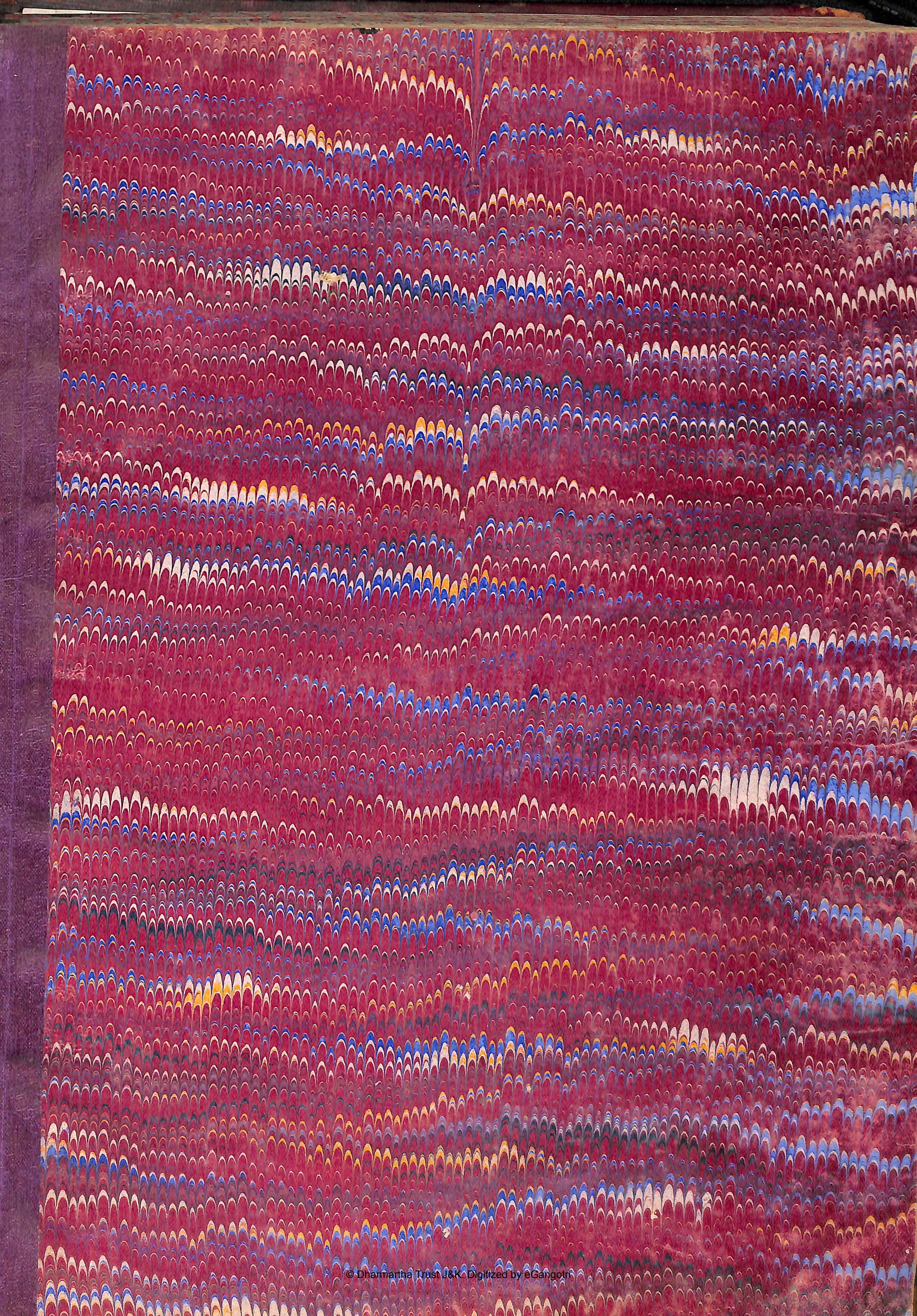
5402







नं. ३९६३ ध

प्रबोधचन्द्रोदय:

सटीक:

१९८२ पत्र

भाषा-काश्मीर! गुलाबसिंह:

सं. १९६०

5407
192
पुरा

नं० ५४०७-घ
प्रबोध चन्द्रोदय भाषाटीका (नाटकम्)
भाषाकर्ता गुलाबसिंह: संवत् १९६०
पत्राणि १९८ (सम्पूर्णम्)



प्र॰ चं॰
भा॰ टी॰
१

ॐश्रीगुरवेनमः॥ ॐरामं विनायकं वन्दे सदा
नंद गुणाकरं॥संसार ताप संहार कारणं विघ्न
वारणं ॥ ॥॥दोहा ॐगौरीपुत्र गणेश पद बे
दोवारं वार॥कारज कीजे सिध मम देहु सु
बुध उदार॥१॥ जाके नाम प्रतापते जलपषे
ल तराहि ॥ वहि रघुनाइक दासके सदा बसे
मनमाहि॥२॥दोहा॥गुरनानक गोविंद गुर
जासम श्रोर न कोइ॥ अभिवंदन पदकमल
तिन जोर सदा करदोइ॥३॥दोहा॥ भारतभूम
पुनीत पद तपो ज्ञान अवतार॥ मानसिंघ
गुरको नमो तारण करणासार॥४॥नराज
छंद॥ प्रबोधचंद्रनाटकं सबोधग्रंथमे करो॥
अलंबसाधसंगके विचार चितमै धरो॥ सुने
पडे सुजेजना निवार मोह बंधना॥ लहे अपा
र मोषको टुटे समस्त फंधना॥५॥सवैया॥
भूपन बोध सुबोधनकी प्रति कौतिक माहि
रहे लपटाय॥ बोधविना जग मोष कहां इम

संत सभै सुष वेद अलाप ॥ अंतसमै यमदी
नकरै तिनहेर महा करुणा रस आप ॥ बोध
उपावन हेत सनो नर नाहिनके यह ग्रंथ ब
नाप ॥ ६ ॥
मूल ॥ मध्याह्नार्क मरीचिकास्विव पयः पू
रो यदज्ञानतः खं वायुर्ज्वलनो जलं क्षितिरिति
त्रैलोक्यमुन्मीलति यत्तत्त्वं विदुषां निमील
ति पुनः स्रग्भोगि भोगोपमं सांद्रानंद मुपा
स्महे तदमलं स्वात्मावबोधं महः ॥ १ ॥
सवैया ॥ भान मरीच सनीरसमं पुनिजा अज्ञा
न जगत बनायो ॥ वायु आकास सपावक
नीर मही पुनि लोक सतीन उपायो ॥ जाहिपि
षे स्रगसाप जिसे जग फेर सभै तिन माहि वि
लायो ॥ उज्जल आतम बोध मोहे हम आनंद सो
उर मांहि ध्यायो ॥ १ ॥
भाषा ॥ हमजोहां श्रीकृष्णमिश्र सो उपनिष
दां करके कहा जो तेज जिस तेजको उपनि

प्र॰ चं
भा॰ टी॰
२

2

षदां प्रतिपादन करदीयांहैन तिस तेजकी
हम उपासन करदेहां कैसाहै तेज आनंदरू
पहै पुनः कैसाहै निर्मलहै अविद्याकरके
करे जो दोषहै तिनते रहितहै फेर कैसाहै
स्वप्रकाशरूपहै पुनः कैसाहै इसके नजान
नेते जगत सत्यहोकर भासताहै पृथ्वी आ
दि करके इस विषे दृष्टांत कहेहै जैसे म
ध्याह्नविषे सूर्यदी किरणांकरके रेतजो
है सो जलकर भासतीहै तिस रेतकों दे
षकर जलबुद्धि होती मृगोंकों सो तैसेही
इस तेजके जानने विना जगत सत्य होक
र भासताहै और ज्ञानीयेंकों जगत ब्रह्म
ही रूपकर भासताहै इसविषे दृष्टांतक
हेहै जैसे मालाविषे भास आवै सर्पकादे
ह सो सर्परूपकरके स्थितहोताहै तैसेंही
ज्ञानीयाकों जगत ब्रह्मते भिन्ननही भासता
है ब्रह्मरूप करकेही भासताहै क्या इस्थित
होताहै ॥२॥

मूल॥ अपिच अंतर्नाडी नियमित मरु ल्ले
चित ब्रह्मरंध्रं स्वांते शांति प्रणयिनि स
मुन्मीलदानंद सांद्रं प्रत्यग्ज्योति र्जय
ति यमिनः स्पष्ट लालाटनेत्र व्याज व्यक्ती
कृत मिव जग ध्यापि चंद्रार्द्ध मौलेः ॥२॥
सवैया॥ प्रतिको जोत सनातन जो जग ब
यापरही सभमाहि सुहाई॥ चिद सांतिवि
षे प्रति भासतहै कृत संयमको जिह मानं
द नाई॥ चिदचूड निरोध सुवायु भले ब्र
ह्मरंध्र हते प्रति ऊच चलाई॥ द्रिग तीसर
विव्याज सुभालविषे सिव संजमवंत सु
आप दिषाई॥ दोहा॥ कीरतवरमानाम
जिह भूपति बडो रसाल ताहि सभा म
हि विमल मति आहि प्रधान ग्रपाल॥
दोहा॥ वरष एक नाटक तहां भयो सुस
भा मझार जाको हेर सुजान लहि भए।

भूप भवपार ॥ दोहा ॥ याको सुने ज्ञ कानमे
नीके चीत लगाइ आसुर संपति दूर तजि
वेग ज्ञान बढ़पाइ ॥ २ ॥ भाषा ॥ इस श्लोकके
विषे जो चशब्द है सो प्राचीन मंगल सूचन
करणेवाला है चंद्रार्ध मौलि जो शिवजी है
प्रत्यग्ज्योति सो सभते अधिक होकरवर्ते
है कैसी है ज्योति अंतर नाडी यो सुषमणा
तिसकरके रोकिया जो है पवन तिस प
वन करके लंघा है ब्रह्मरंध्र जिसने क्या
होपश्चो अंतःकरणके शांतहोइयां फेर
कैसी है ज्योति प्रगटज्योहै सुषरूपी आनं
द उस साथ अभिन्नहै और स्वयंप्रकाश
मही स्वरूपहे जिसका फेर कैसीहै ज्योति
मस्तकविषे जोहै नेत्र तिसके वहाने कर
के प्रगटहै फेर कैसीहै ज्योतिसारे जगत
विषे व्याप्त होरहीहै ॥ २ ॥

मूल॥ नान्द्यन्ते सूत्रधारः अलमति विस्तरेण
आदिष्टोस्मि सकल सामंतचक्र चूडामणि
मरीचि मंजरी नीराजित चरण कमलेन
वलवदरि निवह वक्षस्थलकपाट पाटन
प्रकटित नरसिंहरूपेण प्रवल नर नरप
ति कुल प्रलय महार्णव मग्नमेदिनी समु
द्धर वराहेण निखिल दिग्विलासिनी क
र्ण पूरीकृत कीर्तिलता पल्लवेन समस्ता
शास्ते वैरमकर्णताला स्फालन वहल प
वन नर्तित प्रतापानलेन॥२॥

सूत्रधारोवाच सपत्नीप्रति सवैया॥

वख्वाननिको कछु काम नही अव आइ
हमोहि गुपालदई सभ भूपति जा मुकुटा
मणिके पदपंकज आरती आनकरैं प्रवला
रि समूह मही पनके उर पाटनको नरसिं
हमई वल भूपति सिंधुपसी धरनी इनके

५

र वराह उधारलई ॥ दिग्नारि विलासनि का
ननमै जिह कीरतिके सुति टंक बनाए ॥
सभ दिग्गज कान सुनाल बडे विधनाहि स
फालन पोन पजाए ॥ तिह संग मिले अति
नाचतहै भवताहि प्रताप सुजाल वढाए ॥
इन आप गुपाल स पढ कहयो वडनाटक
भूपति देह दिखाए ॥ ३ ॥

भाषाटी॰ ॥ सूत्रधार जोहै नटोंका सरदार सो
कहताहै ॥ और जो नटहैं तिनके प्रति अब
काल शुभ व्यवहार करके वितीत करनेको
योग्यहै ॥ गोपाल राजेने साडेको आग्यादईहै
क्या आग्यादईहै ॥ कीर्तिवर्माके आगेनटका
खेलकरो कैसाहै गोपालराजा लक्ष्मीवा
लाहै ॥ पुनः कैसाहै सकल क्या संपूर्णजो
हैन मंडलीक राजे तिनका जो समूह ति
नोंकीयां मुकटोकीयां मणियां रूपी जोहैं

किरण सोई कहीए मंजरीयां तिन्हाकर
के रंजत चरणरूपी कमल जिसका पुनः
कैसाहै गोपाल वलवाले जोहैंण शत्रुवांके
समूह तिनका वक्षस्थल रूपी जो कपाट
कहिए द्वार तिसके पाटनका हरकरणेके
अर्थ प्रगटधारियाहै नरसिंहरूप जिसने
फेर कैसाहै वडे जो हैंण राजीयोंके कुल
तिनका जो विनास करण सोई ठहरा स
मुद्र तिसविषे मग्न क्या डूबीयो पृथ्वीहै तिस
के उद्धारके महावराह रूपहै क्या सूकर
रूपहै गोपाल राजा पुनः कैसाहै संपूर्ण
जोहैंन दिसां रूपी नायका उणांदे जो हैंन
श्रवण क्या कर्ण उणांके कर्णांका भूषण
कराहै अपणा जस जिसने फेरकैसाहै दि
ग्गोंके जो हैंन हस्ति उन्हाका जोहै कर्ण वि
क्षेप क्या हिलना उसते चलाया पवन तिस

पवनने नचाययाहै प्रतापरूपी अग्निथिसका
इश्यो क्या जाननाहै चारें दिसांमै थिसका
प्रतापछाई रह्याहै ॥३॥

मूल॥ अथाखिलस्य सहज सुहृदो राज्ञः श्री
कीर्तिवर्मदेवस्य दिग्विजय व्यापारांतरित
परंब्रह्मानंदरसै रस्माभिः सम्नुन्मीलित वि
विध विषय रस स्पर्श हृषिता इवाति वा
हिता दिवसाः इदानीं कृतकृत्या एव वयं ॥४॥

दोहा॥ सहज सुहिरद सुभाव यह कीरति
वरमा भूप॥ताहित उदमथो कीयो दिग्गज
य मसम अनूप॥ता विपार अंतरत भए ब्रह्मा
नंद हमार॥विविध विषै रस परस करि भए
मनोज विकार॥ता विपार हृषतमनो वास
रदए विताइ॥कृत कृत भए सुश्राज्ञ हम
भूपति राज दिवाइ॥४॥

भाषाटी॰ जो प्रासादईहै गोपालराजाने ति

स आज्ञाको प्रगट करताहै स्वभावकरके
कोमल जो कीर्तीवर्मा राजा कीर्तीवर्मा क्या
कहिये जस रूपीहै कवच क्या जिरह जि
सका तिसका जोहै दिग्विजय जीतना
तिस जीतने करके चिरकाल विलंबको प्रा
प्तहूवाहै परंब्रह्मका आनंदमयरस जिस
ने ऐसेहोए हमने अनेक प्रकार भोगेजो
हैं विषय रस उनके आनंदकरके वितीत
करेहैं अनंत दिन परंतु इह जो विषयरस
रसका स्वादहै सो दुःखितहै तिनों रसोंसे अब
इसका चित्त शांतीको प्राप्तहूवाहै ॥४॥
मूल ॥ यतः नीताः क्षयं क्षितिभुजो नृपतेर्वि
र्विपक्षा रत्नावती क्षितिरभूत्सुधियैव रमाल्यैः
साम्राज्य मस्य विहितं क्षितिपाल मौलि मा
लार्चितं भुवि पयोनिधि मेखलायां ॥५॥
सवैया ॥ प्रसिध अमातन भूपतिके सु विप

प्र. चं.
भा. टी.
६
6

ष वली न्यमार गिराय॥ रक्षपाल करी स
गली धरनी पुनि याहिके सीस है छत्र फि
राय॥ स पयोनिधि मेषल याह धरा सिरि
भूपनके इन राज कराय॥ इस भांति प्रयो
ग निवेदनकै जग आपि विनोद करे इम
भाय॥५॥

भाषाटी.॥ यतः जिसकारणते इस राजा
के जो शत्रु और राजेहैन सो न्ययको प्रा
प्तहोयेहैन पुनः इसका जो प्रसिद्धमंत्रीहैं
तिनों करके पृथ्वीकीभी रक्षाहोईहै औ
र इसराजाका जो राज्यहै सो पृथ्वीविषे
समुद्रपर्यंत छाइ रह्याहै कैसा राजाहै
और जो हैन क्षितीपालराजे उनके मुक
टोंकी जो मालाहैन उनोककै पूज्यमा
नहै राज जिसका॥५॥

मूल॥ इतितद्वयं शांतिरस प्राय प्रयोगा

मिनयेनात्मानं विनोदयितु मिच्छामः न
ह्यत्पूर्वं तत्र भवद्भिः श्रीकृष्णमिश्रैः प्रबोध
चंद्रोदयं नामनाटकं निर्मायभवतः सम
र्पित मासीत् तदद्यराज्ञः कीर्तिवर्मणः
पुरस्तादभिनेतव्यं भवता अस्तिचास्य भू
पतेः स परिषदो वलोकन कुतूहलमिति
तद्भवतु गृहंगत्वा गृहिणी माहूय संगीत
क मनुतिष्ठामि परिक्रमने पथ्याभिमुखं
मवलोक्य आर्ये इतस्तावत् प्रविश्यन
टी पसम्म आणवेदं अज्जउत्तो कोणिओहो
अणुचिट्ठउत्ति सूत्रधारः आर्ये विदित मेव
भवत्याः ॥९॥।॥

कवित्त॥ प्रबोधचंद्र नाटके सूत्रधारहि नट
नोहि छिग कृष्णमिश्र आप जोई पूरब ब
नायोहै॥कीरतवरम देवके समीप सोई
नाटक सहे रनको भूपतको मन उमगायो

प्र.चं.
भा.टी.
७

हे सुनो सूत्रधार तुम प्रगट विचारक
हो सभाई समेत इद कौतुक सुहायो है
सुनिकै गुपाल वाक सूत्रधार चारवाक ना
टकके हेत निज नारको बुलायो है नेपथ
की ओर तिन हेरकै पुकार कह्यो आरये
सुआउ इत तबी नटी आई है आरये सुको
न काज मोहको बुलायो आज कीजीए
सुकाज अब बेर कौ लगाई है सूत्रधार
ताहिको उचार भनि पढ कह्यो आरये अ
जाननहि जाहित बुलाई है नाटक प्रबो
धचंद्र चंद्रमा समान जगदीजीए दिषाइ
यो गुपाल मनआई है ॥ ६ ॥
भाषाटी॰ जिस कारणते मैं जोहां गोपाल
राजा सो मैं प्रीतीउपजी है नट रसन्तन
का बहुत दिषाना जिसकरके आप विनो
द करनेकों चाहतां हों जिसी कारणते आ

व्याकरणोयोग्यजोहै श्रीकृष्णमिश्र तिने
ने तमाउ प्रति पूर्वकाल विषे प्रबोधचं
द्रोदयनामा नाटक रचकरके तमको
दियाहै सो नाटक तमकों कीर्तीवर्माके
आगे दिषानेके योग्यहै इस कीर्तीवर्मा
राजाकों और इसके सभाकों देषनेकी इ
छाहै अब इसथी उपरंत नट वामनविषे
चिंतन करताहै क्या नट चिंतन करताहै
अब घरविषे जाइकरके आपनी इस्त्री
कोबुलाइके राजाकों नृत दिषावताहों
फेर नटस्थानरंगभूमीमें नृत प्रक्रमाक
रके सभा चौकथी बाहर पुकारताभया
आपनी इस्त्रीकोबुलाया हे नटनी तूं
इस्थानाविषेआ नटी प्रामहोइके कहि
दीहै मैं आनप्रामहोईहों मेरेकों आज्ञा
करहे आर्यपुत्र हे नटमें क्या करों सो।

प्र॰ चं॰ भा टी॰ ८

8

मोकों आज्ञादेवो अव उसप्रती नटकहू नभया है सभजानतीहै नटी कह्यामैं कैसे जानतीहूं ॥ ६ ॥

मूल ॥ अस्तिप्रत्यर्थि पृथ्वीपति विपुल बलारण्य मूर्छत्प्रतापज्योति ज्वाला वलीढ त्रिभुवन विवरो विश्वविश्रांतकीर्तिः ॥ गोपालेभूमिपालान्प्रसभ मसिलता मित्रमात्रेण जित्वा साम्राज्ये कीर्तिवर्मा नरपति तिलको येनभूयोभ्यषेचि ॥ ७ ॥

कवित्त ॥ भूपति विपल बल सोई तृ अरन जान पावक प्रतापपवन संगते वढायोहै ताहिकी सुज्वाल तीन भोनमैं विसाल वाढी कीरतिका पुंजलोक तीनहूं मे गायोहै तीने चंदहास प्रतिकूल नृप नासकर जीनके गुपाल सनेर साढिगआयो है सामराज राजको भिषेक जिनफेर ज

गकीरति वरमदेव वालमै करायोहै ॥७॥

भाषाटी॰॥ अब नटकहताहै सोगोपालराजा कीर्तीवर्मा आपणे पुत्रकों राजका तिल कदेताभया कैसे करके भूमिपालजो राजे हैन तिनको जीतकरके पुनः कैसाहै राजा विष्णु जिसका मित्रहै और विषजो जगतहै तिसविषे प्रसिद्धहै जस जिसका फेर कै साहै राजा शत्रु जो और राजेहैन उनकी अ धिक जो सेनाहै सोई येकवन ठहरा तिसी वनविषे हस्तीका प्रामहोई जो प्रतापहूपी अग्नीकी ज्वाला तिसज्वालाकरके दवाईहै समस्त पृथ्वी जिसने॥७॥

मूल॥ अपिच अद्याप्युन्मदयातुधान तरुणी चंचत्करा स्फालन व्यावला न्नकपाल ताल वणितै र्नृत्यत्पिशांचांगनाः उद्गायंतियशां सि यस्यविनतै र्नीदेःप्रचंडानिल प्रक्षुभ्यत्क

विजृंभ कूटकरूर व्यर्के रण होणाय:॥ ८॥
सवैया॥ रणरंग मही पिसता मनयाअब लौ नर छुइन तालबजावै अलिकै कवि पिंग कपोल लटी स्व पिसाचन यातहि न न दिषावै करिकुंभ मृदंगनि पानवलौ धसि नाद अनेक स्व पीठ स्वनावै यह भांत स्वनो नटनी जगमे रणरंग मही अब लौ जसगावै॥ ८॥
भाषाटी॰॥ अब तांईभी जिसकीयां रणकीयो भूमीयांहैन सो बडे विस्तारवाले जो शाहहैन तिनोंकरके मानो जसकीर्ती गावतीयांहैन सो शाहकैसेहैन वडा जो पवन तिसकरके लोभको प्रामकीयेहैं जो हाथीयोंके सिरोंके समूह उन गुफाइपी सिरोंमें प्रगटहै भूमीयां कैसीयांहैन नाचकररहीयांहैन पिसाचोकीयां इस्त्रीयां जिनो।

विषै पुनः नादकैसेहैन वडे मद संजुगत
जोहैन राक्षसोंकी स्त्रीयां तिनोंके वडे क्रो
तीवाले जोहैन हथ उना हथोका जो हलना
क्या तारदेणा तिस नादकरके चपलहोये
जोहैन मनुषोंके कपाल सोई ढहिरे वाजे ति
नो वाजोंके शब्दहैन जिनमें ॥८॥
मूल॥ तेनच शांत पथ प्रस्थिते नात्मनो वि
नोदार्थं प्रबोधचंद्रोदयाभिधानं नाटक म
भिनेतु मादिष्टोस्मि तदा दिशयंतां भरताः व
र्णिका परिग्रहाय नटी सविस्मयं आर्ज्ज उत्त
आश्चरियं आश्चरियं ॥९॥
सवैया॥ रससांत प्रसंन विनोदनके हित
हे नटनी महिपाल बुलाए॥ अवगाह सभा
वह नाटक जो धर स्वांग भले हमदेह दि
खाए॥ नटनी तव यह कहयो भरता हित
स्वांगन मान चले हमगाए॥ यह आहि अवे

भवतो मनमें रहन आरय प गपाल रुभाय ॥
भाषाटी॰ ॥ नटनटी प्रति कहता है आपने आ
नंदके वास्ते शांती मार्गको आसरहुवा जो
गोपालराजा है उसने आपने विनोदकेवा
स्ते प्रबोधचंद्रोदय नाटक है तिसको दि
षावनेके वास्ते हमको आज्ञादई है हे न
टी अब तिसकारण तूं नटुवोंके प्रति नट
वेषके बनावनेवास्ते आज्ञादेउ नटनी क
हते हैं बडाआश्चर्य है बडाआश्चर्य है ॥ ९ ॥
मूल ॥ येणत धाणि अभ्र प्रबल विक्रमे क्षो
णि भसि दम मलरा अमंडलेन आआस्मात्रा
वि अब हिणको अंडदंड बहल पवित्वंत
मर्वाणि अरजंजंत तर अतरंग मालेणिवंतर
णि वडंतितिर खविवि खल सहय सहस्स
पलम्य उलंगमा अंगमहा महिहर सहस्सं
भमत प्र अदंड चंड मंदताभिचाद्यप्यंत ।

स अलपति सलिले संचाटं कर्णसेणसा
अशणि स्मरिय ममङ् महोणेव हीरसगु
ङ्के आसादादिदा समर विजय अलन्मी
तस्म संपदं स अलगुनि अणा सलाहिणि
जवीर चरिट स्मकधमेरि मोउव समा मं
ङुता सूत्रधारः ॥९
सवैया॥निजप्राक्रमकै रण रंग मही निज
मंडल भूपनके सभगाए॥ सुनि कान लो
तान कठोर धनू रण मंडलमे सर ठोच ब
लाए॥तिन बानन के अरिषेतविषे स तुरंग
नके बङ पुंज गिराए॥ निज आयुध धार
महीध से गजकोटिनि कोटि सभुम रलाए॥
पैदलसेनि सधीरनिधी भुजमंदर व्यात स
बया ऊलकीनी॥ सुति मैनि पयोनिधको
मथकै बलभाव विजे लषमी जिनलीनी॥
जिनके रणकी सुनि हंदसभे अवलोज स

प्र चं॰
भा टी॰
११

कीरति गाहि निबीनी रस मानिविषै तिन की मति आवय मोहु कहो किहभाति ह्वबीनी ॥ ॥ ९

भाषाटी॰॥ जिसराजेने युद्ध विजैकी लक्ष्मी प्राप्तकीईहै कैसे करके कर्ण जो राजाहै तिसकी सेनारूपी समुद्र मथकरके किसकी न्याई जैसे श्रीकृष्ण जो भगवानहै सो तिसभगवानने क्षीर समुद्रको मथकरके लक्ष्मी प्राप्त होतभई तिसी प्रकार इसराजाकोभी कर्णसैना सागर मथकरके लक्ष्मीप्राप्त होतभई राजा कैसाहै और भगवानभी कैसेहैन जिनोने आपनी भुजोके बलकरके हरकीयेहैन राजयोंके समूह अरु कैसाहै कर्णराजेकी सेनारूपी सागर कर्णपर्यंत षेचा जोहै धनष तिस धनषतें चले जोहैन बाणोके समूह

तिनवानोंके समूहां करके छिन्नभये जो
हैंन घोडीयोंके अंग सोई तरंगोकीयां मा
लाहैंन जिस कर्णकी सेनारूपी सागर
विषे पुनः कैसा कर्णसेना सागरहै नि
रंतर चलते जोहैंन तीक्ष्णसस्त्र असंख्ये
तिनों सस्त्रोंकरके काटेगये जोहैंन मद
हाथी सोई हाथी असंखहैंन परवत जि
स सागरमें होर कैसाहै कर्णसेना सागर
भ्रमता जोहै राजका भुजदंड वडा उग्रसो
ई ठहरा एक मंथाचल परवत तिसदे म
थन करके डसदे हलानेसे मारेगयेहैंन
जो प्यादे सोई रूपहैंन जलका समूह जि
सविषे इसकरके क्याजानाहै जैसे भगवा
नने समुद्रमथ्याहै तैसेही इसराजेनेभी क
र्णका सेनारूपी सागर मथ्याहै तैसेही इ
सराजेनेभी कर्णका सेनारूपी सागरमथ्या

प्र.चं.
भा.टी.
१२

12

है नंदनटीकों कहतेहै हे नट अब इसरा
जेगोपालको कैसे ऐसी शांती रस प्राप्त
हूवाहै गोपालराजा कैसाहै संपूर्ण जो
मुनीजनहैंन सो तिसके वीर चरित्रकों
श्लाघा करतेहैं ॥ ९

मूल॥ अपि च निसर्ग सौम्यमेव ब्राह्मं ज्योतिः
कुतोपि कारणात्प्राप्त विकारमपि पुनः
स्वभाव मेवाव तिष्ठते यतः सकल भूपा
ल कुल प्रलय कालाग्निरुद्रेणचेदि पति
ना समुन्मूलित चंद्रान्वय पार्थिवानां पृ
थिव्या माधिपत्यं स्थिरीकर्तुं मयमस्य सं
रंभः पश्य. ॥

सूत्रधारोवाच॥ दोहा॥ ब्रह्मण जोति स्वभावते
सम सरूप जग माहि कारणपाइ विकार
भज पुनि निजरूप समाहि नृपकुलप्रलै
क्रिसानु समचेदिपती जगमाहि चंद्रवंस

नृपराजको हरकियो उनितांहि॥ चंद्रवंस
नृपराज हित उद्यम कीयो भुपाल॥ मार
विरोधी थिरकीयो राज्य भुपाल दिवाई॥
भाषाटी॰॥ अब नटनटीकों कहताहै हे नट
नी स्वभावकर्के सौम्यजोहै ब्रह्मतेज सो
जेकर किसी कारणते विकारकोंभी प्राप्त
होयाहै फेर आपणेही स्वभावमो इस्थि
तहोताहै जिसकारणते समस्तजोहैन
राजीयोंके कुल उनकै प्रलै करनेकों का
लाग्निरुद्रकीन्याई जोहैचे दीपती कर्ण उ
सने विनासजो कीयेथे चंद्रवंस कुलके
राजे तिसीवास्ते उनो चंद्रवंसीयों राजी
योंके राजइस्थित करणेवास्ते उनो चंद्रवं
सीयें राजीयोंके राजइस्थित करणेवास्ते
इसराजेकों क्रोधउत्पतभया परंतु स्वभा
वकर्केनो शांतहोया॰॥

13

मूल॥ तथा कल्पांत वात संक्षोभ लंघिता
शेषभूभृतः स्थैर्यप्रसाद मर्यादास्ताएव
हि महोदधेः अपिच भगवन्नारायणांश
संभूताभूतहिताय तथाविधाः पौरुषभू
षणाः पुरुषाः क्षिति भवतीर्थ्य निष्पादि
त कृत्याः पुनः शांति मेव प्रपद्यंते यथा
परशुराम मेवा कलयत भवतीतितावत्

सवैया॥ कल्पांतन प्रभंजन क्षोभ भयो सब
तापति जिउ सभ सैल दवाई कृतकार
य फेर गहे थिरता निज वेलि कि भीतरि
आप ढराई भगवंतके अंस जए नरजे
सभ भूतनके हित प्रेम बडाए नर मंडल
लै अवतार मही कृत कारय ते रस सांं
ति लगाए ॥ ॥ ९

भाषाटी॥ पुनः और प्रकारकर नटनटी
कों समझावतेहैं प्रलैकालका जो पवन

है तिस पवनके स्पर्शकरके लंघेहैंन अनेकपरवत जिसने ऐसा जो समुद्र है सो फेरभी अचलभावकों प्रसन्नभाव कों अरु अपनी मर्यादाकों धारताहै तै सेही इह गोपालराजाभी शांतीरसको प्रा प्तहूवाहै पुनः नट समकावतभया जो भगवानके अंसते उत्पन्न भयेहैंन पुरुष सो पुरुष प्राणीयोंके हितकारवास्ते पृथ्वी विषे अवतार लेके अरु पुरुषा र्थहीहै भू षन जिनका कैसे कैसे कार्यकीयेहैंन जि नोने सोभी पुनः शांती रसकों प्राप्तभयीहै न हेनटी तूं परसरामकों देष सो परसरा म प्रथमेतो उग्रकर्म करताभया तिस पर सरामके उग्रकर्म अब श्रवणकर ५

मूल॥ येनत्रिसप्तकृत्वो नृपवह्लवसा मस्तिष्कपंक प्राग्भारे कारिभूरि स्नुतरु

धिरसरिद्वारिस्फुरेभिषेकः यस्यह्री वालहृ
द्वा वधिनिधनविधौ निर्दयो विश्रुतोसौ
राजन्याञ्चांसकूटक्रथन पटुरटद्धोरधारः
कुठारः ॥ १०॥ ॥

सवैया॥ भृगनंदन रामको भामनि पेख स
वाइ जबार इकी सब पाप नृप स्रोण
तनीर समास वसी बहु पंक मई नट
नी भटनाय नृपनारि कुमार सुहृदउनलो
ककुणा विद्धधार कुठार चलाय ॥ १०॥

भाषाटी॰॥ जिस परसरामने बहुत डिगा जो
रुधिर उस रुधिरकी जो नदीहै और न
दीका उसका जो जल तिस रुधिररूपी ज
लका जो प्रवाह तिसविषे परसराम स्ना
न करताभया क्या करके इकीसवारी
पृथ्वीको निक्षत्रे करके कैसाथा रुधिर
रूपी जलका प्रवाह राजीयोंकी जो बहु

त मंजरहै तथा मांस अरु ललाटोंकी मिं
जू इनका जो पंक क्या विकड है पर्वतट
विषे जिसके अ‍ौर जिस परसरामका उ
टार क्या उहाड सो इही वालहद आदक
र लोंकोंके मारणविषे निर्दयाहै फेरभी प्र
सिद्धहै पुनः कैसाहै उदार राजीयोंके
जो हैन उचे मोडे सोई भए सिषरकूट
तिनके दलने विषे शुह्रकरणेवाली भ
यंकरहै धारा जिसकी ॥ १० ॥
मूल ॥ सोपि स्ववीर्याद्दवनाद्धिभारं भू
मेः सम्रुत्थाप्यजलं नृपाणां प्रशांतको
प ज्वलनं स्तपोभिः श्रीमान्मुनिः शाम्यति
जामदग्न्यः ११ तथायमपि कृतकर्तव्यः सं
प्रतिपरमा ऋपशमनिष्टांप्राप्तः येनव १२
सवैया ॥ धरभार उतार उधार जलं नृपसा
ति भए तप माहि लगाए ॥ दोहा ॥ परसराम

प्र. चं.
भा. टी.
१५

जिम आहि पद हन कारय गुपाल ॥ पर
परमसांति निष्टा भजीर सभै वडो रसाल ॥

भाषाटी० ॥ फेर कैसाहै परसराम आपणे प
राक्रमसे पृथ्वीके भारकों उतार करके
राजोंके कुलहैन तिनोंकों हरकरके शां
तहोयाहै कूपरूपी अग्नी जिसकों तपों
करके फेरशांती रसकों प्रापतहोतभया
सोजमदग्नीका बेटा ॥ जैसे परसराम
पूर्वकालमें उग्रकर्म करकेभी शांतभाव
कोप्रापतभया तैसेही गोपालराजाभी पर
मशांती रसकोंप्राप्त होतभया ॥ १४ ॥

मूल ॥ विवेकेनैव निर्जित्य कर्णं मोहं नि
वार्जितं श्रीकीर्त्ति वर्म्म नृपते वोधस्यो
वोधयः कृतः ॥ १३

दोहा ॥ जीत विवेक सु मोहजौं वोध उ
दे जगकीन जीतकरण बलराज तिस

कीरतिवरमादीन ॥ ११ ॥

भाषाटी॰ ॥ जिसप्रकारकरके विवेकरूपी जो राजाहै तिस राजाने मोहकौ जीतकरके बोधका उदय करताभया तिसी प्रकार गोपाल राजानेभी बलवान कर्णराजा कों जीतकरके श्री कीर्तिवर्मा राजाका उदयकरदाभया ॥ १२ ॥

मूल ॥ अपि पापशीलस्य धर्मकयमस्मास्रजीवत्स्वामिनो महामोहस्य विवेक सकाशात्पराजय मुदाहरसि सूत्रधारः ससंभ्रमं विलोक्य अये अनंग पीवर ऊवहय पीडितांग मालिंगितः पुलकितेन भुजेन रत्याश्रीमान् जगंति मदयन् नयनाभिरामः कामोयमेति मदघूर्णित नेत्रपद्मः मद्वचनाच्चाय मुपजात क्रोध इवोपलक्ष्यते तदपसर्पण मेवास्माक

प्र॰चं मितश्रेयः इतिनिष्क्रांतौ प्रस्तावना ततः
भाटी॰ प्रविशति यथा निदिष्टः कामो रतिश्च
१९ कामः सक्रोधं श्रापायेति पठित्वा नन्वरे
16
भरताधमाः प्रभवति मनसि विवेको वि
दुषा मपि शास्त्र संभव स्तावत् निपतंति
दृष्टि विशिखायाव न्नेंदीवराक्षीणां १४
अथनेपथ्यकलकला सवैया॥ वीच किनात
किवात सुनी सु मनोज वलीयह कानन
माही कोप भरे सुभ पद् कही नट नीच
सु वोलत यो सुषमाही जीवतही हमवे
जगमै तुम मोहकी हारकरै जनमाही
पापसिलूष विवेकहूको जडमूलउषार
दयो भवमाही सुनिवात सिलूष डरयो
मनमै पुनि संभ्रम हेर सुनारि बुलायो
रत कंठ भुजा धन पीन ऊचा लह संगरो
मंच अनंग सहायो नगमादन सो भय

पारवनी मद झूमत नैन चले अलसायो
अब भागचले इह ठौर हते ब्रनिकै मम।
वाक मनो भ्रनसायो इमभाषतजी रंगथ
ल्रतिनो तव आइ मनोज प्रवेस कियो
अलिकै करनील कपोल लटी रतिकंठवि
षे हसिहाय्यटयो हगकंज चघार उठाइ भु
जा रति नाथ महा उर क्रोध छ्येयो भरता
थमपाप सजीवत मेरति नाहि विवेक स्र
कहाभयो तव लोमन माहि विवेक रहे
सम आगमत उपजयो इह जोई जवलो
नहि नील सरोरहसे हगनारि कठाष लगे
सरकोई ॥ ॥१४॥
भाषाटी· उस नटप्रती और नट कहतेहैं हे
नट नीच हमारेहोंदे साऊ जो स्वामीहै म
हामोह उसकी तूं विवेकराजेसे पराजय
कहताहै ऐसा कौनहै जगत मे जो साऊ

प्र॰चं॰ भा॰टी॰ १७

17

स्वामीकों जीतेगा नटकहताहै भ्रमकर
के दृष्टीकरके देख्या क्या प्रत्यक्ष कामदे
व प्रानप्राप्तभया कैसाहै कामदेव रती
जोहै कामदेव इस्त्री उसने भुजांकरके
आलिंगनकीयांहै कैसे हुग भुजहैन रो
मांचतहैन ऊंचे और मोटे जोहैन ऊंचदी
तिनांकरके पीडतकरेहैं अंग जिसके
छातीमो लगायाहै कामदेव जिसने का
मदेव कैसाहै जगतकों मदकरदेताहै
अरु नेत्रोंकोंवी आनंदमय करदेताहै
पुनः कैसाहै मदकर्के घूर्णहैन नेत्रक
मल जिसके पहला नटकहताहै मेरे
वचनसे इनोंको क्रोध प्राप्तहूवाहै अब इ
स्थानते और जगाजाना योग्यहै उसी स
मे नट अरु नटनी तिस अस्थानते जानेम
ये रती सहित फेरकामदेव रंगस्थानवि

है उसी समे आनप्राप्तभया अवकामदे
व क्रोधकरके कामदेव नटोंप्रति कहत
भया हे नटः नीचः इतने पर्यंत वडे जो
पंडितहैन तिनाकों विवेक रहताहै म
नविषे कैसाहै विवेक सास्त्रकरके उत्प
नीहै जिसकी यावत्पर्यंत कमलदी न्या
ई हैन नेत्र जिनके ऐसीयां जो हैन इस्त्री
यां तिनके नेत्र रूपी जोवान जिसको न
लगेहैन॥१४॥
मूल॥ रम्यं हर्म्यतलं नवाः सुनयनाः गुं
ज द्विरेफा लताः प्रोन्मीलन्नवमल्लिका
सुरभयोः वाताः सचंद्राः क्षपाः यद्येतानि
जयंतहंत परितः शास्त्राण्यमोघानिमेतत्क्षेः
कीदृगसौ विवेक विभवः कीदृक प्रबो
धोदयः॥१५॥
सवैया॥ रूपजीत तजे नवषंड मही वरना

प्र॰चं॰
भा॰टी॰
१८

18

बिभजे करजोर सुदोई धोल जहाग्रहउच
बने गज दंतनमंच सुसेज सवारी मधि
बिराजत चंदकला सम बारिज नैन सुदु
तन नारी भूषन चंपकहार बने तनचं
दन कुंकुम गंध उदारी चंद्र उदेत महरि
भए निसिमाहि छिरी सुमनोजकीवारी
इह आयुध मोहजयंत सदा इनधारमले
जग आहि बलीको इनहोवत कौन बिवे
क अहै पुनि बोध उदै नहि होत कलीको
जन औरनकी जगकौनकथा धृत संयम
जोजन जाइ गलीको दृग कंज फिराइ पि
येज्यवती चित धौंतर फैंजन मीन थलीको
भाषाटी॰ कामदेव कहताहै हे नटा और सु
णो जब तांई मेरे जो शास्त्र हैन अमोघ जग
तविषे वर्ततेहैं तबतक विवेकका जो
ऐश्वर्यहै सो कहांनही होताहै और प्रबो॰

धका जो उठदे है सोवी नहीहोता कौन है
न मेरे अमोघ मस्त्र सुंदर जो महल है न औ
र सुंदर वर है न छोटी अवस्थाकी इस्त्रीयां
है न जिनोंके चंचल है नेत्र और लता जो है
न सुंदर भ्रमर जिनाविषे गुंजारशब्द करदे है
और पवन जो है सो केसा है पवन फूलीयां हो
यां जो मालतीयां अरु चंबेलीयां नवीनवा
ले तिनोंकरके सुगंधहै न और चंद्रमें कर
के जुगन जो रातां हैं इह सब मेरे अमोघ
मस्त्र है न ॥ १५ ॥
मूल रतिः अज्जउज्ज गरुडो हुव्व महामो
हा स्सपडि वरवा विवे डलितकामि ॥०
रतिरुवाच ॥ दोहा ॥ अरयपुत्र सुअतिवली भा
षे मुनी अनीक महामोह भूपालको
या जग सत्रु विवेक ॥ ॥ ॥०
भाषार्थ ॥ रती कामदेव प्रती कहती है हे

स्वामी महामोहका विवेक बडा शत्रुहै इ
स मेरे मनमे शल वर्ततीहै ॥॰

मूल॥कामः प्रियेऽत्र स्त्रीवेदं स्त्री स्वभाव
स्त्वलं विवेकाद्भय मुत्सृज्य प्रियेपश्य
अपि यदि विशिखाः शरासनं वा कुसुम
मयं ससुरासुरं तथापि ममजगदखिलं
वरोरुनाज्ञामिदमति लंघ्यधृतिं मुहूर्तमे
ति तथाहि ॥ ॥१९॥

कामोवाच॥ सवैया॥ तब नारि स्वभावतें संक
भई अत पषनते हमनाहि डरे पिय यदपि
फूल सरासन औ सरमे कर भीतर आय
धरे जन तदपि आइ समोहि उलंघि मुहू
रत धीरज नाहि धरे सुरवाम उतू सुर
देत सबै जगभीतरहै बस मोहकरे ॥

भाषाटी॰ कामरतीप्रति कहताहै हे प्रिये
स्त्री स्वभावकरके विवेकसे भैमतकर

मैं तेरेताई आपणा प्रभाव पराक्रम कहताहै
हे प्रिये मेरी आज्ञाको लंघकरके संपूर्ण जो
जगतहै सुरजो देवताहैंन असुर जो हैंन षि
नमात्रभी नही लंघसकते हे प्यारी पुष्पोंके
जो मेरे बाणहैन अरु पुष्पोंका जो मेरा धन
ष मेरे हाथमेहै सो तिस धनषबानथो सुरा
सुर नही लंघसकते तथाहि कामदेव रती
प्रति होर पराक्रम दिषावताहै ॥ १८ ॥
दोहा ॥ जानत कामन नारि कछु सिंडीरिष
बनमाहि ॥ मो सरचीत भ्रमायो जगयो भूप
गृह माहि ॥ तांकीकथा संक्षेपते कहो सुनो
मनलाई ॥ वाम डहु संशा मिटे तोहि निषल
डरजाई ॥ ॥ चौपई ॥ लोम पाद इक भूपति
भारा ॥ जाको जस सभ भोन मझारा ॥ दसरा
थको वह मीत करीजे ॥ जाको हर अमंगल
कीजे ॥ १ ॥ ताको देस सवकु विस्थारा ॥ बरषा

प्र॰खं॰ होइ न ताहि मझारा ॥ ताकी प्रजा दुषी सभ
भाटी॰ ऐसी ॥ तपत अलप जल मछली जैसी ॥ ३ ॥
२॰ विप्रजोतिकी भूप बुलाए ॥ वरषा होइ स
20 कौन उपाए ॥ विप्रन बहु विध कीन विचा
र ॥ भूपतिको यह भांति उचार ॥ ४ ॥ सिंङ्गी
रिष वनभीतर सोई ॥ आइ इहां तव वरषा
होई ॥ वहु रूपेषे महामुनि गयानी ॥ आ
वे किह प्रकार रजधानी ॥ ५ ॥ लेन तताको
कोई जाए ॥ आप अगनिते सभ डर पाए ॥ त
व तिनवार वधू सदुलाई ॥ दान मान कर
पास विठाई ॥ ६ ॥ सिंङ्गीरिषवन जाहि अ
गारा ॥ ताको ल्यावो नगर मझारा ॥ सुनक
र वार वधू अकुलानी ॥ आप अगनिते अ
ति डर पानी ॥ ७ ॥ एक भूपतिकी आइ सुजो
ई ॥ मेटि नसकै कदाचित सोई ॥ तव तिन
एक उपाइ सुचीनो ॥ नौका वांध सथंडल

कीनो तामे रंभा कुंज जराय॥ लादू करण

हर फल लाय॥ कहूं जलवी कहूं अफ्फा

कहू कहूंदी रची अनूपा॥ ५॥ दोहा॥ क

नमवेलनतहि है रची फूल पात बड़ माई॥

लाचीदाणकी नरां रची खदाष बणाई॥ ६

चौपई॥ याविध धार अडंर वाला॥ गई तहां

जहि विपन विसाला॥ मुनि आश्रमते किं

चितहरा॥ नौका थापी नीर उहरा॥ ११॥

षोडशवरषनकी वड़बाला॥ गई तहां

जहि मुनि विसाला॥ लादूकरण हर फल

लेते॥ पात पलासधरे समतेते॥ १२॥ सिंही

रिष तहि नैन मिलाय॥ ध्यान निष मुष वे

द अलाप॥ पग नूपर धुनि सुनी सजब

ही॥ नैन उघारे मुनवर तबही॥ १३ मुनव

र जान वंधनाधारी॥ अरव पाद हित

ल्यायो वारी॥ गनिका नव मुष पड़ वषाने॥

हम रिषवर नहि छुहे सुग्याने ॥ १४ ॥ यापे
नीकन चरन पषारे ॥ हमरे तपवन फ
ल सुषडारे ॥ करण हर अरु लाडु षाप ॥
सिंडी रिषके मनि विगताप ॥ षाइ जले
बी लाचीदाने ॥ अहो स्वाद सुषा वषाने ॥
मिलकर गनिका गाइन करे ॥ सुनवर
जाने वेद उचरे ॥ १५ ॥ तुमरे सुष सरोज
मकरंदा ॥ वेद धुनी उर जने अनंदा ॥ प
दक्रम जटा अष्टरव धारी ॥ आप पढाई
जो सुषचारी ॥ १६ ॥ याविध निरषे ता सुष
ओरा जैं निसचिते सुचंद चकोरा ॥ अहो
हमारे भाग सुलनप ॥ यह सुन ब्रह्मलोक
ते अई ॥ १७ ॥ याके बलकल ऐसे सोहें ॥
नउन पुंज जडमे मन मोहें ॥ वनफल
मिष्टमधुर धुनिवेदा ॥ मनको निषिल
मिटावे षेदा ॥ १८ ॥ सुंदर सीस जटा अधिका

री॥ मनो विरंच सहाय सवारी॥ तपको ते
ज भाल मैं दमकै॥ किरण सहित मनो स
सि चमकै॥ २०॥ हेमजनेऊ याके अंगा॥ स्व
र्ग हुलसो भे सरबंगा॥ अहो पिताफल वन
गई॥ जाके दरसन नाहि न भए॥ २१॥ रिष आ
गमन औसरको जान॥ वारवधू नहि कीऊ
ध्यान॥ वहि आई नौकाके पाही॥ उनवर
आये आश्रममाही॥ २२॥ सिंङीरिष सु आ
इ निहारा॥ रंचिककरैन वेद उचारा॥ अग
नि होत्रकी अगनि सु जोई॥ नाहि जगाई
तिसको सोई॥ २३॥ वार वधू जिह पंथ पधा
री॥ दृष्टतहां सिंङीरिष धारी॥ सुकह्यो पिता
कहा मति गई॥ पठ न वेद नही हूतकई॥ २४॥
सिंङीरिष तब बैन उचारे॥ पिताइनते कछु
भाग हमारे॥ ब्रह्मलोकते मुनिवर अए॥
नाहि सम सर रुष निर्मए॥ २५॥ ताको रूप

प्र॰चं॰
भा॰टी॰
२२

22

निहार यो जोई॥ अबलो चीत चिनारो सोई॥
कोमल बल कल तन पैसोहै॥ दोदो सिंग
उरन मन मोहै॥२६॥ सीस जटा अति कोम
लसामा॥ बाल तिलक हाटक छिगदामा
नाक करन मैछिद्र सुकीने॥ स्वर्गफूल ता
मै गुहदीने॥२७ नैन सरोज दया रस भीने॥
सिंच सुधा असकरे सुषीने॥ मेरी ओर कृ
पाकर निरषे॥ प्रेम ओर मानो मन करषे
याविध वेद कीन उचारा॥ सुन कर हरयो
सुचीत हमारा॥ ऐसी सिंङीरिष हुअलायो
पिता लषयो अबल भ्रमायो॥२८॥ सिंङीरिष
बऊभांत उराए॥ हे सुत रिष नहि राषस
आए॥ ताके गीत सुनि नहि काना॥ नातर
तेरे हर है प्राना॥२९॥ याविधि सुन वर बऊ
तडराए॥ एक सिंङी बऊ हुए धाए॥ सुन व
र भए प्रात अनि काला॥ गयो जवै बऊ वि॰

मुनि विसाला॥ ३२॥ तब मुनि गनिका अंड
सुआयो॥ सिंडीरिष पिष मौल मुकायो॥
तम अपने तप विपन मंझारी॥ मोहि लि
चाला करणा धारी॥ ३३॥ तब संग चलयो
मुनीवर अैसे॥ प्रानन संग जीव जग जैसे॥
नैन कटाछ सुछ वहि कपोला॥ निरष भ
यो रिषको मन लोला॥ ३४॥ ताकी मंद ग
ती मनकारा॥ सुनि सुनि रिषमन भजे
विकारा॥ नौका भीतर बैठे जबही॥ वङु
ते लोमपाद पुरतबही॥ ३५॥ पुन वर
नगर जवै पग धारा॥ वरषा भई सुत
हा अपारा॥ या विध तपको जाहि प्रभाऊ॥
अबला धीनि भयो मुनि राऊ॥ ३६॥ सांता
भूपति डुहिता जोई॥ ताहि वरी मुर भीत
र सोई॥ जाकी कथा वङुत विस्तारा॥
कहा लगे ममकवे उचारा॥ ३७॥ दोहा॥

प्र.चं. भा.टी. २३ 23

मानकी गनती कहां देवन मैं प्रधान ॥ त्या
गे धरम छिण एक मै रंच लगावे वान ॥
मूल ॥ अहल्याया जारः सुरपति रभूदात्म
तनयां प्रजानाथो यासीदभजत गुरो
रिंदुरबलां इति प्रायः को वा न पद मप
थे कार्यतमया श्रमो मद्वाणानां क इव
भुवनोन्माद विधिषु ॥ १७ ॥
सवैया ॥ गौतम नार सुनार सुरे सुरजा
इ भयो सर मोर चलायो ॥ वेद पढे चत
रानन जो रतिके हितसो उहिता प्रतधा
यो ॥ कौन अपंथन पाउ धरे जगमो स
र जांहि को चीत भ्रमायो ॥ इंदु भजी गुर
की अबला उपमो सुत ताहिके वीच
उपायो ॥ दोहा ॥ याविधके अबला हने त
पी बडे बलवान ॥ गुलाब सिंघ वैरागको
करे मूढ अभिमान ॥ ॥ १७ ॥

भाषाटी॰॥ हे रती मेरे जो वाण है न सो जगत
को उन्माद क्या उन्मत्त कर दे है न मेरे वा
णोंका जो श्रम है सो व्रण मेरे वाणोंके
प्रभाव करके इंद्र जो है सहस्त्रनयन सो
अहल्याके साथ रमता भया और इंदु जो
चंद्रमा है सो गुरु जो बृहस्पती तांकी स्त्री
संग रमता भया अरु विधाता जो है ब्रह्मा
सो आपणी कन्याके साथ रमता भया
कौन पुरुष है जो ऊमार्ग विषे मैने नही
लगाया है ॥ १७ ॥ ॥

मूल ॥ रतिः अज्ञउन्मर वंणोदं तथापि
महासहा असंपन्ना संकिदयो अरादी॰
यदो स्मज मणि अमप्य महा अमत्ता॰
महावला स्मणी अंति ॥

रतीउवाच ॥ सवैया ॥ सुत, आरय, यदपि, तूं, अ
जमे, जग, जीननको, वश, आप, धरे ॥ जगही

हि सहाइक जाहि वली धुनिता अरिते ब
लवंत डरे ॥ स्वनीथे यम आदिक आठ
वजीर विवेक सहाइक वेद ररे ॥ बङ्जं
ग डपाइकरे स्वनियो इहते डरमे हमनी
त डरे ॥ १४॥॥

भाषाटी॰॥ रती कहतीहै हे काम शत्रू जो
बडीसहाइतावाले होवन डनोते संका
क्या भे करणा योगपहै जिस कारणाते
जम नियम इत्यादिक इस विवेकके
मंत्री वडेही बलवाले सुनीदेहैन ॥

मूल॥ कामः श्रियेयानेतात्राहो विवेक
स्य बलवतो यमादीन मात्या व्यपूयसि
भेदं प्राप्स्यंति दंभादिभिः संधिविनाशं
प्राप्स्यंति एते नियत मस्माभि रभियुक्त
मात्रा श्रागेव विघटिष्यंति नयाहि ॥ १५॥

कामोवाच॥सवैया॥ भामनि राइ विवेकहके

यम आदिक आठ अमात सुनाय॥ ते रं
गमही पहिले हमने सब ठौर ठौरहिते
सदबाय॥ कौन अहे जग भीतरि सो
हम जीवत ताहिको नाम अलाप॥
वाम उहू तजि चिंत सदा तुमकों मन
मैं अदिति डरपाय॥१८॥
भाषाटी०॥ हे प्रिये यह जो हैन यम निया
मादिक विवेक राजाके इनको जो दे
षतेहैं सो दंभादिकोंके साथ विनाश
को प्राप्तहोवनगे प्रीक्षही सो अब
कामदेव रती प्रति ज्ञगती करदिषाव
ताहै॥ १८॥
मूल॥ अहिंसा कैव कोपस्य ब्रह्मचर्या दयो
मम लोभस्य पुरतः केमी मन्या लेया
परिग्रहाः॥१९॥
दोहा॥ कोप अगारी रहे जो कौन अहिंसा

प्र॰ वे
भा॰ टी॰
४५

25

नारि ॥ ब्रह्मचरज को मे रहे षिनमे उ
रे मारि ॥ लोभ जवे करमे धरे चंद्रहा
स बलधार ॥ सत असते यम प्रग्रह भा
मनि रुप निहार ॥ १९ ॥
भाषाटी॰ ॥ क्या जगती क्या कोप होवेगा
तहां दया न रहेगी अरु जहां मे होवां
गा तहां ब्रह्मचर्यादिक कहांहै अरु ज
हां लोभहोइ तहां सत्य कहना अरु
चोरी रहित रहना संचैनही करणा र
ह वारना कहां ॥ १९ ॥
मूल ॥ यम नियमा सन प्राणायाम प्र
त्याहार ध्यान धारणा समाधयस्तु नि
र्विकारेक चित्त साध्यत्वा दीघन्कार समु
न्मीलनायव अपिच स्त्रियएवा मीषां
हन्त्याः तेनेते स्मरोवरा एव वेनेते यतः ॥ २० ॥
सवैया ॥ यम नेम स्वासन प्राणायमं प्रतिहा

र वली जगध्यान लगाय॥ धारणा श्रोर
समाधि लगनो चित्तहोइ इकागर तो उ
पजाय॥ चित्त भीतर पंच विकार करो
इनको जडमूल सदेउ उठाय॥ इन जी
तन हेत रची अबला यम नेम तबै हम
रे बस आय॥ २०॥

भाषाटी॰॥ जम अरु नियम आसन अनः
प्राणायाम अरु प्रत्याहार ध्यान अरु
धारणा अरु समाधी इह जोहैं जिनका
निर्विकारहै चित्त तिनको साधने योग्य
है मैं कैसाहों चित्तको षिनमात्रमो वि
नासकरनवालाहो इह जो यम निय
मादिकहैन इनके जीतनेवास्ते श्रोर
उपाय मै तेरी प्रती कहताहो॥ २०॥

मूल॥ संत विलोकन भाषण विलास
परिहासकेलि परिरंभः स्मरण मपि

कामिनीना मल मिह मनसो विकाराय
सवैया॥ हरि विलोकन नारिनको नाहि
सभाषन हूं न रहे॥ हास विलासनकेल
अलि गननाहिइ कंत सबाति करे॥
जन संयमवंत कहावत जे तजि सौध
तपोवन जाइ रहे॥ चित माहि विचार
जो जुवती छिणमैं मणना विकार गहे॥
भाषाटी.॥ इनांको इस्त्रीयांही विनासकरै
गे फेर साडेही अधीन होइकरके वर्तेंगे
इस्त्रीयांका जो देखना है अरु उनांसाथ
वाता करणीयां अरु विलासहासाकर
णा क्रीडा क्रिया करणी पुनः आलिंग
न करणा यह सब व्यवहार भिन्नहीर
है इनाका स्मरण जो करणा सोई म
नके विकार करणेकौ समर्थहै २९.
मूल विशेषतस्तेते मदमात्सर्यदंभादिभि

रस्मत्स्वामिवल्लभे रभिग्रज्यमाना नरप
ति मधर्म मेवा श्रयिष्यंति॥
सवैया॥ मोह प्रमात सुमात सरमद दंभ
तथा पुनिलोभ प्रलाप॥ फार यमादि व
जीर लए बहि कान इकंत सुमंत दिढा
प॥ मोह महीप अधरम वजीर यमादि
क गोपलगे तिनपाप॥ जो यम नेम क
है जगमै हरिके हितनाहि सुलोक दिखा
प॥॥ ॥२२॥
भाषाटी॰॥ हेरती विसेष करके यह जो
है जमनियमादिक सो साडे स्वामीने श्रा
ज्ञादई होई साडे स्वामीका जो मंत्री जोहै
अधर्म तिसको आश्रे करैंगे क्या सेवेंगे॥
मूल॥ रतिः स्हदं मय तस्याणं सम दम
विवेक अपङ्क दीनेंच एके चडपति थ्याएं
ति॥

प्र॰चं॰
भा॰टी॰
२३

27

रतिउवाच॥ दोहा॥ शम दम और विवेक ले काम क्रोध मदमान॥ मै हु नयो निज कानमै एको जन्मस्थान॥ २२॥
भाषाटी॰ हे काम इह बात मैनी सुनीहै शम दम विवेकथे लेकरके और तसी नोहा कामादिक तमारा एकही उत्पत्तीस्थानहै॥॥
मूल॥ कामः भोः प्रिये किमुच्यते एक मुत्पत्तिस्थान मिति तज्जनक एवास्माकं न भिन्नः तथाहि २२
कामोवाच॥ सवैया॥ उतपत्तिको थान सु एक अहे मनसो जग भीतर तान सुनायो हमहे पुनि भ्रात विमात सुतो वह गोप प्रकार वेने अबगायो॥
भाषाटी॰॥ कामदेव रती प्रति कहेहै हे प्रिये क्या कहतीहै हमारा एकही उत्पत्तीस्था

नहै सोऊ जनक जो पिताहै सो दोनो
का भिन्ननहीहै २२

मूल॥ संभूतः प्रथम मिहेस्वरस्य संगा
त् मायायां मनइति विश्रुत स्तनूजः
त्रैलोक्य सकल मिदं विसृज्यभूयस्त
नाथो जनित मिदं जल द्वयेनः ॥२३॥

सवैया॥ सुन पूरब ईस्वर संगकियो नि
जनारि बषानत ताहि सुमाया॥ जिन
ते उतपति भई हमरी मन नाम वही
सुततासि उपाया॥ मन तीनहु लोक
सु आप रचे पुनि ताहि विषे जलदो
इ उपाई॥ मन एक प्रहमकहे पति
नी सनि हम तथा जग हमरा गाई २३

भाषाटी॥ सो कहिताहै कामदेव प्रथम
ईस्वरके माया विषे मनजोहै प्रसिद्ध
पुत्र सो उत्पत होतभया सो कैसाहै म

न प जोहै सारी विश्व प्रपंचहै तिसको
रचकरके फेर तिस मनने साडे जो दो
ऊलहैन सो रचतेभये २३

मूल॥ तस्य च प्रवृत्ति निवृत्ती द्वे धर्मप
त्न्यौ तयोः प्रवृत्त्यांनः महामोह प्रधान
मेकऊले निवृत्त्यां च द्वितीयं विवेक
प्रधानमिति ॥

सवैया॥ मोह प्रधान प्रवृत्तरची ऊल
तीनहुलोकन माहि फिलाई॥ ह्य विवे
क प्रधान निवृत्त जनी ऊल सो विर
ली जगमाहि चलाई॥१॥

भाषाटी॰॥ मनकीयां दो इस्त्रीयांहैन प
ककानाम प्रवृत्तीहै अरु एककानाम
निवृत्तीहै प्रवृत्ती विषे साडा ऊलउत्प
नभया महामोह आदिकरके पुनः नि
वृत्ती विषे दूसरा जो ऊलहै विवेक आ
दिकरके सो उत्पतभया॥

मूल॥ रतिः अङ्गजत्व॰ जदिपवंता॰ कि
णिमित्तं त्वकमाणं सो अपराणांपि॰ परे
प्परं पश्चादिसेवैरं ॥२४॥
रतिउवाच॥सवैया॥ हत आरय जो इह भा
ति अहे जग भीतरि एक ह तात तमा
रा॥ किह कारण वैर भयो तमरो ध्रुज
मीन करो मम पञ्ज उचारा॥ आननमै
इह भांति हवै रुन मोह हनयो यह
कान मझारा॥ कवि सिवगुलाब कहै
रति नाहि हनो रति वैरक्रु कारणभारा॥ ॥२५॥
भाषाटी॰॥ रती कहतभई हे पति तुसी जो
हो भाई आपसमैं तुसाडा परस्पर वैर अ
वोर किस कारणतेहै ॥ ॥२४॥
मूल॥ कामः प्रिये एकामिष प्रभव मे
व सहोदराणां जंभे तथा जगति वैर मि
ति प्रसिद्धं पृथ्वी निमित्त मभव त्कुरुपांड

प्र० वं०
भा० टी०
२९

वानो नीत्रस्तथाहि भुवन त्तयहृहिरोधः

कामोवाच॥ सवैया जो इक आमिषते नियजे
तिन वैर प्रसिध करयो जगमाही॥ भूमि
नि मित लरे कुरु पांडव भूप षपे जिन
के रन माही॥ आवत षंडकी नूतन नारि
भई विधवा जिन संगर माही॥ होवत
ही यह बात भई कछु नाहि भई सुनई
भवमाही॥ २५॥

भाषाटी॥ कामकहताहै। हे प्रिय अवहा
र जगतविषे प्रसिद्धहै सो क्या सोदर
जोहैसके भाई तिनोका येकमाससेभी
उत्पनहोकरभी वैरहोताहै जैसे हस्ती
के निमित्त कौरवोंका तथा पांडवोंका
महावैर जगतका त्तयकरणेवाला होत
भया॥ २५॥॥

मूल॥ सर्वं सेवे नजरा दस्म न्यित्रोपार्जितं

तत्त्वास्माभिर्ज्ञातवल्लभ तया सर्वमेवाक्रां
ते तेषां तु विरलः प्रचारः तैनैते पापाः
सांप्रतं पितर मस्मांस्त्वोन्मूलयितुमुद्यताः
सवैया॥ हमरे मन तात सु हरष परति तीं
तीनहु लोक सु आपवनाय॥ हमरैं प्रति
वल्लभ तात हुके रहते हम तीनहु लोक
दबाय॥ सम औदप और विवेक पिता ब
लहीन विषे वनवास पठाय॥ अबतै अ
घवंत उपाइ करे पित आनन मूल सु
देहि उठाय॥॥॥
भाषाटी०॥ और है रती यह जोहै संपूर्ण जग
त सो साउहू पिताने पैदाकीयाहै असी
जोहां पिताके अति प्रेहां असीही इह ज
गत दबायाहै अरु विवेक आदिक जो
है पापी सो अब साउ पितानूं तैसे अ
सानूं हुन करणेकों लगेहैं परंतु जिन्ह

का कई कई अस्थानहैं तिस हेतू करके ॥
मूल॥ सताघा वर अज्जउत्त किंपदं यावं
विदेश मेमकेणतेहि आरद्धं अहवा अ
प्पिय उवाडोका विपस्स मंतिदो
रतिउवाच सवैया॥ हत आरय कैंा पुनिपाय
इसो मति हीनकरे वहुसंग तुमारे उरहै
ष बधयो तिनके अतिही भाति चहे ज
गपाप करावे अथवा इह कैान उपाइ
सेना धुज मीन तुमे मनमाहि विचारे
इह भाति सुने रति वाक जबै तब बोल
उठे रति प्राण प्यारे ॥
भाषाटी रती कहतीहै हे स्वामी हरहुवा
मो विरोध सो किसवास्ते उनोने आरं
भकराहै इस विधि हरकरनेमे कोई
उपाइहै किनही ॥
मूल कामः अत्यत्र किंचिन्निशंठं वीत्ते ॥

कामोवाच ॥ दोहा ॥ भामनि गूढ सवीज

इकहै सुनि कह्यो न जाइ ॥

भाषाटी॰ कामकहता भया इस विषे ग

मवीज एक कारणहै ॥१॥

मूल ॥ रतिः अज्ञउत्ता किंणउघाडी यदि ॥

रतिउवाच ॥ आवरयसत क्यों नाकहे मो

को तू प्रगटाइ ॥

भाषाटी॰ ॥ रती कहतीहै हे स्वामी सो अ

कठकरके कहो क्यों नही प्रगटकर

कहते सो कैसाहै वीजमंत्र उत्तोंका

मूल ॥ कामः स्त्रीस्वभावा भवती भीरुरि

ति ननदारुणं या प्रीयसा सुदा ह्रियते

कामोवाच ॥ दोहा रति तूं नारि स्वभावते

भीरु अति डरपाइ ॥ वै पापी दारुण क

र्मतोपै कह्यो नजाइ ॥१॥

भाषाटी॰ ॥ कामदेव कहैहै स्त्रीस्वभावते

प्र.चं. डरतीहै इसी कारणते मैं उनपापीयें
भा.टी. की क्रूरताई नही करताहूं रती फे
३१ मे मानकरतीहै ॥
31
मूल॥ रतिः सभयं प्रजउमकीविसंतं
रतिउवाच॥ दोहा॥ आरयपुत्र सु कौन व
कै सोकर्म कहाइ॥ वितुभाषे थल मी
न सो मेरो चित तरफाइ॥ ॥
भाषाटी.॥ हे स्वामी क्या क्रूरताईहै सोक
मूल॥ कामः प्रियेन भवेतव्यं हताश्च
नामाश्च मात्र मनन अस्ति विवेको वि
वदंती अश्चास्माकं कुले कालरात्रि क
ल्याविद्या नामराक्षसी समुत्पत्स्यत इ
ति श्रुमम्॥
कामोवाच॥ सवैया॥ भामनि नाहि डरो उरमें
हत आत विवेक सु असटराई याजल
मे निसकाल समा विद या जिह नाम सु

राष सिकाई ॥ लेवहिगी अवतारु मही
उरु भीतरि नाहि दया कछु राई ॥ होव
न मत भविष कथा जनकी सुतया जग
ईह भलाई ॥
भाषाटी० ॥ कामकहनाहै हे प्रिये तू भे म
तकर हतहोईहै आसा जिनकी तिन
कों आसा मिथ्याही वनी रहतीहै लोकों
का वारता मे निश्चानही करणी इस सा
डे जलविषे कालरात्री क्या कल्पांतरात्री
उस समान विघ्नानाम राक्षसी होयेगी
इह लोकोंका कथनहै ॥
मूल ॥ रतिः सभयं हृद्यी हदि अहं असा
एं जले राक्षसीति हे वदिमेहियत्रे
रतिउवाच ॥ दोहा ॥ हाधिग हमरे जलविषे
पिसताासी महान ॥ उपजेगी उरकंप
है चल दल पत्र समान ॥

प्र॰ चं॰
भा॰टी॰
३२

32

भाषाटी॰॥ रती भै करके कहितीहै बडाधि॰
ककारहै जो माडे कुलविषे राक्षसी पैदा
होइगी इसकारणते मेरा हृदा कंपताहै
मूल॥ प्रियेन भेतव्यं किंवदंति मात्र मेतत्
कामोवाच॥ भामनि क्यों डरकंपहै लोक
कहे यह बात॥ जनम राक्षसी होइगो
निश्चै नहि विषयान॥॥
भाषाटी॰॥ कामकहताभया हे प्रिये डरना
नही इह लोकोंका कथनमात्रहीहै
मूल॥ रतिः अधना परस्वसीय किंकादत्थं
रतिउवाच नाथ वषानो पढ़ तम जो उप
जे पुनि सोइ॥ या जगमै अवतार धर का
ज करैगी कोइ॥
भाषाटी॰॥ रती हरषकरके कहतीहै सो
राक्षसीक्या करैगी इह मेरा प्रश्नहै॥
मूल॥ कामः प्रिये अस्ति तत्र प्राज्यापत्या
सरस्वती॥ ३९॥

कामोवाच॥ सवैया॥ भामनि यो स्रुनी जगमैं
इह्रवाक ग्रहे ह्रद ब्रह्म ग्रलाया॥
भाषाटी॰ काम कहता है हे प्रिये इस बात
विषे ब्रह्माकी वाणी प्रमाण है तथा
श्रुतीवी है श्रवणकर प्रसंगोह्यये पुरु
ष इतिश्रुतेः॥ २६
मूल॥ पुंसः संग समुत्थितस्य गृहिणी
मायेति तेनापिसा स्त्रष्टांगेरहि मनः प्र
सूय तनये लोकान सूत क्रमात् त
स्मादेव जनिष्यते पुन रसौ वियेति क
न्या```या तातस्तेच सहोदराश्च जना
नी सर्वं च भव्यं जलम्॥ २७
सवैया॥ पुंस प्रसंगकहे जिह्नका तिह ना
रि ग्रहे जग भीतरमाया नाहि कछुइह
तिह तिह संग कभी मन वल्लभ ताहि
विषे सुतजाया ता उपरंत स्त्रेनो गज॥

प्र.च.
भा.टी.
३२

33

गामनि नाथ यहै पुनि लोक बनाया
दोहा॥ कन्या तोते होइगी विद्या नाम कहाइ तात मात पुनि भ्रात कुल लप सगल बढाइ

मूल॥ रति सत्रासा त्कंपं प्रजडन परि-
हि २ इति भर्तार मालिंगति ॥

कविवाच॥ त्रासकंप रति को भयो बोली अतिभयग्राहि॥ भरताके गलसो मिली आरय रहत परि पाहि॥

भाषाटी॥ रती कहती है हे स्वामी मेरी रख्याकर मेरी तू रख्याकर ऐसे कहिकरके भर्ताको अलिंगन करतभई॥

मूल॥ कामः स्पर्शसुख मभिनीय स्वगते २८ स्फुर द्रोमाद स्तरल नर-
तारा कुलदृशो भयात्कंपो ह्रंग स्त

नखुग भरा संग सुभगा: अधीराक्ष्या
ग्रंज न्मणि वलय दोर्वल्लि रचित:
परीरंभो मोदं जनयतिच संमोहय
तिच ॥२६॥॥
सवैया ॥ रति संगमको सुष आहि जो
ई सुष स्वागतिके पुनि काम दिषाई
तनमाहि मनो जरु मंच भए युगता
रक नैननके तरलाई चनपीन प
योधर नारिमिले सिवके रिषतो मन
मे हरषाए मणि झंजत कंकण हा
थ विषे रतकंठ भुजा मनमे विगसा
ए॥२६ ॥
भाषाटी॥ काम सुपर्श सुषको देषकर
के अपने मनविषे चिंतन करताहै २०
चंचलहैन नेत्र जिसके ऐसी जो मेरी
भार्या उसका जो अलिंगन करणा

प्र. चं. भा टी. ३४ 34

सोवड़े आनंदकों उत्पन्न करताहै अरु मो
हकोंभी उत्पन्नकरताहै कैसीहै हमारी
भार्या चंचलहैन तारे जिस विषे उनो
तारियों करके आकुलहै दृष्टी जिस
की अरु अलिंगन कैसाहै रोमांचका
र जगतहै भै करके हूवा जोहै बडा
कंप जिनकों ऐसे जोहैन उचे कचटो
उनोंका जो भार उसके साथ जोहै सं
ग तिस संगने सुंदरहैं फेर कैसाहै
आह्लाद मान मणीकरके जगतजोहै
कंकन सो जिसदी भुजा विषेहै ति
स करके रचितहै ॥ ३५॥

मूल॥ प्रकाशे हर्ष परिषज्य प्रिये नभेत
ये र अस्या सजीवत्सकुतो वियोग्यमितिः

कामोवाच॥सवैया॥ तब संगम मोद जने
मनमें अर मोह महा उरमें उपजाए॥

इम भाष मनोज प्रमोद वडे रति हठ कंठ सोफेर लगाए॥ हम जीवत कौन बली जगमै शुनि आतम विद्या जो उपजाए॥ जगकौन विवेकको नाउ लए रति भीक कहो तुम कौ डराए॥

भाषाटी०॥ कामदेव हठ आलिंगन करके कहिताहै हे प्रिये तैंनही डरना साडे जीदेहोंदे विद्याकी उत्पत्ती कहांहै कदाचित न होइगी॥

मूल॥ रतिः अधः किंतापररवसीए उत्पत्तीतस्माएं पडिव खाए संभवा॥

रतिउवाच॥ दोहा॥ विद्या कंन्या राक्षसीना उत्पती जोइ॥ तुमरे वरीजे जगत किह विध वाहे सोइ॥॥

भाषाटी॥ रती कहतीहै तिस राक्षसीकी उत्पती जोहै सो तुमारेको क्या आकी

प्र॰ चं भा॰टी॰ ७५

35

लगतीहैं तुम कैसेहो विवेक आदिकोंके शत्रुहो

मूल॥ कामः वाढं सावलेप विवेकेनोप। निषद्ध देव्यां प्रबोधचंद्रेण भ्राता समेंज न यितव्या तत्र सर्व एते शम दम यमा दयः प्रतिपक्षाश्योगाः॥

कामोउवाच॥ सवैया॥ आह्व हिता स्रुति नारि विषे पल्लवा विवेक प्रिय उपजाए संग प्रबोधससी पुनि भ्रात सहेत स गतेति तु महेउपाए ताउतपति विषे पतनी स समादिक आप सहाइक आए ते उपचा सकरे तपसा धृत उद्दम नीरथ देव मनाए॥

भाषाटी॰॥ कामदेव कहैहै अवश्यकरके हम उस विद्याको जाननेहैं सो विद्या निश्चैकरके विवेकराजाने उपनिषत

रूपी जो रत्नी इस विषे प्रबोधचंद्र जो आ
ता उसके साथ उत्पत करनीहै तिस वि
द्याके षे इह जो हैन शम दम आदिक
सो उद्योगवाले होनगे इन्हांको उद्योग
होवेगा॥ ॥ ॥

मूल॥ रतिः अज्ज उत्तकहं पदे॰ अप्पिणो
विणासकारिणी विज्जाए उप्पतीतेहि
दुविणी देहिज्जदि ॥

रतिउवाच॥ आतमनास कि विदया तो
उतपतीजोइ काहि सराहे दुष्टमति से
का पापनि होइ ॥ ॥

भाषाटी॰॥ हे स्वामी इह जोहैन शमदमा
दिक षोटे इनोंके आपने नासके वास्ते
कैसे विद्याकी उत्पतीकी स्लाघाकरीहै

मूल॥ कामः जलत्तय प्रहृतानां पापा
नां पापकारिणाम् जनः प्रत्यवाय ग

प्र॰चं
भा॰टी॰
३८
36

णनापश्य ३॰ सहज मलिन वक्रभाव
भाजो भवतिभवः प्रभवात्मनाशहेतुः
जलधर पदवी मवाप्यधूमो ज्वलन वि
नाशं मत्र प्रयातिनाशं ३१
कामोवाच स रति जो कुलनास प्र
विरति भए वहि पापकरे नहि पाप क
रै नहि पाप डराए शुधनीत मलीन रहे
जिनको उपजे निज तात स्वात्मघाए
बलपावक धूम सु मेघभयो फिर धूम
धुजे हन आप खपाए कुल कंटक आ
हि विवेक सुनो नित पापकरे नहि रे
व लजाए॥३१॥
भाषाटी॥ कामः कुलक्षय करणे विषे
लगे जो हैंन पापी उनको क्या प्रत्यवा
य क्या पापकी गणना है ३० हे रती
इस विषे दृष्टांतदेख स्वभाव करके जो

जो मलीनहैंन कुटिलभावकर्एां वाले।
उनकी उत्पत्ती कैसीहै सो अपनेस्था
नका नाशभी करतीहै पर आपभी
नाशहोतीहै इस विषे दृष्टांतकहते है
जैसे धूम जोहै सो धूम बदलमे प्राप्त
होकरके अग्नकाभी नास करताहै
अरु आपभी नासहोताहै ३१।

मूल॥ नेपथ्ये विवेक आयाति आःपाप
दुरात्मन् कथ मस्मानेव पापकाविरण
हत्या लिपसि नत्रुरे॥३२

अथनेपथकलकला॥ विवेकोवाच॥ सवैया
आहि दुरात्म कामकलंक सुतूं घरमा
नम आप अलाप तें अधवंत सुपाप
करे इम भाष अधी हमको सठराप
नाहि लयो मनतात मतो जिम मूढ
मनोज सुनो चितलाप तात भयो

प्र० वि० भा० टी० ३२ सत मोह अधीन सुमारग वेद कहर

भुलाए ॥ ३२ ॥

37

भाषाटी० ॥ अरु इस्यी उपरंत रंगस्थानकी

बाहर विवेक आनप्रामभया कहता

है हे पापीकाम हे उष्टध्वजवाले कैसे

तूं हमकौं पापी कहताहै ३२

मूल ॥ गुरो रप्यव लिप्तस्य कार्या कार्य

मजानतः उत्पथ प्रति पन्नस्य परित्या

गो विधीयते ३३ इति पौराणिकीं गा

थां प्रमाण विद उदा हरंति ॥ ॥

सवैया ॥ कारज और अकारजको गुर

जोन पिछ उरमे गरवाए ॥ वेद विरुध

सुपंथ विषे मनमे मद कै जव पाउ

दिकाए ॥ त्यागको सुवेद कहे मनसि

मृतमे पुनि पक्ष वनाए ॥ वीच पुरान

न वयास । कहे विष्ठ सरव ले पुनि पक्ष

वलाए ॥ ३३ ॥

भाषाटी॰॥ हे नीच तूं श्रवणकर इह जो
कथाहै पुराणोंकी जो पुराण जाननेवा
लेहैन सो कहतेहैन गर्व वाले जो गुरू
भी होवनजे करसोभी शुभ अशुभकों न
जानन अरु कुमार्ग विषे ज्जगत होवन
तिनका त्यागकरणा जोग्यहै ३३

मूल॥ अनेनचास्माकं जनकेन अहंका
रात्रवर्तिता जगत्पतिस्त्वाव त्पितैव ब
द्धः मोहादिभिश्च सएवबंधः सो[illegible]
स्हठतांनीतः॥ ॥

दोहा॥ पिता गुरू मति त्यागकर बड़ भा
गी पहिलाद॥ मुक्तिपाइ बंधन तजे ह
रिके सेव स्वपाद॥ कवित्त॥ तात जो हमा
रो सु अहंकारके अधीनभयो कारय अ
कार्य नंव कवि चारियो॥ ज्जगत को प
ति जो परमातम स्वतात निज ताहिको

प्र चं.
भाटी.
३८

38

सुबोध जग सिंघल में डारियो॥ मोह म
दमान निस दिन मन मान कर छोड
नो सुहद बंध हठ विसतारयो॥ ऐसो
मन तात जोई इत पन दोष कोई कर
यो हम त्याग नहि ताहि मतो धारियो॥

भाषाटी॥ इह जोहै हमारा पिता मन कै
साहै अहंकारके साथ वर्तताहै अथ
मते आपणा पिता जो ईश्वर सोई बांधा
है कामदेव रंगस्थान वाहिर देषकर

मूल॥ कामः विलोक्य प्रिये अय मस्माकं
कुलज्यायान् देव्या मत्यासह विवेक
त प्रवाभि वर्तते यघघः ३४

सवैया इह औसर काम विलोकनकै र
तिके प्रति एह सुवाक अलायो हमरे
कुलमे सुप्रधान बडो मतिसंग मिलायो
सु विवेकह आयो गजगामनि आवत है

इत उँर चले मृगके पति ज्यों अलसायो ॥
सिवज्यों नहिना चलकी तनयामति सं
ग मिले इह भांति सुहायो ॥ ३४ ॥
भाषार्थ· ॥ इती श्रुति कहिता भया हे प्रिये य
ह जो विवेक सो मती आपणी इस्त्रीके सा
थ हमारे कुलका बडाईहीसी आवताहै
मूल ॥ रागादिभिः स्वरस चारिभि रात कां
ति निर्भत्स्य मान इव मानधनः कुसंगः
मन्या नितांत कलुषी कृत पाशशोकः
कांत्येव सांद्र नहिनांतरितो विभाति ३५
दोहा रागादिक जिन वसकीय कीरति
वंत उदार अरु अलि कोप यो मानधन
मनो निराधर धार सवैया ॥ तन हवर प
ड विवेक पिषा रति चीन कठोर महा
उषदाई कलुषी मतमाहि सुवे लस
के नहिना तर मो समदेत दिषाई ३५

प्र॰चं
नाटी
३९

39

भाषाटी॰॥ इहजो विवेक सो आपने बसक
कें विचरणे वाले जो हैंन रागादिनोने
षेंचलईहै सोभा जिसकी मानहीहै
धन जिसका सो निरादर जैसा भासता
है अरु क्षयहैन अंग जिसके मलीन
ताको प्राप्तहोई जो मति तिस दीनता
ईसाथ आवताहै जैसे रानी हिमवि
षे चंद्रमा होइसा सोभाको नही पाव
ता तैसेही अब विवेकभी सोभा न
ही पावता ३९

मूल॥ तन्मयुक्त मिहास्माक मवास्थान
मितिनिष्क्रांतो विष्कंभकः तत्र प्रविः
शति राजा मतिश्च राजा विचिंत्य प्रिये
श्रुतं त्वयास्य दुर्विनीतस्य वटो मद
विस्फूर्जितंवचः यदस्मानेव पापका
रिण इत्याक्षिपति॥

इहकारण ते हम जोग नही ठौर निवा
स चले खपलाई रति संगमनो जस
भाग गए मति संग विवेक बरे तहि आई
विवेकोवाच॥ दोहा॥ सुनी प्यारी कान तब
काम वटो मद वैन इमै मषाने पाप
सुनत उष्ठानम यह मैन ॥
भाषार्थ॥ ऐसे कहिकरके इस अस्थानवि
षे हमारा रहणा योग्यनहीहै इस्का
क्या अर्थहै प्रथम जो नमाशा करण
हारेथे तिनका जाना अरु जो श्रेष्टहैंन
तिनका आवना इस्का नाम विष्कंभ
ककहीये तिस रंगविषे राजा विवे
क अरु मती आन प्राप्तभई राजा विवे
क चिंतन करता भया हे प्रिये तैने स
नाहै इह जोहै बहू कामदेव खोटी बुद्धि
वाला मदकरके बडा प्रगल्भहै वाका

प्र. वे. भा. टी. ५.

५०

जिसका हमको पापकरणद्वारा कहिता
है ॥ ॥
मूल॥ मतिः अज्ञजन किमप्यणादो सं
लोडो विश्राणादि राज्ञा श्रिये पशूप २६
मंत्रोवाच॥ दोहा॥ आपनसत निज दोष
को जानत नाहि सकोइ दोष वषाने
औरको स्वामी जगतके लोइ ॥ २६
मंत्रोवाच॥ मंत्री कहत भई हे स्वामी आपा
ण दोषको लोक नही जानते २६
मूल॥ असावहं कारपरै ईरात्मभि निब
ध्यतेः पाशभूतै मंत्रादिभिः चिरं चिदा
नंद मयो निरंजनो जगत्सभ्र दीनदशा
मनीयते २७ तपते शापकारिणो व
यं तन्मकये प्रहताः पापकारिण इति
जिते ईरात्मभिः ॥
राजोवाच॥ सवैया॥ चित आनंद नीत निरं

जन जो जग नाइक जाहि स्त्र आगम
गाए मद काम हंकार परायणाते ति
नको जगभीतर बंधन पाए अति दी
न दसा तिनकी स्त्रकरी पुनि सुकृत
वंत सुभाय कहाए इमताहि छुडाव
न माहि लगे अघवंत अहो षल मोह
अलाए ॥ ३२
भाषाटी॰॥ राजा कहिताहै हे प्रिये तूं देष
का अहंकारके जगत जो हैन मदादि
क तिनोने सेकडे जो फासीयाहैन ति
नसे बांधकरके चिरंकाल दीनदशा
को प्रापकरीदाहै फासीयां क्या कहि
ये वासना जो संस्कारहैन तिनोसे बांध
करके ईश्वर कैसाहै चिदानंद मयहै
पुनः कैसाहै हरहोवाहै मोहरूपी अं
जनका जिसने ३२ हेमती इक जोहैन

प्र॰ चं॰
भा टी॰
४१

मदादिक आपणे आपकौं पुनकारी कर तेहैं अरु हमकौं पापी कहतेहैं असी कैसीहे वासना रूपी जो फांसीयांहैन तिनांके हर करणेविषे प्रवृत्तहो

मूल॥ मतिः अजडत्व घटोः सा सहज॰ आनंद सुंदर सत्ता ऊणि चम्ब आसी॰ विस्फुरंत सम्मलाद्द अणप आशेः पर मसेरा सत्त्वदि ताकधं पटेहिः डविणी देहि विवोधिश॰ महा मोहसा अरणी रिरवता: ॥

मनोवाच॥ सवैया॥ ग्यान आवय जो परमा तमहैं सहिजानंद सुंदर वेद उचारे व ह निज प्रकास महा रवि सा ह त्रिभो नन माहि खतादि प्रचारे इह भांति स नो परमेस्वर मे किह भांति इने तिन बं धन डारे डुष सिंधमें आनम डार दये

किम नाहि तजे गुण आप उदारे

भाषाटी॥ मती कहतीहै हे स्वामी स्वभा-
वकरके संदर जोहै अरु नित्य प्रका-
शरूप संपूर्णभवन त्रिलोकी जिस वि-
षे कल्पितहै क्या तीनभुवनाकी रचना
कर्णहारा है ऐसा परमेश्वर सनीदाहै
यह जो हैन मदादिक षोटी बुद्धवाले
इनोने महामोहरूपी जो सागरहै तिस
विषे कैसी डूबीयाहै ॥ ॥

मूल॥ श्रियै सतत धृति रप्युच्चैः शांतोप्य
वाम महोदयोप्यधिग तनयोप्यंतः स्व
स्वस्थाप्युदीचित धीरपि त्यजति सहजं
धैर्यं स्त्रीभिः प्रतारित मानसः स्वमपि
पदवं माया संगा न्मानिह विस्मृतः॥

राजोवाच॥ सवैया॥ अति धैर्यवंत उदार
वडो उर शांति सदा शुण सिंध सुगायो

प्र॰ चं॰ भा॰ टी॰ ४२

42

स्वछसदा उर नीत बसे स महालछमी
सिर छत्र फुलायो मति धैरय सीलन त
जे षिनमैं स्वनि भामनि नारि न जाहि
भ्रमायो अब औरकी बात कहा कही
ये निज नारि परातम आप भुलायो ॥
भाषाटी॰॥ विवेक कहिताभया हे प्रिये
बडे धीर्यवाले जो पुरुष हैं अरु शांत
भी हैं अरु जिसको मोहभी नही प्रा
प्त हूवा है अरु नीती कौंभी जानता
है अरु अंतःकरण करके स्वस्थ
चित्तवालाभी होइ उदार बुद्धीवा
लाभी होइ ऐसा पुरुषभी स्त्रीयोंने
ठगाहै मन जो पुरुष ऐसे स्वभाव
करके शुद्ध होये सोभी शीघ्रही धी
रजका त्यागकरदेते हैं जिस हेतु इ
ह जो पुरुष ईश्वर उसने अविद्याके स

वैसे आपणा आपभी भुलायाहै जै
से कोई मदिरा पान करके अपने आ
पको उसको सो जान हैरनी तैसेही
अविद्या संबंध करके ईश्वरभी भ्रमताहै
मूल॥ मति: अजउप एं वेल अंधकार
लेहाय सहस्ररास्मिणा तिरवारोजंमा
आप नथाकुरंतं महा पहासमा आरस्स
देवस्स· वि· अदि हवो॥
मत्तोवाच॥ सवैया॥ स्वत आरय जो तमहो
इ बडो रविको नहि छादिसकै पुनिसोई
निम आतम नित प्रकास महा जिनके
सम हसर औरन कोई स्वष सागर
नीत उजागरहै अज्ञानकहो किह भात
सहोई अब हरकरो करुणा करके
इह संक बडी उर अंतर सोई
भाषाटी·॥ मती मायाके कारयकौनरही

प्र.चं
भा.टी.
५२

43

जानती प्रकृतीहै हे स्वामी निश्चे करके ग्रंथकारकी जो लेषाहै तिसकरके सूर्यका निरादर नही होता तिसी प्रकार माया करके महा प्रकाशका सागर जोहै ईश्वर तिसका निरादर नहीहोता

मूल॥ राजा प्रिये अविचार सिद्धेयं वारविलासिनी वमाया ऽसत्वोपि भावान्त्र पदर्शयंती परपुरुषं वंचयति पश्यरस्फटिक मणिवज्ञास्वान्देवः प्रगाढम नार्धया विकृति मत्रपानीतः काममप्संगत विक्रिया न खलु तत्तपश्चेषाद स्य अर्पयति रुचि मनाकः प्रभवति न च्याप्येषा वाढं विधातु मधीरतां ॥

राजोवाच। कवित्त॥ विना विचार सिध प्रसिध वारयोषता समान नाम माया विलासनी बषानीये मण सफाटकं यथा

सदेव उजले मृषा सुहाव भावकै प्रवंच
ना सु नाटिये॥ ताहिके सुसंगते असंगता
ज्ञ देवकी सरूप सिध नितहै मनाक
नाहि हानिये॥ तथापि गाड संगते प्र
संग विक्रिया भई छुटी सुधीरता तवै
अधीरता सुजानिये॥१२३॥
भाषाटी॰ राजाकहेहै हेप्रिये वेसवाकी
न्याई जो मायाहै सो माया कैसीहै अनि
र्वचनीयाहै क्या सत्य असत्य करके नही
कहीजातीहै अरु माया कैसीहै असत्य
के जो भावहै कर्तृत्व भोक्तृत्वादिक ति-
नांको देखावतीहै अरु पुरुषाकों ठगा-
तीहै हेप्रिये जेकर इसवातमो प्रतीत न
हीहै देव क्या देष इसमायाकों इह मा-
या कैसीहै उष्टाहै अरु अनर्थकों करण
हारीहै शुद्ध स्फटिककीन्याई जोहै स्वयं

प्र वे
भाटी॰
४४

44

प्रकाश ईश्वर सो बहुतकरके कोईजोहै
अनिर्वचनी विकार तिसके प्राप्तहूवा है
हे विवेक उस समे विषे क्या माया हता
थीकीन्याई होईहै हे मनी तिस मायाके
संग थोडी मात्रभी रुचीका स्वयं प्रका
श सो नही हरहोताहै इस विषे हेतुक
हेहै कैसाहै ईश्वर नहीहै प्रतीतविषे
आयाहै विकार इसका तिसमें दृष्टांतक
हेहै जैसे स्फटिक मणीजोहै सोलालफू
लपुष्पोंके संबंधकरके लालभीहै अरुपी
तभीहै तोभी आपणी स्वेतताको नही
त्यागतीहै तिसी प्रकार उपाधि संबंधले
लेकर विकार बंधहूवा तोभी उस ईश्व
रके स्वरूपकी हाणी नही होतीहै तथा
पि इह जो मायाहै सो स्वरूपने ईश्वरको
छिपानेको समर्थहोतीहै ॥

मतिः किउए॰ करए॰ जेएम्मा तया उवा
व रिद्ं उवि अक्षाय आरेदि

मत्युउवाच ॥ दोहा ॥ कारण कौन स्वभाष॰
ये जाकरकरे विकार ॥ पुरष पुरातन सो
उहजाको चरन उदार ॥ २४ ॥

भाषाटी॰ मती कहतीहै हेस्वामी इहक्या
कारणहै जिस कारण करके सो माया
उदार चरित जो ईश्वर तिसको वंचनक
रती क्या लगतीहै ॥ ॥

मूल ॥ राजा नखलु प्रयोजनं कारणं वा
विलोक्य माया प्रवर्तते स्वभावः खल्व
यंस्त्री पिशाचीनां २५

राजोवाच ॥ दोहा ॥ मायाकारण काजको या
हतनाहि सकोइ ॥ नारी जानी पिसाच
नी यही सभाव सहोइ ॥ ॥ ॥ २५

भाषाटी॰ ॥ राजाकहेहै हे प्रिये निश्चै करके इ

प्र॰ चं
भा टी॰
४५

45

स मायाको प्रयोजन अरु कार्यते कार
ण नहीहै स्वभावकरकेंहीहै इस्त्रीया
रूपी जो पिशाचनीयांहै तिनाका इही
स्वभावहै विनाकारन पिलच जाना
हैमती तूं देष इस विषै तर्क करताहै
इह जो इस्त्रीयांहै सो सर्व मनुषोंके हृ
देविषै प्रवेशकरके क्या नहीं करनीयांहै
मूल॥ पश्यप संमोहयंति रमयंति विषा
दयंति निर्भत्सयंति मदयंति विडंब
यंति एताः प्रविश्य सदयं हृदयं नरा
णां किंनाम वामनयनान समाचरं
ति ४९
सवैया॥ मोहतहै कबहूं अबला मदसोस
विडंबन फेरकरे कबहूं पुनि ताडत
है अबलारसकै कबहूं पुनि अंकभरे
सविषादकरे कबहूं अबला अतिदीन

मनो रिदमाईहैबरे हगवाम कटाषनकै
श्रबला कऊ कौनऊको ननचीत हरे ॥८॥
भाषाटी॰॥ मोहकों प्रामकरतीयांहै पु
नः खेदकों प्रामकरतीयांहै श्ररु र
मावतीयांहैं तथा तिरस्कारकराव॰
तीयांहैं श्ररु मदकों करावतीयांहैन
श्ररुठगतीयांहैन गलाकरके फेरके
सीयांहैन वामनयनाहैं क्याकपटज
गतहै इष्टी जिनेंकी ॥ ३१॥
मूल॥ श्रस्तिचापर मपिकारणं मति॰
श्रजउत किणमनं कारणं ॥
दोहा॥ है कछु कारण कोनपति कहो
सनो श्रबसोइ उराचार इनचितवि॰
यो करो विचार सकोइ ॥१२३॥
भाषाटी॰॥ श्रोरभी कारणहै मतीकहती
है हे स्वामी क्या कारणहैं

प्र॰ चं
भा॰टी॰
४६
46

मूल॥ राजा एवमनया उराचारया चिंतितं अहं तावद्गत यौवना वर्षीयसी अयंच पुराणः पुरुषः स्वभावादेव विषयरस विमुखः ततः स्वतनयमेव पारमेश्वरेपदे निवेशयामि तमेवच मात्मरमभिप्राय मासाद्य नितांतप्रत्यासन्नतया तद्रूप मिवा पन्नेन मनसा नवद्वाराणि पुराणि निर्माय॰ ४॰ एकोपि बहुधातेषु विभिद्येव निवेशितः स्वचेष्टित मधातस्मि न्विदधाति मणा विव॥ ४१॥

मायोवाच॥ सवैया॥ अब जोवन मोह बिलाइ गयो पुनि देव पुरातनहै जरठायो॥ अब मोहविषै रस आदि कहा रसवे अब जोबन मैनरसायो॥ अब और उपाइ बने न कछू मन सुत बने अबराज दिवायो॥

इह आतम जो सुविचारमने मनसुत त
वै निजतात मिलायो ११ नवद्वारने
के पुरैमाहि रचे मन आप सुतो तिनबी
चबसाई एकरूप हुतो परमातम जो
बहुभांतिनकै पुरमाहि फसाई सुक
रे मन कारय आपजिते परमातमके
पुनिमाहि ठहराए सुजपा अजपं म
णि माहियथा हनसेवतगुणं गणलाल
दिखाए ॥ ५ ॥

भाषाटी० ॥ राजाकहेहै हे मंत्री इह जोहै
षोटे आचारवाली अविद्या तिसने इह
चिंतन कीयाहै जो अब मेरा जो बनह
रहोवाहै इहअवस्था आनप्रापहोईहै
अरु ईश्वरजोहै सो पुराणपुरुषहै स्वभा
वकरके विषे रूपीजो रसहै तिसरससे
विमुषहोरहाहै तिसकारणते आपणे॰

पुत्र मनको ईश्वर पदविषे स्थापन
करताहों राजपदवी देवोंगा किस
कारणते जो सर्वलोककहतेहैं जोम
नहीकारणहै मनजोहै सो इसीमाता
केअभिप्रायको जानकरके तिस अवि
द्याके रूपको प्राप्तहोयाहै किस हेतु
करके अत्यंत निकटता होनेकरके
अरु पुर जो हैंनु तिन्हाकों रचकरके
पुर कौन शरीर सो पुर कैसेहैंन नव
द्वार संजुगतहैंन एक जो ईश्वरहै सो
शरीररूपी जो पुरहै तिन्हां पुराविषे
भिन्नकरके स्थापनकरीदाहै जैसे विं
ब प्रतिबिंबकरके ईश्वरका प्रवेशहो
याहै इस्थी उपरंत तिस ईश्वरविषे आ
पणे चेष्टतनु चेष्टन क्या कर्तृत्व भोक्तृ
त्व सुख दुःखादिक जो धर्म सो तिसमें

आरोपण करताहै इसविषे दृष्टांतहै जैसे शुद्धस्फटिक जो मणीहै तिसविषे रक्तपीतादिकजोहै पुष्प तिनकरके लालपील भासताहै तैसेही ईश्वर मन उपाधीके बसहूवा भासताहै ईश्वर जो शुद्धहै निर्लेपहै निरुपाधीहै ॥ ४१ ॥

मूल मतिर्विचिंत्य प्रजउत· जादिसी· माता पुत्रको विवादि सोजेवजादो ॥

मतोवाच ॥ दोहा आरय सत या लोकमे जेसीमातप्रबीन ताको सततै सैभयो कहो देव कतकीन ॥

भाषाटी· ॥ मती चिंतन करके कहतीहै हे स्वामी जैसी तो माताहै तैसाही पुत्र भी उत्पनहूवाहै ॥

मूल ॥ राजा ततो सा वहंकारेण चित्तस्य ज्येष्ठपुत्रेणनम्रा परिष्वक्तः ततश्चासावी

प्र॰ चं
भा॰ टी॰
४८
48

स्मरः ४२ जातो हं जनको ममैष जन
नी देवं कलत्रं कुलं पुत्रा मित्र मरात
यो वसुबलं हृतिः सुहृद्बांधवाः चि
त्तस्पंदित कल्पना मनुपतन् विद्यात्र
विधाय निद्रामेत्य विवि हूर्णितो बहु
विधा स्वप्नानिमान्पश्यति ४२
राजोवाच ॥ सवैया ॥ तब चीतको भूत हंका
रबडो न पिता परमातमको जगगायो
श्रुति नातल बैन गयो फिर जो हमके
परमातम कंठ लगायो तब भूल परमा
तम आपगयो भव माहि भयो हम आप
अलायो यह तात इहै मम मात अहै इह
षेत इहै सुकलित्र सुहायो यह पुत्र सु
मित्र अरात बडो पुनि या वसुधा बल
आहि हमारे गज अश्व परम् यह कोस
अहे पुनि एह सुहित सुबंध पियारे चि

नको कुरणा जिह भांति भयो तिमदेव पराजम आपनधारे अज्ञान मई बहु नीदभई सुपना बहुभांत न भांत निहा रे ॥ ४३ ॥

भाषाटी॰

राजा विवेक मती प्रति कहेहै हे मती इह जो ईस्वर सो अहंकार जोहै चित का बडा पुत्र अरु ईस्वरका पौत्र तिस अहंकारने आलिंगन कराहै अहं व्यव हारको प्राप्तहूवा ईस्वरभासताहै ४२ राजा कहेहै हे मती विद्वान् जो ईस्वरहै अविद्यामयी जो निद्राहै तिस निद्राको प्राप्तहोकर देह जो अनेकप्रकारके स्व मेहै तिनांको देषताहै मै उत्पन्नभयो हो इह मेरा जनकहै इह मेरी माताहै इह मेरा क्षेत्र क्या गृहहै इह मेरी इस्त्री है इह मेरा कुलहै इह मेरे पुत्र पौत्र संबं

प्र॰ चं॰ भा॰ टी॰ ४८

धर्म्हैं मित्रसखा अरु शात्रूहैं अरु इह मे
रा धनहै तथा बलहै अरु इह मेरीहस्ती
है इह मेरे सुहृदहै इह मेरे बंधूहैं इ
सप्रकार करके स्वप्नदेषताहै कैसाहू॰
वाहोया मनकी जो चेष्टा क्या रचना
तिसको प्राप्तहूवा ॥४॥ ॥४९॥

मूल॥ मतिः प्रज्ञ उत पचदीहदीहनरा
णि हाविहावि श्रवाहो परमेसरे कंधे
पवोहोप्पती भविस्सदि॥

मतोवाच॥ दोहा॥ आरच सत परमेस्वर दी
रचनीद विकार बोध जनम किह भें
ति पुनि होवै मोह उचार॥

भाषाटी॰ मती कहती है हे स्वामी बडी
जो निद्राहै तिसकरहतहूवा है बोधजि
सका ऐसे ईस्वरविषे कैसी बोधकी उ
त्पती होवेगी॥

मूल ॥ राजा सलज्ज मधोमुख स्थित ॥

कविवाच ॥ दोहा ॥ सुनित विवेक महीपको लाजभई उरभार ॥ कीन अधोमुखतास मैं धरनी ओर निहार ॥ ॥

भाषाटी ॥ ऐसे कहनेसे विवेक राजा अधोमुख होकरके लज्जामान होइकर तूस्नी भाव होरहा ॥

मूल ॥ मति ॥ अत्र उक्त किंत गुरु अवलज्जा भरणी मिदंसे अरोनक्षी भूदोसि ॥

मतीवाच ॥ कारण स्वत किह हेतते अस्त्र लज्जा तोर नित्र सकंदरते भई भाषो कारण मोह ॥ ॥

भाषाटी ॥ मती कहतीहै हे स्वामी किस कारण करके तुसी ऐसी लज्जाकों प्राप्त होयेहो ॥

मूल ॥ राजा प्रिये सर्षां प्रायेण योषितां भ

प्र.चं
भा.टी.
५१

वति हृदयं तेन सापराध मिवात्मा
नं शंके॥
राजोवाच॥ दोहा नारिनको बड़ ईरषा हो
वत जगमकार सापराध जन आ
पपिष करे न तोह उचार
भाषाटी॰ राजा कहतभया हे प्रिये इ
स्त्रीयाका जो हृदाहै सो अत्यंतकर
के ईर्षा क्या द्वेषकरणेवाला होता
है तिस करके आपणे आपको अप
राध संजुगत शंका करताहो
मूल॥ मतिः अज्ञउत्त अणता इत्यिया
उजाउ सरउनस्य बाधम्माय वावा
दयस्मि अस्सभ न्नरणाहि अप्रछित्रं
विहरणंति॥ ५४॥
मनोवाच॥ दोहा॥ रस अविरतिको धरम
हित करै कछु पतिप्राण वर श्रीरंज

गजोषिता करे काज तिह्हान ॥
भाषाटी॰॥ मती कहतीहै हे स्वामी
सो श्रोरही इस्त्रीयांहैन जो श्रापणे
रसविषे धर्मार्थ व्यवहारविषे इस्थि
तहूवा जो भर्ता तिसभर्तेके हृदेका
जो ईप्सित क्या मनोरथ तिसको हर
करतीयांहैं विघ्नकरतीयांहैं ॥ ५४॥
मूल॥ राजा षिये मानिन्या षिर वि
प्रयोग जनिता ह्या ऊला या भवे
च्छांन्यादे रजहल नाडपनि षहेया
मया संगमः तूलींतह्विषयानपास्य
भवती निहेन्मुहूर्ततेना जायन्त्वमस्
श्चभि धाम विरहा न्यामः प्रबोधादयः॥ ॥५५॥
राजोवाच॥ दोहा॥ मति प्यारी इक श्रोरहै
मानन मेरी नारि॥ उपनिषत ह्नाम
बषानीये सुंदर रूप उदार॥ चोपई॥

प्र॰ चं
भा टी॰
५१

51

बहुदिनकी बिछुरीहै प्यारी मोहग्रस्
या उपषहै भारी शम दम जो ग्रवहू
लहहोई तो उपनिषद संगममहोई
हेमत ते जगबिषे निवारे एक महूर
ति मान सुधारे। जाग्रत स्वपन सुषुप
ति विलाई मै प्रबोध सुत लेउ उपाई
दोहा॥ उपजत ही प्रबोध सुतकरे बंध
समहान बंधन मुकति विराजई प
रमातम भगवान ॥ ॥ ॥
भाषाटी॰॥ राजा विवेक कहेहै हे प्रिये
जद उपनिषद देवीका मेरे साथ संग
महोवेगा तद प्रबोधका उदेहोवेगा
केसीहै उपनिषददेवी माननीहै क्या
तेरे करके कोप संजुगतहै पुनः कै
सीहै चिरंकालका जो विजोग तिस
करके उत्पन्न होईजो असूया क्या परा

ई उत्कर्षतान सहनी तिसकरके व्याकु
लहै इह बात कब होवेगी जब शांता
दि रूपी जो द्वितीयांहै सो जद मेरे
अंतःकरणसे वर्जेगीयां हेमती तूं जद
विषैको त्यागकर्के मुहूर्तमात्र मौन॰
भावको इस्थितहोयेगी तिसते जाग्रत
अरु स्वप्न अरु सुषुप्ती इही रूपजो अ
स्थान इनो अवस्थानाके अभावते रहेगी
तद प्रबोधकी उत्पत्ती होवेगी ॥ ४५ ॥
मूल ॥ मतिः अज्ञउन जडएवं ऊलयङ्
ण हिढगंठि निबद्ध स्वविबंध मोहा
भादि नदो॰ ताप॰ णिज्ञाणउबंधोजेब॰
अज्ञउनोभोईन स्वचमेपिक्षे ॥ ॥
मनोवाच ॥ सवैया हन आरग जो अभदि
ढ बंधनहै दिढ ग्रंथ नसोई महा उघदाई ता
ना अबला तब संगमते हन बोधभए

प्र. वं
भा टी.
५२

वह बंध मिटाई पतिनीत भजो ति
न संगमको अब वेग मिलो किम
वेरलगाई मन आरय नीत रमो ति
नसो ममचीत प्रसंन भयो इलसाई

भाषाटी मतीकहेहै हे स्वामी हठग्रंथी
योंकरके बांधाहूवा जो तिसको ज
दबंधसे मोक्षहोइ जाइ तद नित्या
बंधवाला तिस मायाके साथ तुम
भीहोवेगे इह मेरेको प्रसन्नताहै
हठग्रंथी क्या कहीये अहंकार ति
स अहंकारवालेकों बंधमोक्षक्या
संसारते निवृतीहोइ तद तिस अना
दी माया करके बंधवाला तुमभीहै

मूला राजाश्रिये यथेवं प्रसन्नासिसि
द्धास्तांहि चिरमस्माकं मनोरथाः न
याहि ५२ वहैको बहुधा विभज्यत

गता मादिशब्दः शास्वतः हित्वायैः
शरुष्यः परेश परमे मृत्योः पदंप्रापितः
तेषांब्रह्मभिदो विधाय विधिवत् प्रा
णांतकं वियथा प्रायश्चित्त मिदं मया
प्रनरसा बद्धैकता नीयते ४७ तद्भव
तश्चस्तनविधानायशमदमादीभाज
यामः इतिनिष्क्रांतौ इतिश्रीकृष्णमिश्र
विरचितेप्रबोधचंद्रोदयेप्रथमोंकः॥१
राजोवाच॥सवैया॥भामनि जो यह बात
भई तब सिध मनोरथ आज हमारे
है जग आदि रूपक विभू परमातम
जो श्रुति पंजा उचारे ताहिकरे बहु
षंड जिनो पर देहनमै बहुबंधनडारे
विदईस दयो मृतकोपदहा अबतेई ब
ने जगभीतर मारे ४८ कवित्त ब्रह्म
के जुभेदकरैं षेदक अनेकविध प्राण

प्र॰ वं॰
भा॰ टी॰
५३

53

अंतग्राह चिन नाहि करवाईये वियासह
पग्राह चिनजो अनूप होई जीव ब्रह्मएक
ता सतनी मोहलगाईये कारयके सिध
हित सांत श्रोदमादिजेई तांहि तांहि ती
रथमे वेग स्नपटायीये ऐसे मतिमान
मति पतितो वषान करगए भान श्रोर
पिषजाहि स्नषपाईये ॥४४ सवैया म
तिसंगविवेक विचारकीयो जगभीतरि
जो जनको स्नषदाई जिह सो सभजीव
कि बंधमिटे परमातम संग स्नवेग मि
लाई तपसा तट तीरथ जोग भजे उप
जे स्नत वोध वडो जसदाई कविसिं
घ गुलाब स्नपढ़ कथा प्रथमे यह अंक
निरंतरगाई ॥४५ दोहा गुलाब सिंघ
मतिपति मतो जान मोह भूपाल दंभ
कलादिकपरे गो तीरथ हनन विसाल

इति श्रीमन्त मानसिंघ चरण सिषत श्लो

लाबसिंघविरचिते प्रबोधचंद्रनाटके ।

प्रथमोध्यायः ॥१॥ प्रथमोंक ॥१॥

भाषाटी राजा कहेहै हे प्रिये इसबानमें तें प्रसन्नहै साउ जो मनोरथहै सो चिरं काल सिद्धहोवेंगे सो कहिताहै ४८

पुनः राजा कहिताहै हेमती इह जोहै आत्मा चिदानंद तिसकों ब्रह्मके साथ भेदकरणहारे तिन्हाको विद्या करके क्या ब्रह्मसाक्षात्कार करके देहांत प्रायश्चितदेकर्के विधी संज्ञगन तिनाकों बांधेगा किनाकों जिनेने जगतका प्रभूईश्वर जो अविनासीहै ऐकसो बांधकर्के पुरुजोहैन नरकादिक तिन्हा विषे प्रापकरके मृत्युका जो पदहै जन्म मरणादिक तिसकों प्रापकराहै ४७ अब इह हत्तांत

प्र. चं
भा टी
पत्र

54

रहे अब शमदमादिक जो हैं तिनां को प्र
बोध की उत्पती वास्ते असी ज्ञगन करैं गे
असी कहिकर के रंगस्थान ते राजा विवे-
क तथा मती जात भये ५८ इति श्री
प्रबोधचंद्रनाटके प्रथमोंकः॥१॥

ततः प्रविशति दंभः आदिष्टोस्मि महाराज महामोहेन यथावत्स दंभ प्रतिता ते सामात्येन विवेकेन प्रबोधोदयाय प्रेषितास्ते तेषु तीर्थेषु शमदमादयः सचापमस्माकमुपस्थितः कुलक्षयोभवद्भिरवहितैः प्रतिकर्तव्यः तत्र पृथिव्यां परमं मुक्तिक्षेत्रं वाराणसी नाम नगरी तद्भवांस्तत्र गत्वा चतुर्णामाश्रमाणां वर्णानांच निःश्रेयस विघ्नार्थं प्रयतता मिति तदिदानीं वशीकृत भूयिष्ठा मया वाराणसी संपादितस्य स्वामिनो मया यथा निर्दिष्ट आदेशः तथाहि मदधिष्ठिते विदानी १

दोहा असुर विदारे जाहि जग देवन की उधार ता रघुनाइक विमलपद वंदो वारं वार १ सवैया तब दंभको

स्वांग बनो अति सुंदर जाहि पिषे जग
सीस निवावे करि सैननही समझावै।
तहै सभ पेषत राजसभा महिआवे सुष
पेह कही महामोह वली सिरहा वधरे
जगमाहि पठावे सुत दंभ अमानन से
गविचार विवेककीयो वह होनन पावे
महामोहउवाच सवैया पेह विवेक
विचारकीयो सुप्रबोधवली सुतलो।
हि उपावे ताहिनिमिति सुतीरथमे
सभडो दंभ आप विवेक पठावे हैहम
रे कुलनाशनि मिति इहै जगमाहि वि
रंचवनावे तुम होइ सुचेन उपाइकरो
जिहते इह नाश निमित मिटाए ३
तिन तीरथ माहि बनारस जो वहि मो
ष निमिति विरंच बनाई शिवकी नग
री सुतदंभकरो सुकरो तुम जाइके पद

उपाई चढ़ आश्रमको कलयान मिटे तिहते नहि मोष लहोवन पाई वसमोह बनारस एड़ कही सभ स्वामि कह्यो लकरयो ममआई ॥१॥

प्रथम अंकविषे अज्ञानकरके निखिल संहरणी भेदोंका जो फुर्नाहै सो आत्म साक्षात्कारते हरकरणेको योग्यहै ऐसे विवेकके उद्योगको सुनकरके अब द्वितीय अंकविषे महामोह जो राजाहै सो विवेक आदिकोंके धर्मों को षंडनकरणेवास्ते दंभादिकोंकेप्रेरणाकरताहै तिसी समे दंभादिकआन प्राप्तभये क्याकहतेहै वडाजो राजा महामोहहै तिस महाराजाने मेरीप्रती आज्ञा दईहै हे पुत्र दंभ विवेक राजाने मंत्रीयोंके साथ प्रबोधके उत्पतीकेवास्ते प्र

यो॰ वै॰
भा॰ टी॰
५८
56

निन्दाकरीहै तीर्थोंविषे शमदमादिक
जो मंत्रीहै सो शमकरायेहैं येह हमा
रे फलकाहेतु अब ज्ञान प्राप्तहूवाहै सो
तुमने अब सावधान हो करके हृदक
रणेको योग्यहै पृथ्वीविषे जो श्रेष्ठतीर्थ
है मुक्तीकाहेतु श्रीकाशीनाम नगरी
तहां तुमजाइ करके चार जो आश्रमहैं
ब्रह्मचर्ज गृहस्थी वानप्रस्थ संन्यासी
इह चार आश्रमहैं अरु चारवर्णहैं ब्र
ह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र जिसप्रकारकर
के उनोकी मुक्तीनहोइ सो विधीकरो
तिस कारणते अब मैने वारानसी जो
काशीहै महात्म लोकोंके सहितवसक
रीहै अरु स्वामीकी आज्ञाभी सर्व करीहै
पुनः दंभ कहताहै १
मूल॥ वेशणा वेषमत सीसगंध ललना

वक्रासवा मोदिनै नीत्वा निर्भर मन्म
थोत्सवरसे रमिरंचंडालया: सर्वज्ञा इ
ति दीक्षिता इति चिरात्मामाग्निहोत्रा
इति ब्रह्मज्ञा इति तापसा इति दिवा
हूतै र्जगद्वंच्यते २
दंभ उवाच दोहा ॥ जहा निवास सूंभैक
रे सुनो तिनकी गाथ मन्मथके उल्ला
स भजे लोक निवावे माथ कवित्त वा
रिवधू भोनि निसवास मद्यान करे
कामके कलोलनसो यामनी बिताइहै
चांदनी सराति मनमथके उलास भ
ये नारिनके संग सुनेंग सुख पाए हैं
नार प्रातकालमें लै अंकुश लगाइ भा
ल धूरत सुवडे सभ लोगन दिखाइहै
हम दीक्षत सरबग्य मुनि तापसी ब
ह्म ज्ञान वारि होमक दीन त्रका

इहै ६॥ दोहा ॥ योंदिनमै वंचत जगत
निसमै रिस करसाल महामोह भूपा
लको मैहनतकीन विसाल २
भाषाटी॥ मेरे करके शुक्रजो हैन धूर्त
लोक तिनोने दिनविषेही जगतठगी
है क्याकरके निरंतर छिपांजो रात्री
यांहैन सो वितीतकरके पूर्णहै चंद्र
मा जिनोविषे धूर्तजोहै कामदेवके उ
त्सवके रस जिनाको पुनः कैसेहै वा
रांगनोके जो घरहैं तिनोविषे मदिरा
करके जगतजोहै रस्त्रीयोंके शुष उस
का जो आनंदहै तिनोंकरके प्रसन्नहैं
किसप्रकार करके जगतको ठगतेहैं
जो असी सर्वज्ञहो असी जप्यकरणेहारे
हो हम चिरंकालते अग्निहोत्रीहो अरु
ब्रह्मज्ञहो अरु तपसीहो इसीप्रकारकर

के तिनोने जगत ठगीहै ॥२

मूल॥ विलोक्य कोप्ययं पांथो भागी
रथी श्रतीर्थ्यसांप्रत मित एवाभिवर्त्तते
यथेष्ट: ३ ज्वलन्निवाभिमानेन ग्रस
न्निव जगत्रयं भर्त्सयन्निव वाग्जालै:
प्रत्नयो परसन्निव ४

कविरुवाच॥ दोहा॥ धाम बनारस गं
गातट वैठे दंभ उदार कोइक आवत
पेषकरबोलेवचन विचार दंभउवा
च सवैया कौन उलंघ भगीरथीको
इत आवत है सरता तट माही ज्वाल
मनो अभमानहुकी जउ तीनहु लो
क ग्रसे उषमाही वाक कहे इह भां
ति मनो हदभावतहै सबको जगमा
ही वुधि वडी हमके उरमे सबको उ
पहासकरे मनमाही ४

प्र.चं.
भा.टी.
५८
58

भाषाटी॰ ऐसेदंभकहताभया फेरद
भ्भसर्वदक्षिणाकों देषकरके कहता
है कोईमुसाफिर श्रीगंगाजी उलंघ
करके अब इदरको आवताहै किसप्र
कार करके १ इह पुरुष अभिमानक
रके प्रकाशमानहै कैसाहै मानो ज
गतको ग्रसलेताहै अरवाणीयोंकर
के लोकांको दबावताहै अरु वुडीक
रके हसताहै ४ ॥ ॥
मूल॥ तथा तर्कयामि नूनमयं दक्षि
णराढा प्रदेशादागतो भविष्यति त
देतस्मादार्यस्या हंकारस्य ह्मंत मत्र
सरिष्यामीति ततः प्रविशत्य हंकारो
यथा निर्दिष्टः अहोमूर्खं बहुलंजगत्
तथाहि॥५॥
कवित॥राढा प्रसिधदेस दक्षण कले

म हर तिनहीते आयो यह ऐसे मनआ
इहै आरय हंकार सह मारो तहां नीति
वसे समाचार लेउ कछु मोहको सुनाइ
है ऐसे मनदंभ सु विचार नीके करे त
ब आयो सु हंकार चालहंससी सुहाइहै
अहोवहो मूरष जगत यह छायो सभ ऐ
से सु हंकार अष वैनन अलाइहै ॥ १० ॥
भाषाटी॰ ऐसी मैं तरकनाकया विचार क
रनाहों निश्चैकरके इह पुरुष दक्षिण
राष्ट्र देशते आयाहै तिसकारणते इस
पुरुषसें महात्मा जो अहंकारहै तिस
का व्रतांतमैं पूछोंगा उसी समे अहंका
र आनप्राप्तभया देषकर अहंकार कहि
ताहै बडा आश्चर्यहै जो जगतविषे मूर्ख
बहुतहैंन सो आप कहिताभया ॥ ५ ॥
मूल ॥ नैवाश्रा वितरोर्मतं न विदितं नोना

प्र. वे.
भा. टी.
५९

59

तिलेदर्शिने तत्वं ज्ञानमहोन शालिक
गिरांवाचस्पतेका कथा सूक्तं नापि म-
होदधे रधिगतं माहाव्रतीनेक्षिता सूक्ष्मा
वस्तु विचारणा न्टपशुभिः स्वस्थैः कथं स्थी
यते ८ ॥ ॥

भटपाद मतकोन जानत अज्ञानलोक
नाहि परभा करको मरम सु पछानिहै
जो जातिकवी भीरमत धीर नहि पारलहे
सालिक कैतनर ज्ञानकोउ नहि जानई
वेदव्यास वाकपति कपल कणादिमति
और जो महोदधिको मत्त कवि भानई
महा हमी ना निहारे पुनि वस्तुको विचार
कहा नाम नर पसू सम ऐसे हमजानई ॥ ११

भाषाटी. इनलोकोने गुरु मतभी नही जा
नाहै न समझाहै प्रभु तौता तिल जो हैन
मीमांसक तिनोंका शास्त्रभी इनोने नही

पढाहै पुनः आश्चर्यहै प्रभाकरके मत
को जो जानने वाले हैं शालिक तिनों
की वानीका तत्वभी इनोने नही जाना
है वाचस्पती जोहैं न्यायभाषके व्याख्या
करणहारे हैं अरु वेदांत भाष्य करण
वाले तिनोकी क्या वात है शेषजीने
जो वाक्यसूत्र करे हैं सोभी इनको न
ही प्राप्तहोये महाव्रती जो हैं पाशुपत
शास्त्र संहिता सोभी इनोने नही देषीहै
अरु वस्तु विचारण क्या ब्रह्म विचारण
विषे जो हैन मनुष्यरूपी पशु तिनोने
कैसे स्वस्थ होकरके इस्थित रहनेहैं
ऊछ हमको विचारणेकी इछानहीहै हम
पंडितहो पूर्ण सर्वज्ञहो केवल वेदको
जाननेवाले जो हैन तिनको देषक
र कहिताहै ८ ॥

प्र. चं.
भा. टी.
६.

60

मूल॥ विलोक्य एते तावद्यथाविधारण
विडराः स्वाध्यायाध्ययनमात्र निरता
वेदविस्रावकाः पुनरन्यतोगत्वा एते
च भिक्षामात्र गृहीत यतिव्रता मुंडित
मुंडाः पंडितं मन्या वेदांतशास्त्र व्याकु।
लयंति विरुद्ध प्रत्यक्षादि प्रमासिद्ध वि
रुद्धार्थाभिधायिनः वेदांता यदि शास्त्रा
णि बौद्धैः किमपराध्यते नदेनैर्वीक्षि
ष्ण मपि गुरुतर दुरितोदयाय पुनर
न्यतोगत्वा एतेच शैव पाशुपतादयो
दुरभ्यस्तात्त पादमतः पशवः पाखंड
एवामीषां संभाषण देव नरान नरकं प्र
यांति तदेते दर्शन यथान् हरे परिहर
णीयाः पुनरन्यतोगत्वा एतेच ७
ऐसो येष ये महान मान वोफ भरे अति
महां पक्ष बुधि कछु प्रवष्य कीनपाइहै

कहिमै पितंबर अडंबर ते छूबकैरै सा
मवेद धुनि ध्रुनि ऊचे सुर गाइहै   स
क्षीये ज्ञ बात तरि सात मन क्रोधभये
फेर फेर मूढ वेद पारन सुनाइहै   वे
अष प्रचार स्तुतिचारको विचारकहो जी
वकाके हेत मूढ वेदनव ह्राइहै   १२
डौर टौरगयो ध्रुनि कौंन ऊसहन यो पि
ष बोल यो हंकार सुगलाव पहिचानि
ये नामनो संन्यास मांग भिछ्या विला
सकरे यही यती नाम लोक माहिनो
बषानिये   मूडनो मुडाये नाम पंडन
कहाये कछुगयान हूंन पाये कर वेद
भास ठानिये   कीनेहै व्याकल विदांन
के प्रकरण सभ आवतहै ह्रास स्रुहि आ
हि सुनि वानिये   प्रतषते विरुध अर
ष भाषत विदांन सभ येकही अषंड अर

प्र.चं. भा.टी. ६१

61

महसेरा नगायोहै ऐसे जो वेदांतशा
स्त्र मानत प्रमाण मूठ बडुधनके ग्रं
थनसें परायको नआयोहै सेवरा सं
न्यास कुध ग्रंथडो विदांत भिन्न भिन्न
नाम एक छलके चलायोहै इनहूंके
संगकुनि बोले महापापचडे ऐसे सुब
भाष पाउ अगे सडुहायोहै पेही सईव
पासपति आगम सर्सई वरन तास भस
मानन निभ समलगाइहै पस्हैं प्र
दंड लोक माहि सुपबंडकरे इनसो प्र
भाष नर नरक सजाइहै सईव पास
पतिके निहारे होइ पाप अति पेषपे स
नाहि इन ऐसे कुधिगाइहै गलाब सिं
ग देषकै हूंकारकी विसाल छवि लो
गनके पुंजि पुनि आगेही पलाइहै ॥ ७ ॥
भा.टीका घरजो वैदिकहै ग्रंथ निसेंसे रहि

तेहै केवल पठनमें ही लगेहैन अरु वे
दभ्रष्टीहै वेदकों डुबानेवालेहै फेर आ
गे जाइके अहंकारदेतेहै देषकर कहि
ताहै अरु जो संन्यासीहै भिक्षाके हेतथा
राहै जतीव्रत जिनोने अरु कैसेहैन मुंडे
है केस जिनोने अपने आपकों पंडितमा
नकरके वेदांतशास्त्र भ्रष्टकरतेहै इस
कारणते बडे पषंडीहै फेर हसकर कहि
ताहै प्रत्यक्षादि प्रमाणेण करके सिद्धजो
अर्थ तिसकों तिसने विरुद्ध जो स्वर्गा
दिक अर्थ तांको कहिन वाले जोहै वे
दांती तिनोका जो वेदांतभी शास्त्रहो
इ तो बीनेका अपराधकराहै जिसका
रणते इरुजोहै वेदांत शास्त्रमो परो
क्ष ब्रह्मका निरूपण करणहारेहै अ
रु वोइजोहै सो प्रत्यक्षवादीहै सो प्रत्य

प्र०चं
भा०टी०
६२
62

क्यों नही प्रमाण है इनो वेदांतीयोंके सा
थ जो वारता करणी सो वडे पापकों दे
नहारी है फेर आगे जाकरके देषकर
कहिता है इह जो हैं शैव पाशुपती ये
लेकरके दुषा करके अभ्यास करा है
न्यायशास्त्र जिनोने इह निश्चै करके प
शू हैं तथा पाषंडी है इनोके साथ संभा
षकरणेते लोक नरककों जावनगे
इह दृष्टीके सन्मुख नही चाहीये हर
करणेकों योग्य हैं न फेर आगे जाकर
के देषता है देषकर कहिता है इह जो
हैं दांभिक इनोने धनवाल्यांके धनहू
रे हैं इह बडा आश्चर्य है कैसे हैं दांभिक ॥ ७
मूल ॥ गंगातीर तरंग शीतलशिला
विन्यस्तभास्वद्बृषी संविष्टाः कुश मुष्टि
मंडित महा दंडाः करंडोज्ज्वलाः पर्याय

य ग्रथितानि सूत्र वलय प्रत्येकबीज
ग्रहे यथाग्रे गलधो हरंति धनिनो पु
न रन्यतो गत्वा पते च त्रिदंड व्यपदे।
श जीविनो हैताहैत मार्ग परिभ्रष्टाए।
व पुन रन्यतो गत्वा विलोक्य प्रये प्र
हो कश्चिदं द्वारे पतंति व्यानाति प्रांशु
वेश कांड नांड वित धौत सित सूक्ष्मां
बर सहस्र मित सतो विन्यस्त कुसुं
मित हृष्ट उपलव षालोल्लखिल भ्रमल
मन वरत कृताज्य गंधि धूम धूपामली
कृत गगन मंडल ममर मरितो नाति
हरतो विभात्या श्रमपदं नून मदः क
स्यापि गृह मेधिनो गृहं भविष्यति भ
वतु मुक्त मस्माक मति पवित्र मेतत्
हि त्रि दिवस निवासाय स्थानं प्रवेश
नाटयति विलोक्य प्रये ४

प्र वं
भाटी·
६३
63

कवित्त और ठौर गयो मुनि पेष मुसका
नो अति अहो वकध्यान पट उजल स
हाइहै गंग नीर धार तट शीतल सि
ला सिवार शोष शोष आप जस आसन
विछाइहै लप अषमाल मुष मंत्रन वि
सालज पैत्र गलके माहि जस मंडे वना
येहै येही दंभवंत धनवंतनके वित्तहरे
वीज मंत्र मासकर अंगुली हलाइहै ॥
सवैया हंकारतवै अतिपाइ उठाय च
ल्यो मुसकाइ पिषो जनआना हैकर
माहि त्रिदंडधरे मुष हूंत वके स्हलटे
अभिमाना दैवत स्हनाहि गहै डरमैं
मुनि नाहि अदेवनको रंचपछाना
पंषडमे इंद्रभृष्टभये भनिआश्रम और
पिषि मुसकाना किनको यह आश्रम
पावनहै छिगहारन उच स्हवंस गडाये

सुमनो तिनऊपर नाचतहै सित अंबर
पुंज हजार तनाए इतहै हंसा जिन सु
पसिला इतने चमसा बहुभांति सुहाये
रत मुसल ऊर सुऊषलहै इतकेसर कुंभ
सुवीन बनाये हूत होम सुगंध सुधूम
वडो तिन स्याम सभो नभ मंडलकेनो
यह गंग समीप सुआश्रमहै रिषि मोह स
भो श्रम होवतषीनो गृहमेध वडो धर्मा
त्मको तिनको यह आश्रम आदिनवीनो
सभलो यह आश्रम पावनहै दिन दोइ
सुनीन निवास रषीनो दोहा ऐसे धा
र हंकार डर वरषो वहे तिह माहि पुरु
ष निहारियो कतेहि रूप हने जेताहि ॥ ९ ॥
भाषटी गंगाजीके तटविषे तरंगो करके
सीतल जो शिला पथरहै तिनोपरस्याम
नकरीहैं श्रेष्ठ आसन तिनोपर वैठेहैं पुनः

प्र॰ वे॰
भा॰ टी॰
६४

64

पुनः कैसेहैंन दर्भमुष्टी करके सोभाइ मा
नहैं भुजा जिनकीयां अरु कैसेहैंन दर्भमु
ष्टी करके सोभाइमानहैं फेर कैसेहैं रुद्रा
क्षोंकी मालाकरके चंचलहैं अंगुलीयां
जिनोकीयां जपनेमें ऐसेही धूर्तोंने जगा
त ठगीहै फेर आगे जाकरके कहिताहै
इह जोहै त्रिदंडी त्रिदंडी क्या कहीये मौन
व्रत अरु कायादंड मनोदंड जो इन तीनो
व्रतोंको धारे सो त्रिदंडी कहीये इह कैसे
हैं त्रिदंड करके जीवणहारे हैं उभेभ्रष्टहैं उ
भेभ्रष्ट क्या वर्णाश्रमभ्रष्ट फेर अगाडी जा
करके देषताहै देषकर कहिताहै श्रीगंगा
जीके नजीक किसीका आश्रमपद सोभ
ताहै बडा आश्चर्यहै किसका आश्रमहै नि
श्चैकर किसी ग्रहस्थीका इह आश्रमहै
कैसाहै आश्रमद्वारके समीपवडाउवा जो

है वांस तिस विषे न्रत्तकरतेहैं स्वेतधोत

वस्त्रोका समूह जिसविषे ऐसा आश्रमहै

अरु इधर उधर स्थापनकरेहैं श्याम हर

णोंका चमडा मृगाजिन अर बरलइला

अरु चमस्पात्र अरु उलूखल तथा मुस

ल इहहैं जिस विषे अर निरंतर हवनहू

तकी जो सुगंधी धूम तिसकर स्याम होर

हाहै गगन मंडल जिसविषे अरु निरंत

र हवनहूतकी जो सुगंधी धूम तिसक

र स्याम होरहाहै गगनमंडल जिसविषे

ऐसा आश्रमहै इह हमको पवित्र अस्था

न होतीन निवास करणेको योगहै

अहंकारणे रंगस्थान विषे प्रवेशकरा

अंदरजाइकरकहिताहै क्या कहिताहै

इह जो प्रकषहै इस्थानकापती सोमेरे

को केवलदंभकी मूर्ती भासताहै कैसाप्र

प्र. वं.
भा. टी.
६५

65

मूल॥ मृद्विंडलांछित ललाटभुजोदरोरः
कंठोष्ठ पृष्ठ चिवुकोरु कपोलजात्रुः जू
डाग्रकर्णि कटि पाणि विराजमान दर्भां
कुरः स्फुरति मृत इवैषदंभः १० भव
तु उपसर्गमेघाने उपसहन्य कल्याणं भव
तो दंभोऽङ्कारेणैव नै वारयति ॥

सवैया॥ मृडलाछन तानन सुंदर है भ्रुति
बाल विषे वस चंदन लाप भुज ह्वै उदरे
उरकंठ उरू भ्रुति उदन चंदन टीक बना
पे हगजांउ कपोल सुपीठ विषे चिवुकी
बरू चंदन ठेक सुहापे ऊंस हूड कटे क
र काननमे सुमनो यह दंभर सोच मका
प सुभले श्रवणांहि समे पचलो इम धा
रचले मनसूध वनेरे छिगजार उठाइ
भले करको शुभ पेरू करी कल्यान सुनेरे
भ्रुति दंभ हुंकारकीये शुघने इमवारनहै

नहिंआउस्हेनेरे इतनेमहि आइगयो व
हु वालक वाह्मन वाक ह्नो तमभेरे॥ ॥२२॥
भा॰ मृत्तिकाके जो बिंदुहै तिलक तिसकर
के सोभाइमानहै ललाटभुजा अरु उदर
अरु वक्षस्थल कंठ अरु ओष्ठ अरु पृष्ठ अ
रुठोडी अरुउदर अरु कपोल अरु जानु
जिसके पुनः केसाग्ररूप मस्तकजोहै वो
दी अरुकर्ण अरु कटि अरु हाथ इना
अस्थानोविषे विराजमानहै दर्भ जिस
को इस्कारण दंभही भासताहै ९ इसके
समीपमे जाताहा जाइकर कहनेलगा
आशीर्वादहदीया कल्यानहोइ दंभ अहं
कारकरके तिसको दूर करना भया॥९॥
मूल॥ प्रविश्यवटुः ससंभ्रमे ब्रह्मन् हर
न एव स्थीयतां यतः पादौ प्रक्षाल्य यत
दाश्रमपदं प्रवेष्टव्यं॥

प्र० चं०
भा० टी०
५५

66

सवैया॥ दूरहि छाडि रहो दिज तू इह आस
सकी गति तोहि न जानी पाद पषालन
आइ करो कर भीतरि कुजल लेहु सुपानी
तौं इह आश्रम पांउ धरो इम कोन वरे बहु
पडु बषानी क्रोध भयो हंकार वडो इह भां
ति सुनी वहु की जब वानी ॥२३॥
भाषाटी०॥ इसी समे तिस दंभका शिष्य आ
नआमभया लगा कहने हे ब्राह्मण तूं दू
रदूर किस कारणते जो पैर धोइ कर इ
स्थानविषे आवना योग्य है ॥११॥
मूल॥ अहंकारः सक्रोधं आः पाप तुरुष्क
देशं आगताः स्मः यत्र श्रोत्रियान तिथीन्
आसन पाद्यादिभि रपि गृहिणो नोपति
ष्ठंति०

हंकार उवाच सवैया ह्यां विध कोन जु देस आ
ए जिहि देसन या विधि लोक वसे है को

विहलोक प्रसिध बडे हमसे जिन देसन
प्राथितं हैं आसन पाद जलं अरघा ति
नके हितना गिर ही उनिलेहै नाहि
लुहे जलमंडलको उार सदेह जाइ वसे हैं
भाषाटी० अहंकार क्रोधकरके कहिता है
हे पाप असी नर्कस्थानको प्राप्त भये
जिस अस्थान विषे वेदको जाननहारे
अतिथीयेंको अहल्लीलोक आसन पाद
लेकर पूजन नहीकरतेहै इसकारण
नरकीस्थानहै ॥ ॥ ॥ ॥
मूल॥ हेभः हम्स संज्ञया समाख्यासयानि
वइ एव माराध्य पादा आत्तापयंति ह
रदेशा दागतस्यार्थस्य कुलशीलादिकं न
सम्यगस्माकं विदितं अहंकारः आः क
थ मस्माक मपि कुलशीलादिक मिदानीं
परीक्षितव्यं श्रूयतां ॥

प्र॰चं॰
भा॰टी॰
६२

67

कविरुवाच ॥ दोहा ककौं मैनी दंभककौंनो
ना अस वास ॥ इहै मनावन थिररहो का
है भये उदास ॥ सवैया ॥ नव बोल उषो वटु
पढ़ कही गुर या विधिते द्विजकीन वषा
ना भइउ नव आवन हरहिते हमना कु
लसील सुतोष पछाना ॥ हनिकै इहबा
त हंकारवली अषवाषतहै उरमै अनमा
ना हमरे कुलसील परीषनके अब ला
रक मूढ़ सुतोष प्रभाना ॥ १२ ॥

भाषाटी॰ अहंकारके प्रती दंभ [illegible] शिष्यकी सा
रतकरके दिलासा देताहै तथा दंभका
शिष्य अहंकार प्रती कहिताहै किस प्रा
कारकरके साऊ कुल अरु शील सुभा
वादिक परीक्षा करणेको योग्यहै ॥ १२

मूल ॥ मोहंराष्ट्र मध्यनमें निरुपमा तथा
पि राष्ट्रपुरी भूति श्रेष्ठकनाम धाम पर

मे नयोनमोनः पिता नन्त्रजास्य महाऊ
लाजु विदिताः कस्यात्र नेषामपि श्रुता
शील विवेक धैर्य विनयाचारै रहंयोन
मः ॥ ॥
दोहा॥ सुन मूरष श्रब नो कहो गोइ प्रसि
ध सुदेस राठउरी प्रसिध नहि पेषतहु
रे कलेस ॥ कवित्त ॥ भूरि श्रेष्ठकनाम जनि
नाहिमैं प्रसिध धाम नाहि पतितान मम
लोकमे वषानेहै नाहिके सपूतहै सुपूत
ऊँऊलीनवडे देसन प्रसिध लोक लोक
माहि जानेहै तिनमे विवेक विनय धैरा
य अचार सील शुणा उदार ममको विद अ
भानेहै सोई हम आप विधि लोक कि धो
नयेभये भयो सुअचंभ जनमोहन पह्चा
नेहै ॥ २८ ॥
भाषाटी॰॥ अब सुण अरु अहंकार कहिनारे

प्र वे
भा टी.
६८

68

जो गौड़ हमारा देस श्रेष्ठ है तहा राजा हमारी
कुडीका नाम है तहां भूरी श्रेष्ठक नाम हमा
रा घर है तिस घर मो श्रेष्ठ हमारा पिता है
अरु तिसके पुत्र बडे कुलीन इस जगत
मो कौन है जो उमान नही जानता है अ
रु तिनो पुत्र मे भी बुद्धी करके अरु सील
स्वभाव करके अरु विवेक करके अरु धी
र्य करके अरु नम्रता करके अति श्रेष्ठ हं
~~दंभ वटु को देखता है वटु दंभ के अभिप्रा~~

मूल॥ दंभः वटुं पश्यति वटुः ताम्रखंडी
ग्रहीत्वा भगवन् पादशौचं विधीयतां॥

सवैया॥ ताम्रवटी वटु लै करमै पुनि कुज्ज
ल वारि सो हरि लायो ताम्र वटी कर लै
भगवंत करो पद षालन येउ अलायो॥

भाषाटी॰ दंभ वटु को देखता है वटु दंभ के
अभिप्राय को जानकर के तांबे की वाटर॰

ले करके कहिताहै अहंकारकों हे ब्र
ह्मण तुम पादशैणाचकरो ॥

मूल॥ अहंकारः स्वगतं भवतु कोविशेषः
एवं क्रियते तथा हत्वा सर्पति ॥

सवैया॥ हंकारकह्यो हम ऐव करे जग
काहूको नाहिं बने सुडघाघो धोइ कि
योउ हू आश्रममै वरने हितनादि स्वपा
उउठायो ३०॥

भाषाटी॰ अहंकार कहिताहै जो दंभपा
दशैणाचकरकेही समीप जाइ आमहो
वें जिस समे अहंकार दंभके समीप
जाइआमहूवा ॥

मूल॥ दंभः दंतान् पीडयित्वा हरे तावः
तष्टीयतां यतो वाता हताः अस्वेदक
णिकाः प्रसरंति ॥

सवैया॥ दंभतभैत्रनिदंत चवाइ चढाइ

प्र बं
भा टी.
६९

69

भये रुष पेड्र अलापे हरह्र पाउ गडाइ
रहे द्विजमूढकरहा छिग आवत धाये
तेतन सवैदकि विंड स्हनो पसरे इतने
उतवाउ चलाये ब्रह्मन अहरव पेड्र पि
षी अहंकार कस्यो मनमे भुनसाये

भाषाटी॰ इसी समे दंभदांत मथनकरके
कहनेलगा तहरहे जिसकारणते प
वनकरके उडाये होये जोहै असेवटविंह
मे मेरे समीप आनप्राप्त होजावनगे ॥ ११

मूल॥ अहंकारः अहो अहो असर्वमिदंबा
ह्मणं वटुः ब्रह्मन्नेव मेतत् तथाहि ॥
असह्य चरणा यस्य चूडामणि मरीचिभिः
नीराजयंति भूपालाः पाद पीठांत भूतले १२

दोहा॥ बडर वटु रुष बोलयो ब्रह्मन ३
सोहीहोहि उत्तम द्विज यालोकमे क
वि कवि कवि पेषो नाहि॥ १३॥ सवैया॥ भव।

भारत खंड महीप जिने पद पंकज नाहि
छुहे उरपाई पदकंज सिंहासन भूतल
के ठिग आन सभै निज मोल जकाई
मुकुट मणिकी समरीचिनके पद वारि
ज आरती दीपजगाय इनके ढिग जा
हिनि संक सनो मति भूलगये हिजने
गुनसाय ॥ १२ ॥
भाषाटी॰ अहंकारः वडा आश्चर्य है अपूर्व व
सकलदेष्याहै वहू अहंकारको कहै है
हे ब्रह्मण ऐसेही व्यवहार है सो अब वहू
कहिता है ॥ इस हमारे स्वामीजीके च
रणपीठके हेठविषे जो भूमी है तिसको
सारे राजालोक अपने शिरोमणीयोंके
किरणोंकरके आरती करते हैं कैसे रा
जेलोक है न चरणोंका स्पर्शभी जिनोने
नहीपायाहै १२ ॥

प्र वे भाटी. ७.

मूल॥ अहंकारः स्वगतं अये दंभयाशोयं देशः प्रकाशं भवत्वस्मिंनासने उपवि शामि तथा कर्तुं मिच्छति ॥

दोहा॥ स्वनि हंकार स्वमन विषे कीनाइ है विचार मनो स्वयाही देसमें दंभलयो अवतार॥ दोहा॥ भवत्व तथा इह आसनेमें अवकरो निवास उह निवाये ताहिने आ सन वैठ तनआस ३५

भाषाटी॰ अहंकार अपने मनविषे चिंतन करताहै इह जो देसहै सो दंभकरके ग्रहणकरणे योग्यहै अच्छाहै जो इसी आ सनविषे हमभी वैठजाउगा॥ ॥॥

मूल॥ वटुः नैव माराध्य पादाना मासन मस्मे राक्रम्यते

दोहा॥ मैवं मैवं बोल वटू उचे कीनप्र काश आराध पाद आसन इहै ऊरनकरे निवास

भाषाटी॰ वदुकहेहै जिनांके चरण से वाकरण योग्यहै ऐसे स्वामीजीका आसन अरु पुरुषोंके वेदना योग्य नहीहै ॥ ॥

मूल॥ अहंकारः आः पाप अस्माभि र पि दक्षिणगाथा प्रसिद्ध विशुद्धिभि रिद मासन मनाक्रमणीयं श्रृणु हेमूर्ख ए नास्माकं जननी नयो ज्वलकुला सच्छो त्रियाणांकुल हेतोकावन कन्यका ए लमया तेनासितानाधिकः अस्मत श्यालक मित्र मातुलसुता मिथ्याभि शस्तापन स्तत्संपर्क वशान्मयास्वगृ हिणी प्रेयस्य पित्रोक्तिना॥ ४॥

सवैया॥ नविवेलहंकार सपेड्करहै मन भीतरकोप भयो अति गाथा दक्षणदे स प्रसिध तिन भीतर सुधपरी इक

राता सुनहो तिनमाहि प्रसिध वध
यो गुरुके कुलवासकयो अति पाता
हम जौनहि आसन लाइकैहै कहुतै
गुरको वसुतेकाता सुन मूरष का
न भले धर्यो इक ठौर प्रसिध कहो
नववाता द्विजको विद लोक प्रसिध
वडी सुवरी तिनकी डुहिता विख्याता
कुल उज्जल जान मरालनकी तिनकी
समनाहि अहे ममताता तिसके हम
लोकन माहि वडे हमरे समनाहि अहे
ममताता मम सालिक मित्र सुमा
वलकी डुहिता एकठौर भली जग।
गाई तिनकी विभचारकी झूठकथा
सठ लोक किने जगमाहि अलाई ति
नके निजमाहि संबंधपिषे मनताहि
समे अतिसै अनसाई निज नारि मनो

गतजी षिनमै सुन मूढ वटु वरना
श्रिटिकाई ॥४४॥ ४ इस्ली सिलिवना
भाषाटी॰॥ अहंकार कहेहै अरे पापी द
क्षिण देशविषैभी हम प्रसिद्ध कुली
वाले हो हमको इह आसन बैठनयो
ग्यनहीहै अरे मूढ असां लोकांदा मा
हात्म्य तू सुण १२ अरे वटोजो हमारी
सोतैसे उज्वल कुलकी नहीथी परंतु
हमने साधुजो हैन वेदपाटी जो ब्रह्म
ण तिनोंके कुलते सुशील कन्या ब्या
हीदीहै इसी कारणते मै अपने पितासे
भीवडाहों अरु फेरभी महात्मा सुण
हमारे सालेका कोई मित्रथा उसकाजो
मामाथा उसकी कन्याकों दुष्टपुरुषों
ने झूटी निंद्या करीथी उसी संबंध का
रणते मैने बहुतप्यारीभी अपनी भार्या

त्यागदिईहै ऐसा हमारा महाक्रमहै ॥

मूल॥ दंभः ब्रह्मन् यद्यप्येवं तथाप्यस्मा
क मविदित ह्ललांतो भवान् तथाहि
मदन शपममेतोइहं पूर्वमंभोजयोनेः स
पदि मुनिमिकह्वे शसने कुपितेश्व स
शपथ मनुनीय ब्रह्मणा गोमयांभ प
रि मृजति निजोवा वाश्व सं वेशितोस्मि॥ ॥२९॥

सवैया॥ सुनिकै यह बात सुदंभ वली
मनभीतर प्रीति सैं धुनसाने द्विजत्तू
निज उजलता अपनी जग भीतर या
विधि मोहवखाने सुन मोह महात्म।
लोकनमैं द्विज राहन नोह सुरंच पछा
ने कछुश्राहि अहवै उजलता मम भी
तर सोचतुरानन जाने हम एक समै
विध लोक गये मुनि मो पिषभ्रासनते
नउठाये इह ठौर वसा मुनि विंदकरे

वहु आसन नाहमरे मनआवे विधआ
प सुगंधकरे सुषते पुनि गोवरसो नि
ज जाउ लिपावे कर जोर भली विध
के तिन उपरि मोहु विरंच विठावे ॥१९
भाषाटी॰ दंभकरेहैं जटभी ऐसा तेहै तो
भी हमलोकोंका हुन्नांत बहुतकरके
तैने नही जानलीयाहै अब हमारा म
हात्म सुण १५ मे पूर्वकालविषे एक
दिन ब्रह्माही सभामे गयाथा जिसवे
लेमें उहा श्रामभया उसी वेले सबमु
नीश्वरोने उचे उचे आप न त्यागदीये॰
थे इस्से उप्रांत ब्रह्माने गोमूत्र करके
अपने पड शुद्ध करेथे उसी विषे मेरे
को ब्रह्मा वहुत याचनाकरके वैठा
वता भया ऐसा हमारा महातमहे

॥१९॥ ॥१९॥

प्र॰ चं
भा॰टी
७३

73

मूल॥ अहंकारः स्वगतं अहो दांभिक
ब्राह्मणस्यात्मश्लाघा किंचित्
अथवा दंभस्यैव भवत्येवं तावत् सक्रोधं प्रकाशं आः किमेवं गर्वायसे अरे कपटवासवः कथय कोऽत्र परोऽस्ति वद प्रभव
भ्रमयो जगति काऽस्त्री पुण्यमपि अवेहि तपसा बले मम पुरंदराणां शतं शतं च परमेष्ठिनां पततां वा मुनीनां शतं

दोहा॥ वहर हंकार सबोलयो दांभिक
ब्राह्मणमान कहि विरंच पुन नर कहो कीनो कृदि वषान अथवा यह दिज दंभहै ताही कौन उचार ऐसे मने विचारकर भयो क्रोधहंकार॥ ४२

सवैया॥ कौन सुरे सुरको विधिहै दिब
कौन सुनो किहते उपजाये मे तप॰
को फलजानतो सुन वामन तें मनमें

गरवाये कोटिहरे सुविरंच मुनीपद पंकज मोहपरे डरपाये रिषकी उत्पतिकी भूमिकही सुश्रानन माहि सुनो मनुलाये रिष स्रृंग मृगी जस कौसक जो गजनी ह सुना मलजू उपजाये वारिवध सव सिसटिजपे उहिना मुनि कीवर वास उपाये सुसिनारि विषे रिष गौतमजू मुनि मांडव मेंडकौत निकसाये तनयो सुचंडाल परासर जू रिष और मतंग मतंगनी जाये ॥ ॥ ॥

भाषाटी॰॥ अहंकार इस वचनको सुनकर अपने मनविषे चिंतन करताहै वडा आश्चर्यहै कैसा इस दांभिक ब्राह्मणका सर्वजनोंको उलंघन करणेवाला वचनहै अहंकार फेरभी मन

प्र.वं. भा.टी. ७४

74

विषे चिंतन करताहै इंद्र साक्षात् दंभ होणाहै होवे तोभी क्याडरहै अहंका
र क्रोधपूर्वक प्रकटकरके कहताहै
अरे पापी क्या तूं बडा अहंकारकरता
है फेरभी हमारा महात्मसुण इंद्र
जो इंद्रहै सोभी कोई सूक्ष्मजीवहै तूं
कहै सोभी इंद्रमेरेते क्याहै अरु इंद्र
जो ब्रह्माहै सोभी मेरेते क्याहै अरु
इंद्रजो ऋषीयोंके जन्मका कारण
मुनीश्वरहैं सोभी मेरेते क्याहैं
अर सुण हमारे तपका बल मेरे तप
के बलते अनेक इंद्रभी अनेक ब्रह्मा
भी अरु अनेक मुनीश्वरभी हिंगपरन
गे ऐसा हमारे तपका बलहै ॥
मूल ॥ दंभः विलोक्य सानंदं अयं आ
र्य पिता महोऽस्माकं अहंकारः आर्य

लोभात्मजोहं भोः अभिवादये ॥
सवैया तब दंभ विलोक अनंद भयो य
ह अरथ मोहि पितामहि आवे नाम
हंकारकहे जिनको इन पेषनजे मनमे
थिगमावे अर्थ लोभको मै सुतहो म
म दंभकहे तब लागत पाए ॥
भाषाटी॰ दंभ इदर उदर द्दष्टिको पाइके
अनंदकरके कहताहै क्या कहताहै
जानने मै मेरेको आवताहै इह पुरुष
हमारे कुलविषे बडा हमारा पिताम
ह अहंकार होएगाहै दंभ उठकरके च
रणको पकडकरके कहताहै हे स्वा
मीजी लोभका पुत्र दंभहो तमको
चरणवंदना करताहो ॥
मूल ॥ अहंकारः वत्स आयुष्मान् भ
व वालः खल्वासीः मया द्वापरांतेद्दष्टः

प्र वे भा टी॰ ७५

75

संप्रतिचिरकाल विप्रकर्षात् वार्द्धक ग्रस्ततयाच न सम्यक् प्रत्यभि जानामि प्रथत्वत् कुमारस्या त्वतस्य कुशले॥

सवैया॥ हंकार धरयो सिर स्यानितवे सु त दीरघ आउ वडे सुष पाये हाकुरि ग्रंतमोह पिषे तब वालकुते तुम ग्रंग मलाने काल वितीतभयो बहुतो सु तयो जगमैं हमहै सुहृदाने नैननमें द सुदीर भए यहकारणते सुतनाहि पछाने आज ग्रनंदभयो पिषते सभ ग्रंगनमो तुमको विलकाने तव ग्रा हि कुमार सुकृद वडो कहो ग्रानंद सो जग भीतर सोई॥ ग्रहंकारकहिताहै

भाषाटी॥ हे पुत्र तूं ग्राप्रवल वाला होउ पूर्वकालविषे एक दिन ब्रह्माही सभा में गयाथा जिसवेलेमें उहां ग्रामभया उ

द्वापरयुगके अंतविषे मैने तुं बालक देख्याथ्या अब इस वेले चिरकाल होए ते अरु मेरेको वृद्ध अवस्थाने ग्रसकी ना होएतेभी अछे प्रकार करके तु मको मैनही पछाननाहों अब तुम को मै पूछताहों तुमारा कूट तिस कों क्या कल्याणहै ॥

मूल॥ दंभः नहि तेन विना मुहूर्त मप्यहं जीवामि अद्य किं सोप्यत्रैव महामोहस्याज्ञया वर्तते ॥

सवैया॥ तब दंभ कह्यो इह ठौर वसे वितु ताहिन मे जग जीवन होई

भाषाटी॥ दंभ कहतभया सो हमारा पुत्र कूटभी इहांहीहै तिसते विनामै खिनमात्रभी नही रह सकताहों

मूल॥ अद्य तव माता पितरौ तृष्णा लोभा

वपि स ऊषालौ
सवैया॥ नवि मात पिता बिशना पुनि लो
भकहो सखसो जगभीतर दोई॥
भाषाटी॰॥ अहंकार कहे है हे पुत्र तेरा पि
ता जो लोभ है अरु तेरी माई जो तृसा
है सो दोइ जने का कल्याण वाले हैन
मूल॥ तावप्यत्रैव वर्तेते नयोर्विना क्षण
मपि न तिष्ठामि आर्य मित्रैः पुनरत्र के
न प्रयोजनेन प्रमादः कृतः॥
पुनि दंभ कह्यो महामोह की आइ सुपाइ
वसे इह ठौर सुउई आप कहो किह कार
ण इह ठौर प्रमाद कीयो तुम आए॥
भाषाटी॰॥ दंभ कहे है सो दोइ जने भी इहां
ही हैन हे पितामहा मै तिनों दोनों से
विना किसतरह रह सकता था सो दोनो जने भी
मेरे से विना किसतरों रह सकते थे इह बा

न आपजानतेहो ॥
मूल अहंकारः वत्स मया मोहस्य विवे
क सकाशा दत्याहितं श्रुतं तेन तद्धंतो
तं अन्वेषु मागतोस्मि
सवैया॥ हंकार कह्यो सुन मोह महीप
को गोप संदेस सुहै हमल्यावे आहित
नांहि विवेक हुते निज कान सुने सभ
लोक प्रलाप ताहुतांन सुना वनके हि
त आवन मोह भयो समझाये
भाषाटी॥ अहंकार कहैहै हे पुत्र हमारा
बड़ा राजा जो महामोह है उस्का मैंने वि
वेक राजेते बड़ाभय सुणा है तिसी का
रणकरके तिस महामोह राजेके हनं
तको सुणने वास्ते तेरे पास मैं आनशा
मेहोयाहों ॥
मूल॥ दंभः तर्हि स्वागत मेवार्यस्य यतोम

प्र॰ चं॰
भा॰ टी॰
७७

हाराजस्यापि इंद्रलोका दागमने श्रूयते
अस्ति च किंवदंती यहेवन वाराणसी
नामनगरी राजधानी निरूपितेति
सवैया॥ तब दंभ कह्यो सुष संग अपे
तव पेषनते ममदेह सिरानी मोहम
हीप सिरोमणि जु शिवकी नगरी सुट
टी रजधानी मोह महीप सु आहि इ
हां सुरलोकहुथे जन पड़ वषानी स॰
भलोककहै सुष पंकजमे मम आप सु
नी यह वाति सकानी ॥५०॥
भाषाटी॰॥ दंभकहेहै हे पितामहजी जद
इसीवास्ते आप आयेहो जद आपका आ
उणा इसवेले सफलहोयाहै जिसकार
णते हमनेभी महामोहका इंद्रलोकते
आउणा श्रवणकराहै हे पितामहजी ऐ
सी वार्ता हमसुणीहै राजामहामोहणे

वाराणसी जो काशीहै सोई अपनी
राजनगरी वैठन योग्य निश्चैकरीहै॥
मूल॥ अहंकारः किंपुनः कारणं वा
राणस्यां सर्वात्मना महामोहस्याव
स्थाने॥
सवैया॥ हंकारकह्यो किह कारणते
वरलोकपती इह ठौर वसाये
भाषाटी॰ अहंकार कहिताहै हे पुत्र म
हामोह राजेको काशीनगरी विषे वै
ठनका क्या कारणहै॥
मूल॥ दंभः आर्य नत्रु विवेकोपरोध
एव तथाहि विद्या प्रवोधोदयजन्म
भूमि वाराणसी ब्रह्मपुरी निरत्यया
अतः कुलछेद विधिं विधित्सु निव
त्त मत्र कृति नित्य मेव॥ १८
सवैया॥ दंभकह्यो इह कारणहै सवि

प्र॰ चं॰
भा॰टी॰
७८
78

वेक कहूं जग होनन पावे बोध उदे
यह भूम बनारस वेदपुरान रहै सुख
गावे ऊलनासिक बोध निवारण
कौं इह ठौर निवासस्तु मोह दृढावे

भाषाटी॰ दंभ प्रति उत्तर देता है हे पिता
महाजी सारे प्रकारों करके विवेक॰
का हटाउणा कारण है हे पितामहा
जी इह बात तुम सुणो इह जो का
शीनामा नगरी है सो ब्रह्मपुरी है के
सी है विद्याकया कही है ब्रह्माकार अं
तःकरण की वृत्ती प्रबोध कया कहीये
ब्रह्माकार अंतःकरण वृत्ती के उपा
धि वाला चैतन्य इन्हां दोनेके उत्पत्ती
का अस्थान है अरु कैसी है अविनाशी
है इसी कारण ते महामोह इस काशी
विषेही निवास करणे को चाहता है

कैसाहै महामोहराज एकजो विद्या
है अरुजो प्रबोधहै उन्हा दोनोका
नाशकरणेकी इछावालाहै १८

मूल॥ अहंकारः सभयं यद्येव मशक्य
प्रतीकार एवाय मर्थः यतः १९ परम
मविद्धांपदे नराणां प्ररविजयी करु
णाविधेयचेताः कथयति भगवानिहां
तकाले भव भयकातर तारकं प्रबोधं॥२०

सवैया॥ हंकार डरे सुनि वात इहै शिव
के प्ररबोधसु कौन मिटावे तिन ठौर
वसे सभ जीव जिते सुष सो शिव ता
हिके बंध छुडावे अंतसमे करुणा क
रिकै सभकानन तारकमंत्र सुनावे
सभपाप मिटे शिव पेषनते छिन भीत
र जीवन वोध उपावे २०

भाषाटी०॥ अहंकार कहेहै हे प्रत्र जद ३

प्र॰वं
भा॰टी
७५
79

इही प्रयोजनहै तो इह प्रयोजन नही
होसकताहै जिसकारणते इस का
शी नगरीविषे परमपद जो ब्रह्म
पदहै तिसको नही जाननहारे जो
हैन अज्ञानीजन उनको शिवनाथ
भगवान् अंतकालविषे ज्ञान कहता
है कैसाहै शिवनाथ भगवान् दया
करके वशहोया चित्त जिसदा ऐसा
है कैसा ज्ञानकहताहै संसारके भ
यके डरते जो पुरुष उन्हाको तारणे
वालाहै ॥२०॥

मूल॥ दंभः सत्यमेतत्तथापि नैतत्काम
क्रोधादिभि र्भूतानां संभाव्यते तथाप्यु
दाहरंति नैर्थिकाः ॥२१॥

सवैया॥ तव दंभकह्यो इह बात सही
पकह्यो वतन सभ जीव मझारा तिन

कौनहू बोध कदाचित्नहै जिनके उर
कामरु क्रोधविकारा॥ ~~जिनके करणा~~
~~दू मनो बसहै नप~~
भाषाटी॥ इसी कारणते जाननेमे आउता
है महामोह राजेका प्रयोजनजोहै सो
कष्टकरके होने योग्यहै दंभकहिता
है हे पितामहा सचीईहै परंतु तदा
भी शिवजी सच्चिदानंद वाक्यार्थरूप
को प्रगट करताहै तोभी कामक्रोधा
दिकोंकरके जिते होये जोहैन अज्ञानि
पुरुष उन्होंको इह ज्ञान चेतनेमे नही
आउताहै नैष्ठिक जो वेदजाननवालेहैं
सो ऐसावचन कहतेहैं सो वचन तुसी
श्रवणकरो॥२१॥
मूल॥ यस्य हस्तौ च पादौ च मनश्चैव
सुसंयतं विद्या तपश्च कीर्तिश्च स तीर्थ

प्र० चं०
भा० टी०
८०

फल मश्नुते ॥ २२ ॥ नेपथ्ये भो भो जनाः प
ष खेलु संप्राप्तो देवो महामोहः तेन ॥ २३ ॥
सवैया ॥ जिनके करपाद मनो वस हैं तप
कीरत सो जगहै उज्यारा वहतीर्थको
पावतहै यह भारत और पुरान उचारा
दोहा ॥ वेनपाणि आपे तवै ऊंचक पाग
अनूप नागर जन आयो सुनो महामो
ह जगभूप ॥ २३ ॥
भाषाटी० ॥ जिस पुरुषके दो हाथ दो पैर
अरु मन शुद्ध होनगे अरु विद्या तपकी
र्तीभी जिस पुरुषको होइगी सोई पुरु
ष तीर्थकाफल पाउताहै ॥ २२ ॥ इसीकार
णते हे पितामहाजी काशीभी अज्ञानी
जनोंको क्या करेगी रंगभूमिके बाहर
स्थानविषे अवाज आउणलगी हे लोको
राजा महामोह आनप्राप्तभया तिसीका

मूल॥ निष्यंदै श्चंदनानां स्फटिक मणि शिलाः वेदिकाः संक्रियंतां मोच्यंतां ये त्रमार्गाः प्रसरतु परितो वारिधारा गृ हेषु उच्छ्रीयंतां समंतात्स्फुरदुरु मणयः श्रेणय स्तोरणानां धूप्यंतां सौधमूर्धस्व मर पति धनु र्धामचिन्हाः पताकाः ॥२४॥

सवैया॥ चंदनको छिटकाव करो मणि फाटक हेम सुवेद बनावो जलजेत्र सुभे गृह षाल दिजे तिन भीतर अंग सु गंध मिलावो सभ द्वारन वंध निवार क सो गज मोतन हारलडी लटकावो शक्र सरासन चिन्ह धुजा सभ सौधनके सिरमाहि फुलावो॥२४॥

भाषाटी०॥ हे लोको तुसी स्फटिकके शि लोंकरके बनाये जो सिंहासनहैं उनोंर कों चंदनोंके जलोंकर शुद्धकरो अरु फ

प्र०चं० भा०टी० ८२

हारेभी छुडाइ अरु चरोंविषेभी चारोतर
फधारा जलकी चलाइ अरु दरवाजेयों
की जो पंक्ती सोभी खुलीकरो अरु कै
साहै भवन चारोतरफ रत्नाकरके शो
भायमानहै अरु राज चरोंविषे पताका
भी कंपायमानकरो कैसीयाहैं इंद्र
धनुजैसे चित्रहैं ॥२४॥

मूल॥ दंभः प्राप्यप्रत्यासन्नो महाराजः न
न्यत्युद्गमनेन संभावन मार्येण

कवित्त॥ फेर दंभ कह्यो महाराजहै समी
प आयवालीप आगरी सनमान अतिकी
जिये ॥ ॥

भाषाटी०॥ दंभकहतभया हे पितामह
इह महाराजा महामोह निकटआयाहो
गा तिसी कारणते आगे जावने करके
महामोह राजेको मानकरो ॥॥

मूल॥ अहंकारः एवं भवत्विति निष्क्रांतौ
प्रवेशकः ततः प्रविशति महामोहः
विभवतश्च परिवारः महामोहः विहस्य
अहो निरंकुशा जडधियः तथाहि २५
आत्मास्ति देहाद्व्यतिरिक्तमूर्त्ति र्भोक्ता स
लोकांतरितः फलानां आशेयमाकाश
तरोः प्रसूना त्प्रथीयसी स्वादुफलप्रसू
तौ॥२६॥ इदंच स्वकपोलकल्पना विनि
र्मित पदार्थावष्टंभेन जगदेते दुर्विदग्धै
र्वंच्यते तथाहि॥२७॥

कवित्त॥ कह्योहै हंकार तुम भलोही उचा
र कीयोहू जिये तयो रह्य उपाइनको दी
जिये जाइके उपायन स्वपाइनके माहि
धरी जोरकर कह्यो सबनारस पियोजि
ये आये महामोह भूप पुरमे प्रवीसकी
यो वैभव विभूति परवारसो सहीजिये

प्र॰ चं॰ भा॰ टी॰ ८२

महामोह भूपका अनूप पिषहूमे अतिअ
हे जड बुधि सभलोक बोरानेहै लोक
परलोक माहि भोगन सुष देहते विभि
न्न मूढ आतमा वषानेहै आकाश तरु
फलट विसाल फल आसकरे कहो नभ
फलहूंको साद किन जानेहै भेषे षोटे
पंडत षंड सबलापे जग बोलसु कपोल
लोक सगले ठगानेहै ॥२७॥
भाषाटी॰॥ अहंकार कहेहै ऐसे हीहोवे ऐ
सावचन कहि करके दोई दंभ अरु अहं
कारभी निकलगये इतिविष्कंभकः ति
सते उपरांत महामोह राजा रंगभूमी विषे
प्रवेशकरताभया अरु महामोह राजेकी
वडी सभाभी प्रवेशकरतीभई महामोहरा
जा हसकरके अपने सभा लोकोंको कह
ता भया क्या कहता भया वडा आश्चर्यहै इ

ह निश्चै जो है जड बुद्धीवाले आस्तिकलो
क सो कैसा बकवाद करते हैं क्या बक
वाद करते हैं २५ आत्मा ऐसा नामवा-
ला के ई पदारथ है सो कैसा है देह विषे
होनेवाला भी जद है तो भी देह ते भिन्न
है अरु कैसा है इस लोक विषे कीये जो
कर्म है उसका फल अरु देह विषे भो
गनेवाला है हे लोका इह बात तसी ह
ोग जैसे किसी मूर्ख पुरुष की आका
शाका जो वृक्ष है उसके जो पुष्प है त
उनोसे मिठे फलोंकी चाह है तैसे इ
ह आस्तिक पुरुषोंका आशा मात्र है
अथवा आकाश वृक्ष ते भी फल खाई ते
इह बात बडे हासे वाली है २६ इह बड़ा
खेद है क्या इह जो उद्धीवाले आस्ति
कजन है सो अपने कल्पना मात्र करके

63

ठहराये जो हैंन पदारथ उनोंके अंगी-
कार करणेते इस जगतको ठगलेते हैं॥ २२
मूल॥ यत्रास्येव न दृष्टि वस्ति तिमृषा
जल्पन्निरेवास्तिकै र्वाचालैर्वहुभिस्त
सत्य वचसो निंद्याः कृता नास्तिकाः
हंहो पश्यत तत्त्वतो यदि गुन. च्छिन्नाद
नो वक्षिणो दृष्टः किं परिणाममधूषित
वितिजीवः पृथक्कैरपि २२
कवित्त॥ जोई जगमांहि नाहि वसतकों
लखाहिकहै भयेहै वचाल वाक मृषा
वेदमानीई चारवाकनके वाक सत
नाहिको असतकहै भये मृतलोकता
हि निंदाकों वषानई अहोतत्वसार
को विचार तुम आपकरो काटे ततसी
स हगवाही उर हानिई ततने निग्रहे
जो पधारे जीव पिषे कोई नवी नव भिं

न यह आतम सजानिई ॥ २७॥
भाषाटी०॥ जो आत्मा नामवाला पदारथ
है सो नेत्रा करकेभी नही देष्याहै अरु
कर्णो करकेभी न सुण्याहै अरु मनक
रकेभी नही जानने आवताहै सो पदार
थ कोईभी नहीहै इह जो आस्तिक लोक
बडे बकवाद करणे वाले मूर्खलोकोके
चेलेहैं सो झूठी आपनी जबानी करके
आत्मा नामवाला कोई पदारथ ठहराउं
तेहैं अरु सचिवचन कहनेवाले जो नास्ति
कलोकहै उनोकोभी निंद्या करतेहै हे
लोको तुमी येह देषो इस शरीरको छे
दकके किसी पुरुषने कोई जीवनामवा
ला पदार्थ चेतन क्या कदाचित् देष्याहै
हे लोको इह जो शरीरोंविषे चेतनता
होतीहै ॥ २७॥

प्र॰ चं॰
भा॰ टी॰
८४

84

मूल॥ अपिच केवलं जगदात्मैव तावद
मीभिर्वंच्यते तथाहि त्वत्पत्व वपुषो
ज्ञत्वाद्य वयवैर्व्यतिक्रमः कीदृशः स्त्री
वेषं ममवा परस्य यदसु भेदं न विद्याव
यं हिंसाया मथवा यथेष्ट गमने स्त्री।
णां परस्वस्पृहे कार्याकार्यकथा स्तथा
पि यदमी निःपौरुषाः कुर्वते ॥ २९॥

कवित्त॥ लोगनको वंचि पुनि वंचियो
निजातमको शीत जल नाइ हूत आ
तम तपाइहै नाक मुख पद पान देह
है समान सभ मनमें न आइ करम व
रनको बताइहै आपनी पराई नारि
संपदा बताई ऋति नाहि हम जाने स
दभेदको भुलाइहै नारि धन भोग पुं
नि पापको विभाग घर आपनो पराये
बल होन मुख गायहै ॥२९॥ ॥

भाषाटी॰ इसका वृत्तांत मेरेते सुणउ जैसे पुष्प फल पत्र तृण इत्यादिक पदार्थों के मध्यविषे एकवस्तु करके रागनही उत्पन्नहोताहै पर मिलेहोये इनोंपदार्थोंकरके राग उत्पन्न होताहै तैसे पृथ्वी जल वायु जोहैन सोभी मिलकरके शरीरभावको पाइके चेतनतावाले होते हैंन अरु इहभी हे लोको तुसी सुणउ इह जो अस्तिक लोकहैंन सो केवल जगतकोई ठगलेतेहैंन अरु आपकोभी ठगलेतेहैं सो देषो इह जो शरीरहै सो सर्वलोकोंको श्रवनेत्र कर्ण हाथ पैर इत्यादिक अंगोकरके समानहैं तिनों शरीरों विषे जो ब्राह्मण क्षत्री वैश्यशूद्र इत्यादिक भेदहै सो कैसाहै इह नही जानने आउताहै अस्तीयोंके विषे जो भे

नही४

प्र॰ वे॰
भा॰ टी॰
८५

85

दहै इह हमारीहै इह पराई इस्त्रीहै ऐ
से भेदको हम लोक नही जानतेहैं हे
लोको इह बात तुम सुणो हिंसाविषे
अरु आपनी इछा करके चलनेविषे
अरु इस्त्रियो के ग्रहण करणविषेभी
जो शंका करणीहै सो अशक्तिवाले
लोकोंके कामहै पुरुषकार वाले लो
क इस शंकाको नही करतेहैं ॥ २४ ॥
मूल॥ विचिंत्य सस्त्रांच्छं सर्वथा लोकाय
तमेव शास्त्रं यत्र प्रमाणं प्रत्यक्षमेवावा
घाकाशानलवाति अर्थकामौ पुरुषा
र्थौ भूतान्येव चेतयंते नास्ति परलोकः
मृत्युरेवापवर्ग इति तदे तदस्माभि श्रा
यात्रेराधिना वाचस्पतिना शलीय चार्वा
काय समर्पित मासीत् तेनच शिष्यद्वा
रेणास्मिन् लोके बहुलीकृतं तंत्रं ततः

प्रविशति चार्वाकः शिष्यश्च चार्वाकः
वत्स जानासि दंडनीति रेव विद्या अत्रै
व वार्त्तांतं भवति धूर्त्तप्रलापस्त्रयी पश्
य ॥ ॥
कवित्त ॥ आतम शरीर यहु धीर चारवा
क कहै आगम प्रमाण एक नाहिको
ऊलेषिये भूमि जल तेज वाइ तत्वसो
बताइदये जाहिमें प्रमाण प्रतष पे
क पेषिये नारिनको भोग और द्रवको
संजोगजोई यही सुषसदा रषन और
कछु देषिये चेतन सुभूतहोई नाहि
परलोककोई मोष विन मृत और ह
मरो न वेषिये ९. यही मनधार सुष
घते विचारकीयो उत्तम सिधांत चार
वाकको पढायो है चारवाक सिषन
यसिषन पढाइ यहु यही सासिधांत ।

प्र॰ चं
भा टी॰
८९

लोक भीतर चलायोहै ऐसे सुन चार
वाक सिषलीये पेषत समाजराजस
भा माहि आयोहै सिषको बुलाइ सम
जाइ वात पेड़ कही दंड नीति विदि
यान डौर कछु गायोहै सिषउवाच ॥
दोहा॥ वेदत्रयी उर पेसहुन विद्याक
है उदार वेदनसो करयो जगपावे
स्वरग अपार॥३०॥
भाषाटी॰॥ महामोह राजा मन विषै चिंत
नकरके प्रकटकरके कहिताहै हेलो
क तुम इह वात सुणो सारे प्रकारों
करके चार्वाक मत जोहै सोई शास्त्र
है जिस विषै प्रत्यक्ष जोहै सोई प्रमा
णहै पृथी जल तेजो वायु जोहैन इह
हीं चारतत्वहैं अर्थ अरु कामजोहै
सोइ दो पुरुषार्थहैन चारतत्वजोहैं।

सोई मिलनेसे स्वभावकरके चेतना
वाले होते हैं परलोक जो है सो कूठ
है अरु मरणजोहै सोई मुक्तीहै ऐ
सा शास्त्र हमारे मनबलको पिछे चल
ने वाले बृहस्पति नामा देवोंके गुरूने
रचकर्के चार्वाक नामे हमारे मित्रके
ताई दियाथा तिस चार्वाकने शिष्या
के द्वारकरके इह शास्त्र इहलोकविषे
बडा विस्तारवालाकीयाहै तिसते उ
परांत चार्वाक शिष्योंके साथ प्रवेश
करके राजसभाविषे एकांत सभावि
षे बैठरहताभया चार्वाक अपनेशि
ष्योंको कहताहै हे शिष्यो मे ऐसाजान
ताहों एक जो राजनीतीहै अरु जो जी
वनेके वास्ते शिल्पहै इहही दो विद्या
हैं इह जो तीनवेदहै इह ठगलोकोंका

प्र.चं भा.टी. ८०

वकवाद करते है ॥ ३० ॥

मूल ॥ स्वर्गःकर्तृ क्रिया द्रव्य विनाशे यदि यज्वनां ततो दावाग्नि दग्धानां फलं स्याद्भूरि भूरुहां ३१ निहतस्य पशोर्यज्ञे स्वर्गप्राप्ति र्यदिष्यते स्वपिता य जमानेन किंनतस्मान्निहन्यते ॥ ३२ ॥

वारवाक उवाच ॥ सवैया ॥ धूरत को परला प कहे नो यह वेदत्रयी जगमाहि बखा नी याचगयग हव्य विनास भये सुरलोक जिवावत प्रानी तौं दव दाह दहे द्रुमजे फल भूरि रहे वह रीत समा नी हैन कछु सक बोलक री धनवं चनके हित एक कहानी ॥ दोहा ॥ स्वर्ग लहै पशु वानते जब जगकारक चेत तौ निजजनक जर यज्ञके यानकरे ति स हेत ३२ ॥

भाषाटी०॥ हे शिष्य इस तें देष इह जो ज
स्र करणेवाले पुरुष हैं उह्नाकों अरु ज
लकों अरु जन्तव्यांकोंभी नाश होके
भी जद स्वर्ग होवेगा तद वनविषे द
ग्ध होइ जो वृक्ष हैं उह्नांकोंभी फल
वहुत होनाथा ३१ अरुभी इस तें देष
मृतहोइ जो जीव हैं उह्नांको जद श्रा
द्ध तृप्तिकरणेवाला होनाथा तद शांत
होय दीपककोंभी तैल ज्वालाकों ल
गावनाथा ३२

मूल॥ अपिच मृतानामपि जंतूनां श्रा
द्धं चेत्तृप्तिकारणं निर्वाणस्य प्रदीप
स्य स्नेहः संवर्द्धयेच्छिखां ३३ तृप्तये
जायते येषां अन्य मन्येन चेत्तदा दद्युः
श्राद्धानि पाथेयं नवहेत प्रवासिना ॥छ४॥
सवैया हतश्राध इस्रामृत जीवनकों१

प्र.वै
भा.टी.
८८

नि जो परलोक विषे विपताई जल
गंगदये नवही जगमै जरजागलेषे
तनको विगसाये मृत दीप सिषा
वझ तेलदये विजपावक सो ग्रहमै
निकसाय कृतविज्ञनकै जगलोग
ठगे अब पडकहे विधवेद वताये ॥

सवैया॥ गरभान सुपानहु प्राणपिया
सुषजो परषारथ आप प्रलाये इह
तो पुनि नीरथिकार जिते किहुकारण
भोगनते डरपाये जग सुष तजे वन
जाइवसे तप दीरघ सो निजदेहत
पाये जग भोग नयागि सुजोग भ
जे सुषहेत इहै विध आगमगाये ३५

भाषाटी.॥ शिष्यकहैहै हे गुरुजी जद
खावना पीवना इस पुरुषको परमा
र्थहै तद किसवासते इह तीर्थवासीज

न संसार सुखोंको त्यागकरके आप
कोवडे कठोर पराक सांतपन चांद्रा
यण इत्यादिक दुःखो करके खेदतेहै
न चार्वाक कहेहैं हे शिष्य इह जो का
म्यकर्मो करके स्वर्गादी इच्छाहै सोठगा
नेकी ये होइ जो ग्रंथहै उनोंकरके ठग
लेइ जो मूर्ख पुरुषहैं उन्हांको आशा
रूप लइकरके तपसीहै पशुप ॥२४॥
मूल॥ कालिंगने भंजनि पीडित बाहु
मूलं भृगोन्नत स्तन मनो हरमायता
क्षाः भिक्षोपवास नियमार्क मरीचि
दाहैः देहोप शोषणविधि कुधियांक
वैषः २५॥
चार्वाक उवाच॥ सोरठा॥ धूरत कौन प्र
लाप आगम नाम सुनाधरे। आसामो
दकपाप मूरख विपति सहेहोवई ४९

ग्रं. वं.
भाटी.
८५

८९

सवैया॥ हगहीरव ग्रंजन ग्राम घिरे ज
नुनीलसरोरुहहे विगसाए नवनाग
री ग्रानव नागकला ग्रलिके ग्रलिसी
लकपोल सुहाए कहि नाहि ग्रलिं
गनमे जनमे कहि पावक पंचहु दे
ह नपाए कहि भिंजन भीष ग्रहारक
हा उपवासनके सर देह सुकाए॥

भाषाटी.॥ इहु जो लंभेनेत्रवाले इस्त्री
योंका ग्रालिंगनहै सोकहा ग्रक
केसाहै ग्रपने भुजोकरके पीडेहोये
जो इस्त्रीका कछहै उनोंकरके दवाईहो
ई जो ग्रंचलनहैं उनो करके मनको
हरणेवालेहै ग्रक इह जो जग्रहिवा
ले ग्रकषोंका भिलोंकरके ग्रक निरा
हार व्रतोंकरके देह सुकावना सो
काहै॥ ८५॥

मूल॥ आचालि अपवं रम्भतिपि आला। वेतिजे दुःखमिस्सिदं संसाल स्वर खे पालि हलणी हृति चार्वाकः विह्स आउईह्नि विलसितं नर पशनां ३६

सिषउवाच चौपई हे गुर ऐसा कारहैंजेते ऐसे वषान वषान तेते दुःष विमश्रत स्रष संसारा ताते ताता करे प्रहारा

कविवाच॥ दोहा॥ स्रुनित सिषकी वात। को हसे स्रवालकजान चारवाक ९ निग्रहि सो आगेकरे वषान॥ ३६

भाषाटी॰ शिष्यकहनभया हे गुरूजी इह जो वेदशास्त्र जाननेवाले लोक हैंन सो ऐसीवातकहतेहैं क्या इह जो दुःखोके साथ मिल्या होया संसा र स्रखहै सो त्यागकरणा जोग्यहैं चार्वाक हसकरके कहिताहै बड़ाको

प्र० चं
भाटी
५०
90

धयाउताहै कैसा भइनो मत्तषरूपी
पसुवांको जाउह्निका विलासहै कै
सेक्या ॥३६॥

मूल ॥ त्याज्यं सुखं विषय संगम जन्म
पुंसां दुःखोपसृष्ट मिति मूर्ख विचार
णैषा व्रीहिञ्जिहासति सितोत्तमतंडु
लाढ्या न्कोनामभो सुषकणोपहि
तान्हितार्थी ॥३७॥

चारवाकउवाच ॥ सवैया ॥ तुष संग मिले
नगके सुखजे बहु हरत जो इह भात
वषाने तेन तुध महा पसुहै हमजो
वनेक परनारक जाने सित तंदल
तेतस संगमिले तिह नाहितजे जन
जे मरताने इह भाति लकायत वा
कसुने महामोह वली मनमै वि
ग साने ॥३७॥

भाषाटी॰॥ इस संसारके पुरुषोंको दुःखों
के साथ मिल्याहोया विषय भोगोंका
सुख त्यागकरणे जोग्यहै ऐसा मूर्खो
का विचारहै हे शिष्यकों नष्टहीवाला
अपनेहितको चाहनेवाला तुषकेक
णीयांसाथ मिलेहोये धान्यीयांको
त्यागकरणेको चाहताहै कैसे धान्यी
यांहैं सफेद मोटे चावलो करके भरे
होयेहैं इसी कारणते जदभी थोरे दुः
खोंदे साथ मिलेहोये संसारके सुख
हैं तोभी इह ई सारहै ३२

मूल॥ त्रिलोक्या महामोहः अयं विरे
ण खल प्रमाण वेत्ति वचनानि कर्णे
सुख अप जनयंति त्रिलोक्या सानंद
हंत श्रिय सहन्म चार्वाकः

महामोहउवाच॥ सुप्रतिनीप्रति सवैया

प्र॰ चं॰
भाटी॰
९१

91

मानिन कानन मांहि सुने यह वाक
प्रमाण महा सुषदाई मांहि निदाघ
मनो वरषा तिम कानन को सुष शी
तलताई सानंद ताहि विलोकन के
नृप मोह वली दिह बात अलाई आ
हिलकायत सजन मे इन वाकन के उ
र मे हरषाई ॥दोहा॥ ताहि ऊसर आयो
तवै नवे चारवाक प्रधान पेष समी
प सुजाइ के कीने पड वषान ॥
भाषाटी॥ महामोह राजा इनो वचनो
को हरते सुणकर के कहै है हे लो
का चिरकाल करके प्रमाण वचन
मेरे काणो को सुष देते है इह वचन
कौन कहिता है महामोह राजा इत
उत्तर देषकर के आनंद करके कहि
ता है बडा आनंद है इह मेरा मित्र चा

वीकहै चार्वाक महामोह राजाका
वचन सुनकरके उठकरके कहैहै
मूल॥ विलोक्य एष महाराज महा॰
मोहः उपसृत्य जयतु महाराज ए
षचार्वाकः प्रणमति॰
चारवाकउवाच॥चौपई॥ जय जय महा
राजा जगकारण तुम त्रिभवनके
हो अतिपारण चारवाक पदकरेप्र॥
णाम सेवक सदा पछानो नाम॥
भाषाटी॰॥ इह महामोह महाराजा क्या
इहां वैठाहै तिसकारणते मैभी इसी
के निकट वैठोगा चारवाक निकट
जाइके कहैहै जे देव हे महाराज इह
मैं चार्वाक आपको प्रणाम करताहा॥
मूल॥ महामोहः चार्वाक स्वागतंते
इहोपविश्यतां॥

प्र चं
भा टी.
९२

महामोहउवाच चौपई चारवाक सुषसो
तमआवे वहुतकालननते दरशन पा
वे सतजुग त्रेताभये वितीत तमरी
सारन पावे सीत॥ चौपई॥ द्वापर त्रे
तभयी कछु सारे कीटक देसवतहे
प्यारे वैठो इहा समीप हमारे समा
चार कछु करो उचार॥
भाषाटी॥ महामोह कहता भया है चा
रवाक क्या तेरा आउणा कल्याणवा
ला है इसथानविषे वैठो चार्वाकवैठ
करके फेरभी प्रणामकरै है
मूल॥ चार्वाक उपविश्य पुनःकले:
साष्टांगप्रणामः॥
चारवाकउवाच॥ चौपई॥ समाचार सुनि
ये समदेव प्रभको निषल भनावे
भेव पछमदेस वसे सुषधामा

साष्टांग कलि कीन प्रणामा ॥
भाषाटी॰॥ हे राजाजी इह कलियुगदा
षष्टांग समेत प्रणामहै
मूल॥ महामोहः अथ कले भद्र मया
हते॥
महामोहउवाच॥ चारवाक ममकरो व
षान मभविधहै कलिको कल्यान
ममप्रतापमै अतिअनुरागी कलि
युगहै जगमै वडभागी ॥
भाषाटी॰॥ महामोह राजा देषकरके क
हेहै हे चार्वाक कलियुगको क्या
कल्याणहै ॥॥
मूल चार्वाकः देवस्य प्रसादात्सर्वत्र
भद्रं निर्वर्तित कर्तव्य शेषश्च देवपा
दमूलं द्रष्टु मिच्छति यतः आज्ञामवा
प्य महती द्विषतां निपातितेन निर्वर्त्य

प्र॰ चं॰ ना॰ टी॰ ९३ तो सपदि लब्धशुभ प्रसादः उच्चैः
प्रमोद मनुमोदित दर्शनः सन् ध-
न्यो नमस्यति पदांबुरुहं प्रभूणां॥२४॥
चारवाक उवाच॥ तव प्रसादि सभ विधि
कल्यान तेजवंत जैसे भवभान की-
ने काज करन नहि रहे तव पदमू-
ल दर्शकोचहे तमरे वाक सुसिर
पर धारे डुहनके तिन मूल उधारे
सुष प्रसादि शुदित अतिभयो दर-
शन सुंदर अति हरषयो॥२४॥
भाषाटी॰॥ चार्वाक कहे है राजेके प्र-
साद करके सब जगत विषे कल्याण
है हे राजाजी सो कलियुगभी मारी
तुमारी आज्ञाको समाप्तिकर के आप
के चरण भूमीके देखनेको चाहता है
सो कोई ऐसा बडा भागवाला अपणे

स्वामीके चरण कमलोको देषताहै ।
जो अपणे स्वामीकी आज्ञाको पहले
पाइके पिछे स्वामीके शत्रुको सिनावी
पराजय करके फेर स्वामीके पास आ
इके उसते वडा प्रसादपाइके टहिरेगा
औरकैसाहोवेलभ्याहोया अवका प्र
साद जिसने ऐसा होवे लोकोकों हर्ष।
देनेवाला दर्शन जिसदा ॥३८॥
मूल ॥ महामोहः अथ तस्मि न्कले
कियत्संपन्नं चार्वाकः देव ध
महामोहउवाच ॥ दोहा ॥ चारवाक अमि।
त ममभोको करोउचार कौंन कौंन
कारजकरे कलयुग जगत मकार
भाषाटी ॥ राजा महामोह कहैहै हेचा।
र्वाक मैं तमको इह बात पूछताहों
इहां कितनाकार्य संपन्नहोवाहै ॥

प्र वं
भा टी.
५१
९५

मूल॥ अतीत वेदार्थ पथः प्रथीयसी यथेष्टचेष्टांगमिता महाजनः तदेव ईतनेकलिनेवाप्यहं प्रभुप्रसादेशि तनोति पैारुषं नजानरा पथिकाः पष्यात्मासयगी मेवन्याजिताः शम दमादीनां केवकथा प्रमत्ताधिप्राय शेण जीविकामात्र फलैवयगी यथा आचार्यः॥५१॥

वारवाकउवाच॥सवैया॥ वेदनके पथ धूरतजे सयथेष्ट चेष्टामे जनपाहे आज विरागकी कैांनकनकथा वि न लाष्टकंचनसे जनलागे नाक। लिना हमकारणदे प्रभके प्रताप भये वडभागे जे धनवंत महातम म हाजनतेरति नाह किपाउ पराने दिस उभरऊं मुनि पछमसे यह वेद

त्रयी तत्रपालनके हितहै द्विजधारी समझो हमको नहि कौन कथा जि न देव समान भये वहुनारी अब काज समरन सिध भये हविवेक हकी जडमूलउषारी ४१

भाषाटी॰॥ चार्वाक कहैहै हे राजाजी मेनेवडे उत्तम जनभी वहुत हतें प्रभावको पुजावेहैं कैसेहैं लष्या होया वेदार्थका रस्ता जिन्होने ये सेहैन हेराजाजी इसवातविषेना कलिजुगहेतुहैन ना हमहेतुहै परंतु हमारा प्रसादजोहै सोई असा लोकोंका पुरुषकार उत्पन करताहै ४० हेराजाजी औरभी स ए इह जो उत्तरापथवासी जनहैं अर पश्चिमदिशावासीलोकहैं सो

प्र चं
भा टी
५५

95

मैंने तीन वेदोंके रस्तेको त्यागकराये
हैं अरु जो विवेक राजेके संबंधी शम
दमादिकहै उनोकी इनो देशोंविषे
वातभी नहीहै हे राजाजी अरु देशों
विषेभी तीनवेद जीविका मात्र ईफ
लवालेहैं ज्ञानकी वातभीहै नही
हेराजाजी बृहस्पति जोहै असों लोको
के मनका गुरुसोभी ऐसाई कहनभ
या क्या ॥५१॥

मूल॥ अग्निहोत्रं त्रयोवेदा स्त्रिदंडं भस्म
गुंडकं प्रज्ञापौरुष हीनानां जीविके
ति बृहस्पतिः ॥५२॥

चौपई॥ अग्निहोत्र पुनि वेद विसाला
और त्रिदंड भसम पुनि माला बलम
ति हीन जीवका कारन धरे ब्रहस्पति
कीनउचारन ५२

भाषाटी०॥ इहजो हवनकरणा अरु ती
नोंवेदोंका पढना अरु शरीरकादंड
मनकादंड अरु वाणीकादंड इह ती
नदंड अरु भस्मकरके शरीरका लेप
न करणा इन तीनों जो क्रियाहैं न सो
बुद्धीकरके अरु पुरुषकारकरके ही
न पुरुषोंकी जीविकाहै हे राजाजी इ
हमतमारे लोकैंने सारग्रहण कर
लीयाहै ॥ ४२॥
मूल॥ तेन ऋषदेवादिषु तावदेवेन ।
स्वमेपि विद्या प्रबोधोदयोन शाके नैयः
चौपई॥ जीवन हित नर वेद विचारे ता
ते कारज भए हमारे ऋषभआदिक ती
रथमा ही प्रबोधउदे सुपनेहूं नाही
भाषाटी०॥ तिसीकारणा करके ऋषदेव
इत्यादिक देशोंविषे राजेने स्वमे वि

प्र चं
भा टी
९९

96

षेभी प्रबोधका अरु विद्याकाभी उदय
नही शंका करणी चाहीये
मूल॥ महामोहः साधु संपादितं महत्
खलुतीर्थं मयीकृतं ॥
महामोह उवाच॥ चौपई चारवाक कलम
हा प्रवीना ममहित भुजवल धीर नवी
ना तां भुजदंड काज ममसरे तीरथ
वडे विद्यारथ तिनकरे प्रथमोको नि
श्चिंतीभई तीरथ बोध संक उरगई
गृहमे नारिसुतनके संगा कहा होइत
बोधप्रसंगा ॥
भाषाटी॥ महामोह कहैहै हेचार्वाक
धन्यहेरे प्रकृष कारकोंहै तिसकारनते
तैनेभलेप्रकार वणाई होईहै अरु तैने
वडे तीर्थभी हथ्याकीये होयेहैं ॥
मूल॥ चार्वाकः देव प्रत्यक्ष विज्ञाप्यमस्ति

चार्वाकउवाच॥ दोहा॥ नवपद पंकजको
लिषी कलियुग पातीआप याको
आप विचारिये राजनर विप्रताप
चौपई॥ याविधि ल्हनियो भूपतिजवही
पातीलगो वचावन तवही चार्वाक
है ल्हेनो जगभूप कलियुगपाती लि
षी अनूप ८८
भाषा टी०॥ चार्वाक कहिताभया हेराजा
जी मैने और भी विनती करणी है सो
तुम श्रवणकरो॥
मूल॥ चार्वाकः अस्ति विश्वभक्तिर्नाम
महा प्रभावा योगिनी सातक लिना
यद्यपि विरलप्रचारा कृता तथापि तद
नु गृहीतान्वय मालोकयितुं न प्रभवा
मः तदत्र देवेनावधानव्य मिति॥

प्र० वे
भारी०
५०
97

कलियुगउवाच ॥ दोहा ॥ तव वसकीनो
निषिल जग सुरनर मुनी महान
कलियुग पद वंदनकरे महामोह भ
गवान ॥ दोहा ॥ समाचार सभदेसको
सुनेजगत सिरताज तव प्रताप तव
दास जगइहकरे सभकाज ५० छपै
छंद ॥ जगत जैन मायामोह नाम प्र
तीतकहावै घरमै लेहि उसीर भीष
मुनिमागनजावै रैनकरे रसभोग
दिनेतनभस्मलगावै आपकरे सभ
पाप औरको धरम बतावै इह भांति
प्रतीत हमै करी नष सिषलो अभिमा
नप्रति उर निसवासर दमडा वहे क
वहू नहोवे रामरति हरिको पंथ स
हर पंथ वह आप चलावै रही फकी
री हरमाग उर पेट प्रवावै करे इकंत

वनवाससंग वङदंद ववावे मवे
निरंतर राति दिने मुनि ध्यान लगा
वे मुनि धन मद मसी मलान मुष
भूपसेंध मुर पैालपर सधनलिपमा
व्याजल महासरमापति समरहे पर
नीतन मुनि भूपनधाइ मन उक्त वि
चारे निज पर जापर दंड काज भव।
भीतरमारे राजधरमकी सिंम्लतभूप
नह नैन निहारे पाना सकल निरंत
रधरमन चीत सधारे जगमावड वा
क मुराम विज वैठनपाइ भूपतिकरे
राजाधि राजा महामोह प्रभमद स
दा पक्कमधरे भयो उपद्रव एक म
नो नीके मनलाई वङनाम नाराय
ण माहि प्रतीत सजनको आई क
हे कहू मनलाइ महाजन प्रेमलगाई

प्र॰ चं॰
भा॰ टी॰
२८

९८

प्रातभजे हरिनाम नैनन्ह नीद मिटा
ई यह हरिभगत सबीज प्रभजनषा
हे उर परधरे यह हरिभगत प्रवा।
घन काह्हिसके नव मूल ग्रपत क्र
तनकरे चारवाक सभ डोर वात
प्रभग्रवो वषाने महाराज नहि फू
टगहे उर सत पछाने एक पापि।
नी नारिभई मंत्र सजाने यह ना
म नारायण उष्ट नाहिके संग मि
लाने प्रभइन प्रपराधनते डरे म
हायोगिनी प्रबल प्रति जग चार
वाकके वचन सुनि करी उपाइ स
यथामति ॥ महामोहउवाच ॥ प्रब क
लिकी मति बौरानी यो हमजानयो
लघु नाम नारायण मात्र जिनइर
मानयो इकराज मृयको करणोयो

जगभानयो अस्वमेध मख मैलिकर
यो जग हानयो इह ब्रह्महत्या मात
वध पर पतिनी गुरदार रति प्रवकरे
निडर जगमाहि जनडर नाम नाराय
णभयो कति ॥ क्रुद्धमंत्रीउवाच ॥ छपे
छंद नाम नारायण महाडुष्ट भूपति
जगगायो अजा मेल इक वारलयो
तिहबंध मिटायो गनिकाने पढ़दा
सी नां मनते मतलायो नाम डुष्टते
ह मिलयो सु तिह वैकुंठ पठायो
सुगजपति आकुल वार इक नामना
रायणलयो जब राजाधि राजा महा
मोह प्रभनाहि कुडायोतव ॥ ९७ ॥
महामोहउवाच ॥ छपेछंद ॥ नाम क्रुद्ध
ध सुनेरो बडे सुद्ध पक्काने जननी
नाम क्रुद्ध धरयो मितनेडरयाने

प्र॰ वं॰
भा॰ टी॰
९९

९९

नैयह निषल सुवचन मोहू अतसंत
वषाने नाम नारायण नीचुचहे जग
मेरो हांने अवताहि विना सेहेत कछु
होइ उपाइ सुअगटकर ऊतसित
विपार अमनिषल जनपेरा भजे क
हि नामहरि धनी धरसु धन दान न
देविक मनमै आवे निरधन भजे न

दान

नाम हितैं दम दाने धार फकीरी
भेस मूढ हुतारथ माने विन संतोष
सवानहुत आप उनम करजाने इ
ऊ नरण अवसथा माहि जननतजे वि
षे सुउपरन अति उनि उमै उष्ट जर
दापने धन सुनतधारा विषे गति ९९
कविवाच॥ दोहा॥ या अवसर इक आयो
पत्रहसत नर आन महामोह भूपा
लको जयजयकीन वषान १००

उत्तरदिशाते आयो अनाचार अतकार
यह प्रभपत्र पटन हित फेरयो नाहि
सयान वह पाती पठने लगे रवनोभू
पटे कौन ॥ अनाचारोवाच ॥ छपैछंद ॥
उत्तरके सभलोककरे मैं मिलापरा
इण समके ईस नत नवके शुष मैल
नरायण नावि धरम्नते हीन भई बड
धा गिरडाइण कहा धरमके कथा
रसे विभचार रसाइण प्रभइत उत्र
दिसते रवनो अनाचार बंदनकरे यम
आचारना विन प्रभ भइ सदा मनमें
धरे ॥ चारवाकउवाच ॥ चौपई ॥ और रुपेक
वेनती अहे चारवाक संतनहि करे न
मभवपति सभके सिरदारा तमरे र
वेनिचल संसारा ९४ ॥ महामोहउवाच
कौनवेनती नहि संकावो चारवाक

प्र॰ चं॰
भा॰ टी॰
१००

100

तुमप्रगट सुनावो तुम मेरे अति सेहि
तकारी तुमको कहाभयो उरभारी ।
चारवाकउवाच ॥ चौपई ॥ विश्नु भगति
नाम इकदृष्टे महाप्रभावयोगनेपये
कलियुग विरलप्रचार सुकीनी तद
पिहै वालवुधिपरवीनी ताउयह न
रवंस उदारे हमसेकोटन सके निहा
रे देवसदा रहयो सवधाना विस्नुभ
गतहृधे वलवाना एकवारजोहि पा
हटिकाए मरेन मूलन वहुरसुजाए
तहि वैरागनहो सुविवेका सने स
ने हिउवांधे टेका ॥ कविवाच ॥ चौपई
महामोह यह सुनयो जवही अति
भेभयो सुमनमै तवही मनही मे य
ह गती सुहोई महाप्रभाव योगनी
सोई १०९ ॥ दोहा ॥ सदा हैष हम सोकरे

मारी मरेन मोह सने सने हमको हने
महापापिनी होइ ॥ ११० ॥ दोहा ॥ महामो
ह मनयों उरयो प्रगट करे कछु ठौर
गुलाब सिंह योंही भने मानतजे सिर
मोर ॥ १११ ॥
मूल ॥ समय मान्मगतं ग्राः प्रसिद्धम
हाप्रभावा सायोगिनी स्वभावाद्विद्वे
षिणी चास्माकं उच्छेद्या भवतु प्र
काशे भद्र मल मनया शोकया काम
क्रोधादि प्रतिपक्षेण उच्छेद्य उदेष्यति ॥
महामोह उवाच ॥ कहा भई संक सुनि
संक चारवाक रहो काम क्रोध आदि
वीर लाहिको निवारहे कामके भये
विकार भगतिको विचार कहां होइगो
न उदे कहूं वेद यो विचारहै वैरी होइ
छोटो तऊ मोटे करजाने बुधजन मते ।

प्र॰ चं॰ भा॰टी॰ १२

वेंहलको समूलते उषारहै जेतनके
हेतबल बुधिके निकेतजोई भूपति स
चेत सउपाइको विचारहै ॥१२

भाषाटी॰॥ महामोह राजा इस वचनको
सुनकरके भयकरके मनविषे चिंत
न करताभया क्याबडा खेदहै सोयो
गिनीवडी प्रसिद्ध प्रतापवालीहै औरु
हमलोकोंकोभी स्वभावकरके वैर
करणेवालीहै औरु वहुत कष्टकरके
उसका छेदकरणे आउताहै हे कल्या
नवाले चार्वाक इह शंकारहे ऐसी
शंकानही करणी चाहीये जिसका
रणते कामक्रोधादिक जो इस योगिनी
के शत्रुहैं सो जीवतेहोनेसंते इह यो॰
गिनी कहांउदै करेगी॥

मूल॥ चार्वाकः तथापि लक्ष्मी यस्य

पि विषोनाम वहिते जिगीषु भविन
वं यतः धत् विपाक दारुणा राज्ञा
रिपुरल्पोप्यल्कंतुदः उद्वीजयति म
ह्मापि चरणं कंटकांकुरः ॥४४॥
दोहा॥ लघु अरि अवसर पायकै दु
षदायक अवनीस अहि कंटक प
गमै गडे पीडा देन षसीस ॥ ~~कवित्त~~
चौपई॥ भाषा॥ हेचार्वाक तोभी इस
बातविषे प्रमादनहीं करणाचाही
ये जिसकारणाते वहुत लघु शत्रु
विषेभी अपने जय चाहने वाले रा
जेने षवरदार रहणाचाहीये नीति
शास्त्रजानने वालेभी ऐसावचन
कहितेहैं राजे लोकोंके थोडाभी
शत्रु वडा षेदताहै कैसाहै आदिवि
षेभी निकाहाकेभी अंतविषे वहुत

प्र.चं.
भा.टी.
१०२

पीडादेनेवालाहोताहै इस बातविषे
दृष्टांतहै जैसे बहुतसूक्ष्मभी कंडाव
रणाको वडीपीडादेताहै ४४
(102)
मूल॥ नेपथ्याभिमुखं महामोहः कः
कोत्र भो प्रविश्य दौवारिकः आज्ञा
पयतु देवो महामोहः भो प्रयत्नेन
आदिश्यतां क्रोध काम लोभ मदमा
त्सर्यादयः यथा योगिनी विष्णुभ
क्ति र्भवद्भिरेवावहि विहंतानि दौवा
रिकः यदाज्ञापयतिदेव इति नि
ष्क्रांतः॥॥

कविरुवाच॥ चौपई॥ महामोह तब उ
च प्रकारा है रे को मम भौन द्वारा
द्वारपालि इतने चलआया आज्ञा
करो देव जगराया॥ महामोहउवाच
चौपई॥ कामक्रोध लोभ मद मतसर

हूर नहीकों जिनकेको समसर तिन
को ग्राय स्वैया ममदीजो विस्सभग
तिको हिंसनकीजो द्वारपाल तब
सीस निवाए मैं प्रभ कहो करो तिस
जाए इमकहि द्वारपाल जब गयो प
रहसत नरस्रावनभयो ॥
भाषाटी०॥ ऐसावचन महामोह राजा
कहकरके दरवाजे विषे दृष्टी पाइके
उधेकरके वोलताभया हे द्वारपालो
कोउहांकोंनहो द्वारपाल इसवचन
को स्रणकरके कहनभया हे महारा
जाजी मैदास ग्रानथाभया है हमा
कोग्राज्ञाकरो महामोह कहै है हेग्र
सत्संग ग्रसत्संग क्या कहीए दुर्जन
संगत् कामक्रोध मदलोभ ईर्षाइत्या
दिकोंको इहू हमारी ग्राज्ञाकउ हेका

प्र वे
भा टी.
१०३

103

मक्रोधादिकों तुमने सावधान होक
रके इहु जो विस्नभक्ति नामवाली यो
गिनीहै सो सारे प्रकारों करके मारणी
चाहिये इहकैसीहै स्वभावकरके ह
मलोकोंकी शत्रुहै द्वारपाल इहवच
न श्रवणकरके कहैहै हे राजाजी जो
हमको फुरमावोगे सोहमने करणा
है ऐसावचन कहकरके द्वारपाल नि
कलगया ॥

मूल॥ तत्र प्रविशति पञ्चहस्तः पुरुषः
हगो उक्कलदेशादो आगदोह्मि अत्थि
तस्सि सागलतील संणिवेसे पुलसो
त्तम सदिअंदेवता अदणं तस्सिं मदं
माणाहि भट्टकेहिं महाला असआसे
पेसिदोह्मि विलोकय पसा वाराणसी
पह लाअउलं जावय विसामि पविश्य.

पसे पटके चवाकेण सहं किं विमंति
प्रति यदि ताडव सण्णामिणो उपसृत्य
जेदु जेदु भट्टके पटं पत्रं णिलूपमाणे
परिविट्ठ भट्टके महामोहः स्वगतं का
र्यं मत्याहितं भविष्यति महामोहः
पत्रं गृहीत्वा कुतो भवान् पुरुषः ह
गो पुलिसो तमादो प्रकाशं चार्वाक
गच्छ कर्तव्येषु वहितेन भवता भवित
व्यं चार्वाकः यदाज्ञापयति इति निष्क्रां
तः॥॥

पत्रीहारउवाच॥ चौपई॥ उतकल देश
हते हम आए प्रभ पद पंकज पास
पठाए नाहि पुरुषोत्तमके प्रस्थान
साथ तटि जहि है मदमान यह बना
रस यह जगराया जाको कुलवान स
हाया कौन प्रवेशान लाइ सवेरा हर

प्र॰ चं॰
भा॰टी॰
१०४

हने तिन भूपतिहेरा यह भूपति क
ह्यौ मंत्र विचारे चारवाक सो वैद क
नारे चलौं समीप स्वपत्र दिखाऊ का
रयवेगन वेरलगाऊ गयौ समीप स्व
पत्र दिखायो जैजै सबद स्वग्रषो श्र
लायो मदमान पद चंद चकोरे प
त्रलिष्या पठयौ श्रममोरे १२२ सुन
कर मोह भयो निजलीना है कछु उ
ह्र कर भयो मलीना चारवाक प्रति
पढ़ श्रलाई श्रबनहि वने स्ववेरलगा
ई ॥ चौपई ॥ जांते कारय होइ नहांनी
चारवाक रहयो सवधानी चारवाक
श्रषतयो श्रलाइ गयौ वेगभूपति सि
रनाइ ॥ दोहा ॥ महामोह नवपत्रको
वैद पठावे श्राप गुलाब सिंघयो
जगतमें जिहकायो प्रताप १२३

भाषाटी॰॥ तिसते उपरांत कोई पुरुष। हस्तविषे पैत्रा लैकरके रंगभूमीविषे प्रवेशकरके लोकोके उपर करुनभ या मै प्रभात कालविषे उत्कलनामा देशते आया होवाहुं तिस उत्कलदे। शविषे समुद्रके तटविषे पुरुषोत्तम ऐसा नामवाला एक देवस्थानहै तिस देवस्थानविषे होणेवाले मदमानना मवाले दोनो महाराज महामोहके अ धिकारीयोंने मैं राजेके पास भेजाहोया हों ऐसावचन कहिकरके सो पुरुष इदर उदर देषकरके फेरभी कहेहै इह काशीहै इस पासे इह राजेका घर होवेगा मैभी इसविषे प्रवेशकरोंगा ऐसा वचन कहिकरके सो पुरुष रा जघरविषे प्रवेशकरके कहेहै इह रा

प्र॰ चं॰
भा॰ टी॰
१०५
105
आप

जा महामोह चार्वाकके साथ कोई सला
ह करणे बैठ्या है मैभी राजे पास जावांगा
सो पुरुष ऐसा वचन कह करके राजे
के पास जाइके कहै है जयदेव हे राजा
जी इह पत्र देषो महामोह राजा उस पु
रुषते पत्र लैकरके पढता भया अरे
पुरुष तूं कहांते आया है पुरुष कहै है
हे महाराजी मै पुरुषोत्तम नामा देवस्थ
लते आया हों महामोह इस वचनको
श्रवणकरके मनविषे चिंतनकरता भ
या क्या कोई वडी भयवाली वात हो
णीहै ऐसा चिंतनकरके महामोहरा
जा प्रकटकरके कहै है हे चार्वाक तूं
जाउ जो कार्य तैने करणा है उनों विषे
तैने सावधान रहणा चाहीये चार्वाक
कहिता भया हे राजाजी आपको जो आ

ज्ञाकरोगे सो मैं नेकरणीहै ऐसावचन
कहकरके सोचार्वाक निकलगया ॥
मूल॥ महामोहः पत्रं वाचयति ॐ स्व
स्तिश्री वाराणस्यां महाराजाधिराज प
रमेश्वर महामोह पादान् पुरुषोत्तमाय
तनात् मदमानौ साष्टांगपातं प्रणम्य
विज्ञापयतः यथाभद्र मस्माहतं श्रम
त्वदेवीशांतिः मायाश्रद्धयासह विवेके
दौत्यमापन्ना विवेक संगमायदेवी उ
पनिषद महर्निशं प्रबोधयति अपिच
कामसहचरोपि धर्मो वैराग्यादिभिरु
पतिमश्वलहयते यतः कामाद्विद्भिः
यक्तविशिष्ठः प्रचरति तदेतत् ज्ञा
त्वादेवः प्रमाणमिति ॥॥
मदउवाच॥छपैछंद स्वस्ति बनारस धा
मविषपदकंज सहाय जीतसदा प्रसं

प्र॰ चं॰
भा टी॰
१०८
106

उपरे सुरनर मुनि पाये अडिग सिंहासा-
न बैठ सीस परछत्र फिराये राजाधिरा
ज महामोह पद मद मानंद वंदन करे
प्रभइति पुरुषानम आयतन भट्ट स
दा मन मे धरे औरवेनती नाथ सुनो
नीके मनलाई सरधा मात समेत सा
तिहती सबु लाई दया विवेक सुनमा
न श्रुतिके पास पठाई जिउ तिउ करो
संबोध माहू सगदेह मिलाई प्रभवहु
दिनरैन संबोध कर जिह तिह विध छि
गआने है बलि इत पुरुषानम आयत
न पत्र पठे मदमान है और विरलांतक
है ग्रेहनाथनीके मनधारो काम सहत
जो धरमकहूं कहिहोत निआरो वैराग
विवेक सुशुद्ध मनोकछु मंत्र दिढायो
कहूं कहूं हरिहेत दोतहमहू लषपायो

यामैप्रमाण प्रभग्राप त्वमज्ञानमले म
नमहिघरे प्रभजिद्द्विध मिटे प्रवा
ति वनेसा उपाइसी चर करहो ॥२८॥
भाषार्थ ॥ तिसने उपरंत महामोह राजा
लिखपत्रको वाचनेलगा क्या राजेको
अरु प्रजाको कल्याणहोवे महाराजा
धिराज परमेस्वर स्वरूप श्रीमन्महामो
ह राजदेवके चरणोंको उरुषोत्तम नाम
देवस्थानविषे स्थितहोये हम दोमदमा
नवाले अधिकारी अष्टांगपात समेत
प्रणाम करके विनती करतेहो क्याइ
स्थानविषे कल्याण हमदोजनेको कि
सीने खानतही कीयाहै ऊरभी विनती
है क्या शांतीदेवी श्रद्धानामा माताके
साथ अब विवेकराजे इतभावको प्रा
प्तहोयेहैं इसकाल विषे दिनरात वि

प्र० वं०
भा० टी०
१०७

107

वेकराजाके संगमको प्रथ्थ उपनिष
दनामदेवीको मिनती करतीहै हे
राजन् औरभी विनतीहै क्याकामसह
चारीभी जोधर्महै सोभी वैराग्यादिको
ने निरादरकीनाहोया जैसा भासताहै
जिसकारणते सो धर्म कामते भिन्नहो
करके किसी उत्तमस्थानविषे चलताहै
हे राजन् तिसीकारणते इह वात स्मरण
करके आपही इसवातविषे प्रमाणहो॥
मूल॥ महामोहः सक्रोधं आः किमेव म
तिभ्रंशो शांतेरपि विभ्यतः कुतोस्याः
संभवः तथाहि धय धाता विश्व विसृष्टि
मात्र निरतो देवोपि गौरीभुजा श्लेषानं
द विघूर्णमाननयनो दृष्टा धरो धृमन
हैत्यारिः कमला कपोल मकरीलेखां
कितोरः स्थलः शांतेर्वा विनरेश जंतव

पुनः कानाम पुशांतेः कथा ॥४८॥

महामोहउवाच ॥ छपैछंद ॥ महामूढ बडू
भए सांतिने जिनउरकीनो कहां होइ
गी सांतिभयो जगकारजलीनो ब्रह्मा
निसदिनकरे पुनहू पुन जगत नवीनो
दत्तमल विनसक संभरहै गोरी सुषभी
नो कमला कपोल मकरी लिषत उर
हरिपयो निद सैनकर पुनि ठोर जगत
की जीवमे सातिकहा कहिहोइडह ॥२२

भाषार्थी ॥ जो आज्ञाकरोगे सो हमनेकर
णीहै तिसते उपरंत महाराजा महा
मोह ऐसा लिखपत्र पढकरके क्रोध
समेत कहनेलगा इह वडाक्रोध ह
मकोआवताहै इह मदमानादिक मू
ढशांतीतेभी कोंभय पाउतीहै कामा
दिकजव खिडेहोनगे तदइस शांतीका

प्र॰ वे॰
भा॰टी॰
१०८

संभवहीनहै सोदेषो ४५ प्रथमब्रह्मा
विष्णुकी रचना हुएभार्याविषे केवल
लगाहै अरु दक्षप्रजापतीके यज्ञका
नाशकरणेवाला शिव पार्वतीके अंगों
के आलिंगनकरके अत्यंतभ्रमणेवाले
नयनजिसके ऐसाहोयाहै अरु दैत्योंका
शत्रुजो समुद्रशाई भगवानविष्णुहै सो
भी लक्ष्मीके कपोलों विषे लिपीहोई
जो मकरीहै उसके लेखाकरके चिह्न
कीताहोया वक्षस्थल जिसका ऐसाहै
इह तीन देवतेभी नहि शांतिमारगवि
षे इस्थितहोयेहैं अन्यजीवोंके विषे पु
नः कौनशांतीकी कथाभीहै ॥४६॥
मूल॥ पुरुषं प्रतिगच्छ जल्पकामं सन
र उपेत्या देशमस्माकं प्रतिपाद्य य
था तु राशयो धर्मइत्यस्मामि रवगते

तदस्मि न्मुहूर्त मपि न विश्वसितव्यं

दृढं बद्धा धारयितव्य इति पुरुषः जं

देवो प्रणाबो द्दिइति निष्क्रांतः

महामोहपुरुषं तरप्रत सवैया॥ जालम

जाहि सिताव अबै मम काम को पेर

संदेसह दीजे धरम विनीत भयो हम

सो इनको पियनाहि विसाऊ सकीजे

जिहभाति भजे न मतो हरिको तिमया

हि भले दिढबंध गहीजे मूल रहै दि

ढयाइ गहो वस याइ भए न कछु

ममछीजे॥दोहा॥ भूप मोल माणिजो

कहो देवकरो वरनाइ ऐसे पुरुष

वषानके गयो वेग सिरनाइ

भाषाटी॥ महामोह राजा हूत पुरुषके

प्रति कहनेलगा हे पुरुष तू काम।

के समीप सिताबी जाइके इह हमारी

प्र चं
भा टी.
१५
109

आज्ञा उसको कहो क्या है काम हम
ने इह बात निश्चय कीती है क्या इह
जो धर्म है सो महाउत्पात है इसी का
रणते तैने उसविषे मुहूर्तमात्र काल
को भी प्रतीती नही करणी चाहीये तै
ने हठ करके लवंध करके सिताबी
धर्म बंध करणे योग्य है क्षणमात्र को
भी प्रथक नही करणे योग्य है पुरुष
कहे है हे स्वामिन् जो मेरे को आज्ञा क
रोगे सो मैने करणा है ऐसा वचन क
हकरके पुरुष निकसगया ॥

मूल॥ महामोहः स्वगतं विचिंत्य श्रुं
तेः कोप्युपायः अथवाऽलमुपायांत
रेण क्रोधलोभावेव तावदत्र पर्याप्तौ
प्रकाशकः कोऽत्र भोः प्रविश्य दौवा
रिकः आज्ञापयतु देवः महामोहः

तावदाहूयतां क्रोधोलोभश्च पुरुषः

यदादिशतिदेवः ॥ इति निष्क्रांतः ॥

चौपई महामोह पुनि चिंतनकरहै को

नउपाइ सांति जग मरहै अथवा ऊोर

उपाइनकथे असंतन संग सवाल मग

थे क्रोधलोभसोममभटजेते वेग बो

लथे मगलेतेते जिम अभकरहे वने ति

मकयो ऐसे भाष पुरुष इकगयो ॥१२॥

दोहा ॥ क्रोधलोभ दोनो तवी आए सभा

मभार गुलाब सिंह नृप वंद पदलो

गो करन उचार ॥१३॥

भाषाठी ॥ तिसते उपरांत महामोहराजा

मनविषे विचारकरके कहैहै इह जो

शांतीहै सो किसउपायकरके हटाउ

णीहै अथवा ऊोर उपायका चिंतन

करणाहै इह जो एक क्रोधहै दुसरा

प्र०चं
भा०टी
११०

110

लोभहै इहही दोजने इस शांतिके नि
हनिकरणेविषे समर्थावालेहैन ऐसा
विचारकरके महामोहराजा दरवाजेवि
षे हस्तीपाइके ऊंचे वोलनेलगा उहांद्वा
रविषे कोनहै द्वारपालोने ऐसावचन
सुनकरके उना द्वारपालोंके मध्यविषे
कोई पुरुष अंदर प्रवेशकरके राजाके
प्रतिकहैहै हे महाराज मेरेकों क्या
आज्ञाकरतेहो महामोह कहतभया
अरे पुरुष तूं सिताबीजाउ क्रोधको
अरु लोभको सदो पुरुष कहिआ हेम
हाराज जो मेरेको आज्ञाकरेगे सो मैंने
करणीहै ऐसावचन कहिकरके सो
पुरुष निकलगया ॥
मूल॥ ततः प्रविशति क्रोधो लोभश्च क्रो
धः श्रुतं मया यथा शांति श्रद्धा विलभ

कथा महाराजेन प्रातिपदयमावरेती।
ति प्रेहा मपिजीवति कथमासा मान्म
निरपेक्षितं चेष्टिते तथाहि ४७

क्रोधउवाच॥सवैया॥ प्रभमोह हनी यह
भाति कहै हमरे संगसांति विरोधक
माप हथाहरिकी प्रति भगत तथा
तिनकी यह दीनभए हसहाए मम
जीवति सांतिकी वात कहा यह वार
न तीनहु घणागावाए भुजको वलना
थकहा कहये कछु भाषतहो हसनो
मनलाए ॥३३॥

भाषाटी.॥

तिसते उपरांत क्रोध अरु लोभ प्रवेश
करतेभए क्रोधलोभकेप्रति कहनेल
गा हे मित्र मैने ऐसीवात सुणीहै
क्या एक शांति अरु श्रद्धा अरु विसभक्ति

प्र॰ चं॰
भा॰ टी॰
१११

111

इह तीनइस्त्रीयां महाराज महामोहके
प्रति शत्रुभावकों करतीयांहैंन बडा
कष्टहै मेरेजीवते होतेसंतेभी इहइ॰
स्त्रीयां कैसीचेष्टा करतीयांहैं जोअ
पने शरीरके नाशकोभी नहींदेषती
यांहैंन जोअपने शरीरकोभी नहींदे
षतियांहैंन हे मित्र सुणतूं अब मेरा
प्रताप ॥ ५७ ॥

मूल॥ अंधीकरोमि भुवनं बधिरीकरो
मि धीरं सचेतनमचेतनतां नयामि
कृत्यं न पश्यति नयेन हितं शृणोतिधी
मानधीत मपिन प्रतिसंदधाति ५८

सवैया॥ अंधकरोंहि जगवंतनको बधरो
करडारो धृतवंतनको सु अधीर करो
पुनि चातरकी मति हर निवारो हित
कारय नाहिपिषे कवही जिनके उर

भीतरमै पगधारो तिह आत्मकोन ख
ने कबहो रुपछयो जिन नो षिणमा
हि विसारो ५४

भाषाटी०॥ मै सारे जगतको अंधाकरता
हो अरु सारेजगतको वधिरबणाउता
हो अरु धैर्यवाले चेतन पुरुषकोभी
जडभावको पजावताहो अरु मेरे आ
वेशवाला पुरुष अपने कार्यको नही
देषताहै अरु आपका हितकारी वच
ननही सुनताहै अरु मेरे आवेशाका
रके वुद्धीवाला पुरुषभी सारे अवस्थां
विषे अभ्यासकीतेहोये शास्त्रकोभी
नही याद रषताहै॥५८॥

मूल॥अरे मद्द पश्यदीनाः मनो २५ स्वित्य
रेपरामेव ताव मत रिष्यंति किंपुनः
शांत्यादीस्त्विनयिष्यंतीति पश्यमवे ५५

प्र॰ चं॰ भा॰ टी॰ ११२

112

सन्त्यंते ममदंतिनो मदजल प्रक्षालन गंड
स्थला वातव्यायतपातिनश्च तुरगा भू
यांपि लक्ष्यपरान् एतल्लब्ध मिदं लभेऽ
नरिदं लब्धाधिकं ध्यायतो चिंता जर्ज
र चेतसो वत नृणां कानाम शांतेः कथा
लोभोवाच ॥ सवैया ॥ जिनके सिर ऊपर हा
थ धरो तिनकी हदसो हनमीत बनावे
ह मनोरथकी सरतापर हलहि नाहि।
कदाचित ते नरपावे तिनके उर अंतर
सांतिकहा जनते धनको दिनरैन ध्यावे
अबक्रोध सबै हनये हकहो जिह भां
तउते धनमें मनलावे इह मनगा इंद
हफूलत है ममपह तुरंगम भौन ह
हाए लिषपत्र हभूपति मोहरयो
धन लिखावह और वंगालह जाए
इह गांउ दए कहु और कहे नरजे इह

भांत रचीत धाए तिनके उरसांति
की कौनकथा इम चिंतत्हीं जगमा
हि वताए २९
भाषाटी॥ लोभकहैहै हे प्यारे मित्र
जोमैने पकड़ होयेजनहैं सो काम
नारूपी जो नदीयांहैन उनोंकीयां
जोपंक्तीयांहैन उनोके पारलंघने
को समर्थावालेभी नहीहोतेहैं फेरक
हा शांत्यादिकोंकी चिंतना करेनगे
हे मित्र देषने मेरा चरित्र धर जो लो
भी पुरुषहैन सो ऐसा चिंतन करते
हैन इहु मेरे मदवाले हाथीहैं कैसे
हैं मदरूपजो मसीहै उसकरके शो
भाइमान कपोल स्थल जिनोके ऐसे
हैन और मेरे तुरंगहैन वायोंतेभी
शीघ्रचलनेवालेहैन फेरभी इनोंत

प्र॰चं॰
भा॰टी॰
११३

113

और कष्ट मिलनगे इह धनमैने लभ्या
है इस्से अधिकभी कष्टमिलेगा ऐ
से अनेक प्रकार चिंतांकरके जीर्ण
होया चित्त जिनेंका ऐसे पुरुषांकों
कामनेंाके ध्यानकरणेवालेयांकों
शांतीका कोईवातभी नहीहै ५०
क्रोधोवाच॥ मोहप्रभाव हमीन हनो मा
म संगरहत जन इह कमाए तह्वाहिज पु
तह्ने मघवा सिव सीसने विरंचके का
टवगाए वाऊज मारहेरोणतमै भृगु
नंदन आपभली विधनाए हवसिष्ठ
नीश्वरके हतने मुनिकोंसिक आपह
नो हतहाए ॥दोहा॥ विद्याकीरतवंत पु
निसदाचार दातार मै पद श्रनाए नर
भूषना छिनमै भजे विचार ॥
भाषाटी॰॥ क्रोधकहतभया हेमित्र क्या

तैने मेरे चरित्रका प्रभाव नही जाण्याहै
सो तुम सुणो जो देवतोंका बडा इंद्र है

मूल॥ क्रोधः सखे विदितस्त्वया मन्यु।
भावः तथाहि त्वाष्ट्रं वृत्रमपातयत्स्व
रपतिस्संद्रार्धवृद्धोच्छिनत् देवो ब्रह्मणो शिरो।
सिष्टतनयानाघातयत्कौशिकः अ
पिच विद्यावंत्यपि कीर्तिमंत्यपि सदा
चारावदातान्यपि श्रेष्ठैः पौरुषभूषणा
न्यपि जलान्युद्वहंते मौग्ध्याः क्षणात् ५२

भाषाटी॰॥ जो देवतोंका बडा इंद्र है सो भी
मेरे आज्ञाते पूर्वकालविषे वृत्रनाम।
वाले ब्राह्मणको मारता भया अरु जो
चंद्रशेखर शिव है सो भी मेरे आज्ञाते
ब्रह्माके सिरको छेदता भया और जो
प्रसिद्ध कुशिकवंशते उत्पन्नहोया वि
श्वामित्र है सो भी मेरे आज्ञाते वसिष्ठ

प्र.वं.
भाटी.
११४

मुनीश्वरके शत्रुओंको मारताभया हे मि
त्र इतनियोंवालोंभी क्याहैं संग्रहकरा
के मेरे तेजको तूं लए इह जो विद्यावा
लेभी कुलहैं तथा कीर्तीवालेकुलहैं
अरु सदाचारकरके शुद्धहोइभी जोकु
लहैं उचाउरूपवकारहैं भूषण जिनाका
उनोंकोमैं तृणमात्रते मूलसे निकाल
नेको समर्थावालाहौं ॥५३॥
मूल॥ लोभः त्वत्सेइतस्तावन्मयि भूपत
सा किं प्राणवेद्ग संजउस लोभः प्रिये
ष्यतां ५३ हेचग्राम वनादि पत्तनपुर
ली पत्तनमामंडल प्रत्याशायनरूप बद्ध
मनसां लक्षादिकं ध्यायतां त्वत्सेदेविप
टिप्रसीदसितनो छंगानि तुंगानि चेत्त
सो प्राणभृतां कृतः ग्रामकथा प्रसोड
लैरपि ॥५४॥

लोमउवाच॥ चौपई॥ तसे ग्राउ वेग इतउरा
मेरा भेन सने सुनि भोरा तसा वैटस
मीमउचारे शाप्याकरा सु प्रणप्यारे
लोमकही सुणि प्राणप्यारी षेतग्राम
पुनिनगर उदारी पुरुग्रह दीप भूम
को चहे ग्रास पास जिनके मनगहे
तिनपर कृपा ग्रेसी करयो ब्रह्मांड ला
घनहि ता मनभरयो तसे ज्ञा उरवरा
ण टिकेहे सो तिकहा जगति नरपेहे॥
भाषाटी०॥ तिसते उपरांत लोमरंगभूमे
के बाहर हृषीपाइके ऊचे कहकरके
हैहे हे प्यारी तसे तूं इहां ग्रंदरग्राउ
तसा भर्ताके वचनको सुनकरके रं
गभूमीके ग्रंदर प्रवेशाकर कहदे देषी
तम क्या तम मेरेको ग्राज्ञा करतेहो
लोमकहतभया हे प्यारी तम इहवा

प्र चं
भा टी.
११५
115

त ५३ हे प्रिये तूंसे जवतूं प्रसन्नहोवे
गी अरु अपने उचे अंगाकोभी तूं वि
स्तारकरेगी तब लाभवाले देहधारी
योंको ब्रह्मांडोंके लद्दपाइकेभी कह
शांतीकीभी कथाहोवेगी कैसे इहला
भवालेहैं एकजो लेगहैं अरुग्राम अरु
वन अरु पर्वत अरुकोट अरु नगर
अरु द्वीप अरुपृथ्वीमंडल इन्नें पदार्थों
की आशारूपजो बनासूत्रहै उसकरके
बध्याहोया चित्तजिनोंका ऐसेहैं और
कैसेहैं लाभहोये पदार्थोंतेभी औरप
दार्थोंविषे ध्यानवालेहोतेहैं ॥५४॥
मूल॥ तस्मा अजउत अंजे ववादाव अं
पतस्मि अमेयणीवं अहि पुत्तासंपदं
अजउनस्स अस्माप ब्रह्मांडकोटिहि
अविणामे उअहं एव इस्माहि ॥

क्रोधउवाच॥चौपई॥ हिंसे आउइत मम
उरा भाषत बैन सुनो तुम मोरा इत
नेम हि हिंसा छिगआई आरयसुत
ममदेहु बताई
भाषाटी॰॥ तुम लाकहे हैं हे स्वामिन् मैं आ
पही इसकार्य विषे नित्य उद्यमवाली
हो तोभी तुमारी आज्ञाकरके इसवे
ले ब्रह्मांड कोटी करके भी मेरा उदर
नहीं पूरणहो आवेगा
मूल॥ क्रोधः हिंसेइतः आगम्यतां प्र
विशति हिंसा प्रसक्तिआणावेड अत्र
उक्तो क्रोधः
चौपई॥ तुम मम धरमचारिणी नार
यह तव संगतिको उपकार मात
पितादिक वधहै जोई करो सुखेन
दे नहि कोई ॥५५

प्र॰ चं॰
भा॰टी॰
११८

116

भाषाटी॰॥ क्रोधकहैहै हेमेरीप्यारी हिं
सेतंभी अंदरआउ हिंसा भनीकेवच
नतें रंगभूमीके अंदर आइके कहतीहै
हेस्वामिन् मैआइआमहेहाईहों मेरेको आ
ज्ञाकरो ॥

मूल॥ क्रोधः प्रियेत्वया सधर्मचारिण्या
मातृपितृवधो ममेष त्कारएव नशाहि
केयंमाता पिशाचीकइवच जनको श्री
तरः केयकीटः वध्योयंवसुवर्गः कुटि
ल विटसहचेष्टितास्तातयोमी हत्वा
निष्पीड्य आगर्भं यावदेषांकुलमिदम
खिलंनैवनिःशेषयामि स्फूर्जंतः क्रो
धवह्निर्दहति विरति तावदेतेस्फुलि
गाः॥ ५६॥

सवैया॥ कौन पिसाचन मात अहे पुन
कौन समकउतातहमारे आन समे म

सकीट समान सबांधव पुंजबने सम
मारे तात तई चलहै सभही इम बो
लतहै नत्रुकी सघकारे मीच दोउ
कर क्रोध वली कवि सिंघ गुलाब सु
पढ़उचारे ॥नराजछंद॥ सुगुर भलो इसे
झले सम सत ग्यान मारहो जुवाल
वालविष लौन पकको डबारहो सम
सत भूमिके विषे नयाहिको रहाइहै
सुक्रोध ज्वालनैनकी विरामतो सुपा
इहै ॥१५७॥

भाषाटी॰॥ क्रोध करैहै हे प्रिये तूं जो मे
री सहधर्मचारिणीहै तेरे कारके मैने
माताका अरु पिताकाभी मारणा सु
षकरकेही करणाहै सो तूं देष ५५
इह जो मातारूप पिशाचिनी सोभी
कौनहै अरु इह जो पिताहै सोभी कौं

नहै अरु जो भाई हैन सोभी कोईकी
टहैन अरु जो इह बंधुसमूह हैन
सोभी कोनहैन अरु जो कुटिलचेष्टा
वाली संबंधरूपी कंजर है सोभी कोन
हैन इह सारे निश्चै करके मारएजा
गएहैं क्रोधदोनोहाथोंको मरोरकर
के फेरभी कहैहै मै इनों सारेयोंका
गर्भोंनेले करके सारा कुलका नही
मूलते निकालोंगा इनों सारियोंका
देषकरके जो मेरेको उठियाहोया
क्रोधरूपी अग्नी है उसते उठेहोये जो
विलकनेवाले अंगारेहैन सो मेरे अं
गोंविषे नही शांतहोतेहैं ५८

मूल॥ विलोक्य पक्षस्वामी नउपसर्प्या
मः सर्वे उपसर्पन्तु जयतु जयतुदेवः॥

दोहा॥ हिंसा तृष्णा क्रोध पुनि लोभ मि

ले यहचार नाइ समीप स्वमोहके जय
जय कीन उचार ॥
भाषाटी॰ ऐसा संवादकरके सो चारजने
मनमुषदेषकरके कहनेलगे इह स्वा
मीजी वैठेहैं हमभी इसके समीप
जावेंगे ऐसी सलाहकरके सो चारही
जने राजेके समीप जाइके कहनेलगे
जयदेवजयदेव हेस्वामिन् हमने कौं
नकार्यवणाउणाहै सो आज्ञाकरो
मूल॥ महामोहः अहया स्लनयाशांति
रस्मद्वेषिणी मा भवद्धिर्निग्राह्येति सर्वे
यदाविषति देवइतिनिष्क्रांताः महामो
हः अहाया स्लनया ३त्पषतेपेण उपायां
तरमपि हृदयमारूढं तथाहि शांतेर्मा
ताश्रद्धा साच परंतंत्रा तत्केनाप्युपायेनो
पनिषत्सकाशान्नावक्ष्यहापकर्षणंक

प्र॰चं॰ भा॰टी॰ ११८ 118 र्तव्यं ततो मातृवियोग दुःखादतिसं
कुलतया शांति रुपरता भविष्यति
प्रवसीदति विनश्यति अथवामाऽस्तु ष्टो
मिथ्यादृष्टिरेव विलासिनी परं प्रग
ल्भेति तदस्मिन्विषये सेवकजनो पा
र्श्वेतो विलोक्य॥
महामोह उवाच॥ दोहा॥ सरधा सुतरी सां
ति है हम संग वैरुकमाइ तुमति ह
लि आवो बांधके समेरी पाइ सरधा
पुत्री बंधहित गए मान न पवे न ५०
चौपई॥ महामोह पुनि कीन विचारी
सरधापुत्री सांति निहारी तो निग्रह
को ठौर उपाइ सो मेरे उर भासयो आइ
चौपई॥ सांतिमात सरधा है जोई रहे प
रतंत्र सदा सुसोई उपनिषत विषे सर॰
धा नर जेती प्रथम हृदये सगली तेती

मानविशुकत जवे वड्डहोई मरे सो
ति षिण भीतर सोई सरथा वेग हन
वणकाज मिथ्या दृष्टि तुलये आज
इत उत भूपति दृष्ट पसारी विभ्रमाव
ती सुनाहि निहारी विभ्रमावती प्यारी
जाये मिथ्यादृष्ट सवोल लिआये ॥१५
भाषाटी॥ महामोहकहिया हे अधिका
रीयो इह जो श्रद्धाकी कन्या शांती है
सो तुमने दंडकरणे योग्य है सो के
सी है हमलोकोंके हे षकरणेविषे ब
डी है सो चारोजने ऐसा वचन सुणक
रके कहनेलगे हे स्वामिन् जो आज्ञा
करोगे सो करेंगे ऐसा वचन कहि
करके चारोंही निकलगये तिसते उ
परांत महामोहराजा मनविषे विचा
रकरता भया श्रद्धाकी कंन्या इह शांती

प्र० चं०
भा० टी०
११९

119

है इसश्रद्धाके नामलेनेकरके अब इ
सवेले मेरे हृदयविषे औरभी उपाययया
दशायाहै क्या इह जो शांती है सो श्र
द्धाके अधीनहै तिसीकारणते उप
निषदके समीपते श्रद्धाका खेंचलेना
किसी उपायकरके करणाचाहीये
तिसीकारणते उपनिषदके समीपते
श्रद्धाका खेंचलेनाचाहीये तिसीका
रणकरके माताके विरहके दुःखते सो
शांती उद्यमते हटजावेगी अथवा शि
थिलहोवेगी अथवा नाशको प्राप्तहो
वेगी काहेते जिसकारणते इह जो
शांतीहै सो बहुत कोमलहृदयवा
लीहै श्रद्धाकोभी खेंचलेकरणे को
मेरी प्यारी सखी मिथ्या दृष्टीही बहुत
चतुराई वालीहै मिथ्यादृष्टी क्याकरी

ये शरीरादिकोंके विषे आत्माकी दृष्टीहोनी इसीकारणते इस कार्यवि षे सो मिथ्यादृष्टीही आज्ञाकरणेको योग्यहै ऐसा विचारकरके सो महा मोह राजा एकपासे दृष्टीपाइके दासी केप्रति कहनेलगा

मूल॥ विभ्रमावति सत्वरमाहूयतां मि थ्यादृष्टिः विभ्रमावती यदेवा आज्ञापे दि इतिनिष्क्रम्य मिथ्यादृष्ट्यासह प्र विशति॥

विभ्रमावतीवाच॥ देवीकरीजो आइ सुमे को मिथ्यादृष्ट मिलावो ताको इमक हि त्याग अषाडेगाई मिथ्यादृष्ट सहि त प्रनिआई १५५ अथप्रश्नोत्तर विभ्रमाव तीका मिथ्यादृष्टीवाच चौपई॥ पेषे बहु दिनभयेतीन निकटजान लाजत

प्र वे भाटी. १२० वहुचीत महाराज उपलंबनकरे ता
ते चीत सषीममडरे ॥१५८॥
भाषाटी ॥ हे विभ्रमावति विभ्रमावती
क्या कहिये साधारण स्त्रीविषे विला
सावाली परमार्थविषे वहुत भ्रांती
वाली तूं जाउ सितावी वहुत विलासा
वाली मिथ्याहृष्टीको मदाइलेउ ॥
मूल ॥ मिथ्यादृष्टिः सहि चिरं द्विष्टस्सम
हारा ग्रस्सकरं श्रुत्ये किवसाणं श्रुत्वे
मे महाराजउवालहित्साहि ॥
विभ्रमावतीउवाच सषी तोहि शुभकंज नि
हारे तौभूपति निजप्राण संभारे तूंवा
कोहे श्रुति सैप्यारी तातें डरो न चीत
मझारी मिथ्याहृष्टोवाच ॥ सषी अलीक
सुभागहमारा काहेकोतै वहुत उचा
रा भूपतिमोमे चीतनधरई तूं ममका

हि विडंबन करई ॥
भाषाटी॰॥ विभ्रमावती कहैहै राजाजे
डी आज्ञा उसको करेगा सो मैने कर
णीहै ऐसा वचन करके सो विभ्रमा
वती निकलगई तिसते उप्रांत सो वि
भ्रमावती मिथ्यादृष्टीको साथलेकर
के रंगभूमीविषे प्रवेश करतेभई मि
थ्यादृष्टी कहैहै हे सखी चिरकालकर
के देखा होया महामोह है उसके मुष
को मै कैसे प्रकार करके देषोंगे महारा
जा मेरेको क्या उलामा देवेगा ॥
मूल विभ्रमावती सहित वह्नहदं सणो
ण अण्णं जिव महाराडो एवं इस्सदि।
ऊदोडवालहिस्सदि ॥ ॥
विभ्रमावतीउवाच ॥ चौपई ॥ सषी अलीक
सभागउचारे अवही तू निजनैननिहा

प्र चं
भा टी
१२१

रे नैननननजब भूप निहारे तो मैं रमे न
डौर विचारे डौर सखी इकवात उचारे
तुमननैन खंतोहि निहारो कारन कौन
न इंद्राकीनी तुमननैन सखी रसभीनी
भाषाटी०॥ विभ्रमावतीकहैहै हेसखी
मेरे तुवके देषने करके मो उत्पन्न हो
इगा हर्ष उसकरके राजा आपको भी
नहीजानलेवेगा फेर किस प्रकारक
रके तुमको उलामादेवेगा॥
मूल॥ मिथ्याहष्टिः सखि किम प्रलिखे
सोहयं संभावि अविलं वेसि
मिथ्याद्रष्टीवाच एकपतीके जे वड्भागी
तिनको नीद न नैन मझारी मोको स
कललोग जगारे नीदनैन ममकिर
विधलहे॥
भाषाटी०॥ मिथ्याहष्टीकहैहै हे सखीका

तू मेरेको झूठी सुंदरताकरके ठठाक रतीहै

मूल॥विभ्रमावती सहिसंपदं जिया जियापेसि अलिअंतरं सोहगस्स

विभ्रमावतीउवाच॥दोहा॥सषी प्यारीलो क वहुमोसोकरोउचार जो तो को नि सदिनभजे जो सो करे प्यार

भाषाटी॥विभ्रमावती कहैहै हे सखी अबही तुमारी झूठी सुंदरताको मैं देषोंगी औरभी तुमसुणो मैं तुमारे नेत्राको निद्राकरके भ्रमतेहोयेको दे षतीहै जद तू बहुत सुंदरतावाली नहीहै तद किसकारणते तुमारे ने त्रों अब दिनविषे निद्रा नही जाई र हतीहै ॥

मूल॥इच्छामि निद्दं उम्माउलेपिअस

प्र बे
भा टी
१२२

हीए लोअणं ये रयणामिता किं खुवि
उण अस्माणं सअलो अवलहाणं
मिथ्यादृष्टोवाच चौपई॥ सषी मोह मम
नाह पछानो काम क्रोध लोभ पुनि
जानो अथवा सुनो ततनिजसार एक
एक कहि करो उचार याकुल भीतर
जे निपजाए मोह विषे सगले मनला
ए बालबध जवा पुनि जेई मोविनर
मेन निसदिन तेई ॥कविवाच॥ दोहा ॥
कामक्रोध पुनि लोभ यह गुलाबसिं
ग मदमान तनमें आत्मदृष्ट विनहो
त नही पहिचान १८५
भाषाटी०॥ मिथ्यादृष्टी कहै है हे सखी
जो एकभर्तावालीभी स्त्रीहोतीहै ति
सकोभी निंद्यवहुत उलभ है फेर सा
रे लोकजिनांके भर्ताहैन ऐसीयां जो

हैन हमारे जैसे इस्त्रीयां उनोकों निद्रा की वातभी नहीहै॥

मूल॥ विभ्रमावती केके उणापि ग्रसा हो पडल्लहा॥

विभ्रमावतीउवाच॥ चौपई कामहि कीरति परमप्यारी हिंसा क्रोधकी शुनी सुनारी तृस्ना लोभदकी जगगेहै यावीध नारि सबौरवतैहै दोहा॥ तूं सभके पति सोरमे इहैवनावे मोह तेउपकी हैरही करे न ईरषा ताद

भाषार्थ॥ विभ्रमावती कहेहै हे सखी तेरे जो बहुत भर्ताहैं सो कौनकौन है

मूल॥ मिथ्याहष्टिः महाराज्ञी ग्रदो उवरि का मोही हलोद्धो ग्रहंकारोत्ति॰ ग्रहवा ग्रलंबिसेसए ग्रय जुलेज्जो दोनाम विण वालोघ विरानवाएा विहि ग्रहान्

प्र॰ चं॰
भा॰टी॰
१२३

अणिाह्निरंति दिग्राहाई सहरगणअहिरम
दि विभ्रमावती एंपम्ये कामस्सरदी
कोहस्स हिंसा लोहस्स तिन्हापरमपि
आस्व बुदिताएंकधजे पि अदमाणिव
रमंती इस्संएाञ्जहोसि मिथ्यादृष्टिः स
हेरसेमति किंभणि अदिनता अविमरे
विनासहूतं अवितिरंदि
मिथ्यादृष्टोवाच॥ चौपई कैसे सषी ईरषा क
रई मोविन प्राणनते छिन धरई रति
हिंसा तस्ना लोजेती मेरो भलो मना
वेतेती॥ कविवाच॥ दोहा मिथ्यादृष्ट
मेरे जब उल्लाव सिंचइम जान हिंसा
तस्ना आदिलेहो हिसगल छनहान
भाषाटी॰॥ मिथ्यादृष्टि कहेहै हे सषी तुम
पृथक पृथक कहाउ जो मेरे भर्तातेहैं प्र
थमममतामोह तिसते उप्रांत अहंकार

अथवा हेसषी इह विशेषकरके कह
नाहे तिस कारणते हेसषी इस ज
लविषे जोकोई उत्पनहोयाहै वाल
अरु वृद्ध अरु युवा सो सभही मेरेको
हृदयविषे रषनेसेविना रात्रीयोंको
अरु दिनाको नही लंघने सकतेहैं
विभ्रमावतीकहैहै हे सषी कामदे।
वकी भार्यातूसाहै ऐसीवात हमने
सुनीहै जद तुमभी इनोंके गलविषे
लगतीहै तदक्या तुमारे देषनेकर
के इनोंके स्त्रीयोंको ईर्ष्यानही उत्प।
नहोनी हेसषी ईर्ष्याकी क्यावातहै
सो इनोंकीयां इस्त्रीयांभी मेरे विना
क्षणमात्रकोभी नही ठहरतीयांहै
मूल॥ विभ्रमावती सहि अदो जेवभ
णामितुहुंसरिसीसहः इय्यग्गापद्द।

प्रबं
भाटी.
१२४

125

मोपणाप्यि जापसेहगा महहि विह्वरी
ते अहिअआसखेनी ऊविपसाअंपडि
छंदि मरि अणंखु भरणामिपवंणिद्दा
उलहि अआविशं झूलखेलेनरखलण
ए उलफंकाल अहलयग दीप महारा
अंसेदाव अंदीसं किटहि अअंकारिर
सादिपियसहितितकोमि
विभ्रमावतीउवाच॥ याहीते सखी मोह
बखानी तोसम सभन हमरतानी तो
हि सभागन वेवहलहै तेगतहूप प्र
साहहयदे १०. सवैया॥ सखी ऊँर कहै
निज नीद विनाअगनैन सुरोज सते
अजलाप अगनूपरकी धुनि चीतर
हे परभूमविषे परभूमविषे परते खल
साप गज गामिनि तें गति मंदचले।
उरवाहतहै निज नाहरिकाप अहल

षण जैं नवनाहि पिषे उरहे उरसंकक
रे सुनसाप १९१

भाषार्थ ॥ विभ्रमावतीकहेहै हे सषी
इसीकारणते मैं तुमको कहतीहैं तेरे
समान सुंदर स्त्री कोई भी सारीसृष्टी विषे
नहीहै जिस तुमारीकी जो सुंदरताहै
इसकी जो संपनहै उसकरके आकुल
होया चितजिनांका ऐसीयां जो सोक
नीयांहै सोभी तेरेने प्रसादको चाहती
यांहै ऐसी इस जगतविषे कौनसी होई
है हे सषी औरभी मैं तुमको ख्यानक
हतेहैं जिसवेले तुमाराजीके पासजा
वोगी उसवेले राजा तुमको देषकरके
मनविषे तुमारी शंका करेगा ऐसीवा
तमै विचारतीहैं तिसकारणते तुमनि
श्चाकरके आकुल हृदयवालीहै प्रक्र।

प्र. चे.
भा टी.
१२५

मंदमंद चलनकरके बहुत शोहवाली
जो चरणोंका फाकरा है न उनोकरके
शोभायमान है॥

मूल॥ मिथ्यादृष्टिः किंपश्य संकिवणोदृ
ह्याणं महारा श्रणि उत्ताणं जेव पसो
विणश्रो श्रवि श्रसहि दंसणा मनय सं
णाणं भविज्ञाने केरिसंभग्ग

मिथ्यादृष्टीउवाच॥ सवैया॥ सषी काहेते सं
कभए त्तुमको हमनाहको हमनाह
की श्राइ हमे सषपाए इक श्रोर कहे
सउमोह श्रली जिहते सगलो उहतो
हि मिलाए श्रवती शशिबंद निहारत
ही नरवीत चकोर महाहरषाए हग
कंज फिराइ पिषे ज्जवती कहिता गत
जो नरना परसाए

भाषाटी॥ मिथ्यादृष्टीकहैहै हे सषी इस

विषे क्या शंका करणी है जिस कारणते
महाराजेने आज्ञा कीनी होई हमारे जे
सी इस्त्रीयोंके दर्शन मात्र करकेही प्र
सन्न होती हैं उनोंते कैसा भय होता है
मूल॥ महामोहः विलोक्य अग्रे संग्रामे
व प्रिया मिथ्यादृष्टिः पापघा ५८ श्रोणी
भारभराल सादर गलन्माल्यापहृति।
छला लीलाञ्चितभ्रूलताप दर्शितऊवा
मीलत्पांकावलिः नीलेंदीवर दाम
दीर्घतरया दृष्ट्याधयंती मनो दोलांवो ५८
लीनलोल कंकण रण त्कारोत्तरं सर्पति
दोहा॥ इम भाषत दोनो चली अवित मो
हनिहार देखी मिथ्या दृष्टि यह ऐसे ।
कीन उचार ॥ सवैया कदली समजंघ ।
विरंच रची पुनि फूलन माल सकंठ
सुहाए कर चंचल चीर उभारत है ऊच

प्र.चं.
भा.टी.
१२६

मंडल चंदन लेप लगाए जन नील सा
रोजबडी अषी आषिघ दीरघ मे मनको
निपताए करडोलत कंकरा बोलत है
धुनिन्नूपर कामसिषी हरषाए प्रवंचे
द सरोज मनो अषीआ इति दाडम दंत
न हेरलजाए जराकाम निदाघतपे ज
नजे हग सिंच सुधा तिन ताप मिटाई
नभ चंदकला जनभूमि अई इन पेषन
ते मनमे विगसाई सुगलाव पिषे म
ध मूरतसीमल मूरत नानहि देत दि
षाई १२५

भाषाटी॥ तिसते उपरांत महामोह राजा
अगे हष्टी पारके कहनेलगा वडा आ
नंद है जिस कारणते इह मेरी प्यारी
मिथ्याहष्टी आमहोई है इह मिथ्याहा
ष्टी हमारे सामने इदरही आवनी है के

सीहै कटके भारकरके वहुतआलस
होया जोवलीयांवाला उदरहै उस्के
मध्यविषे प्रस्वेदकरके वेधहोये जो
पुष्पाकीयांमालाहैन उनांके संवाल
नेके वहाने करके उठाया होये जो भु
जहैं उनांके उठावने करके प्रगटहोए
जो भुजहै उनांके उठावनेकरके प्रग
टहोएजो स्तनहैन उनांके विषे लगे
होइ जो नख हतहैन उनांके पंक्ती
यां करके शोभायमानहै अरु कैसी
है नीलोत्पल पुष्पाकी जो मालाहै
उस्केभी वहुत लगी जो हृष्टीहै उसक
रके मनका पीवने वालीहै ओर कैसी
है भुजाका विषे चंचल जो कंकणहैं
उनांका जो कणत्कारशब्दहै उसकर
के मनको हरणे वालीहै ५८

प्र० वं०
भा० टी०
१२८

127

मूल॥ विभ्रमावती पश्य महाराजो उ
वमप्यत्रपि प्रसह्य मिथ्यादृष्टिः उपह
त्य जयत्व जयत्व
विभ्रमावती॥ यह महामोह सब प्राणपति
तूं प्रति प्यारी नारि चलो समीप प्रसे
न कर भाषयो मान हमार सुनि के मि
थ्यादृष्टि तब जाइ समीप निहार म
हामोह महाराज प्रति जय जय कीन
उचार॥
भाषाटी· विभ्रमावती कहै है हे सखी तु
म देखो इह महाराजा बैठिया है तुम
भी इसके समीप जावो मिथ्यादृष्टी
समीप जायके कहने लगी जयदेव·
जयदेव॥
मूल॥ महाराजो महामोहः प्रिये पश्य
दलित जवनखांक मंकपाली रचय।

ममांक मुपेत्य पीवरोरू प्रत्नहर हरि
णा शंकरांके स्थित हिमशैल सुता वि
लासलक्ष्मी ८८ मिथ्यादृष्टिःसस्मिते
नथा करोति महामोहः आलिंगन सु
खमभिनीय प्रहोप्रियायाः परिष्वंगा
त्पराहृते नवयौवने तथाहि ८८ यःश्रा
गासीदभिनवनयो विभ्रमावामजन्मा
विलोन्मायी विविध विषयो पल्लवानं
दसांद्रः स्मेरेन्न स्मरयति नवा स्नेष
जन्मा सकोपि प्रौढ प्रेमा नव रव पुन
र्मन्मथो मे विकारः ८९

महामोहउवाच दोहा।। पीन उरू ऊच श्रं
क मिलकी जे मोह निहाल हरनाषी
सिव सिवाको सोभा हरो विसाल ह
सीस मिथ्यादृष्टी तन मिली सुभुजाप
सार महामोह सुष ताहिको निजसुष

128

करेउचार ॥दोहा॥ अहो प्यारी संगत ब
लह्यो रसाइन सार जराइका गर मे
टि पुन जोबन भयो उदार ॥सवैया॥
सख जो नव जोबन मे सु मनोज वका
र भयो बलकारी चीत मध्ये उर आनंद
यो सभ और पदारथ थे सुषकारी
चीत इकागरता जरठापनते सुष चंद
अमीस निवारी संगमते नव जोबन
मे अब फेर भयो नव प्रेम उचारी ८८
कविवाच दोहा॥ तरुनापन भजि विषे सु
ष वहु दिन भजे मुरारि जरठापन वि
न भाग सठ युवती मदन विकार
भाषाटी॰। महामोहक है है हे प्रिये ५५
हे मोटे पदों वाली तुम मेरे गोदी विषे
आइके वडे ऊचों कर के सुष देने वाला
जो हमने वहुत कर के चाह्या हो या

आलिंगनदेहु सोदेउ हे हरणलोचनी जैसे शिवजीके गोदी विषे इस्थितहो करके पार्वती वहुत विलासोंकरके शोभतीहै तैसेही तुमभी मेरे गोदीवि षेहोउ ८९ मिथ्याहष्टी इसकरके तैसा ही करतीहै तिसते उपरांत महामोह राजा आलिंगन सुषकरके रोमहर्षादिक दिषाइकरके कहनेलगा वडा आश्चर्यहै जिसकारणते इस प्रियाके आलिंगनेते मेरेको नवीन युवावस्था फेर उठआईहोई जैसीहै हेप्रिये सोतुमदेष ९१ जो हमको सर्वकालविषे कामविकारहोताथा सो नवीन युवावस्थाके विलासोंते शामहोइ जन्मवालाथा और चित्तको मथनकरणवाला था और नानाप्रकार विषयभोगोंके

प्र.चं.
नाटी.
१२५

भोगनेते उत्पन्न होयाजो आनंदहै उ
सकरके गाढ्या सोईही कामविका
र अब इसवेले मेरे अंतःकरणके हमी
यांको छिपाडलेताहै कैसाहै तेरे श
रीरके मिलनेते उत्पन्न होयाहै और प्रौ
ढ प्रेमवालाहै और कहनेमें नहीआ
उताहै हे प्रिये मानो तुम इह नवीन
यौवनकरकेही कोई विकारउत्पन्नहो
याहै ८२ ॥

मूल॥ मिथ्यादृष्टिः महाराअ अहं विसे
पढं नवजोवणावि असेवुलाए खुभा
वाओ वईप्रेमकाले णविहरोदि आ
णवेदुभट्टा किंणिमित्ते भट्टिणावि म
रिहसि ८३

मिथ्यादृष्टिरुवाच॥ सवैया॥ महाराज कहो र
कवान सुनो जिह उपर होत कृपाल।

पीयो जगसरण ताहि मनोरथहै क
छुचाहत नावहु और बलीयो नवने
वनते संग मोह लयो विर सेवनते
किह कामजीयो कर आइ सवेगकरो
भरता ममजादि निमित्त सयादकीयो
भाषाटी॥ मिथ्यादृष्टी कहै है हे महारा
ज मैभी इसवेले नवीन यौवनकरके
वदलीहोई जैसीहों हे पति निश्चेकर
के इहबात तुमसरण चित्तकरके व
ध्याहोया जो प्रेमहै सो चिरकालकर
केभी नही नष्टहोताहै हे पते तुममे
रेको आज्ञाकरो किस निमित्त तेने मै
यादकरीहै ८३
मूल॥ महामोहः प्रिये स्मर्यते मह
वामोहयो भवेदुदयाद्वहिः मत्त्विता
भिमो भवती आलभं जीवराजने ८४

प्र॰ चं॰
भा॰टी॰
१२

120

सवैया॥ तोहि विना रतहो निस वासर
वाम उह सनिध्यारी मोहप्यारी मोहि
दिवार यथा पुतली तिमनीति वसो
ममचीत मकारी चीतविषे तव प्रेम
रहो ममनीतषिरे समनो नकीवारी
मिथ्यादृष्ट प्रसंनभई सुप्रसादिकयो
सुषप उचारी १८४

भाषाटी॰ महामोहकहैहै हे सुंदर प
टंवाली प्रिये क्या तुम मेरेको ऐसेहो
रको याद करती है जो तेरे हृदयते
वहिरस्थितहो परंतु तुम मेरे हृदय
रूपकंदराविषे प्रतिमाजैसी भासती है

मूल॥ मिथ्यादृष्टिः महाप्यमादो त
थापि प्राणावेउ महाप विवेकेन स
हउपनिषदं योजयते कहिनीभा
वमुपपन्ना अतः ६५ प्रतिकूलाम

कुलजा पापा पापानुवर्तिनी केशोष्ठा
कृष्णता दंडा पाषंडेषु नियोजय ९९
महामोहउवाच ॥ दोहा ॥ और कहो दासी सु-
ना सरधा सांति सुजान हुती भई विवे
ककी पत्रलिषे मदमान उपनिषत
विवेक मिलाप किन भई ऊठणी जोइ
जिहिविधहोइ मिलापनहि करोपाइ
सुकोइ एक उपाइ समै कहो वही क-
रो मनधार सरधा जो उपनिषतकी सो
अब देउ निवार प्रकृतीनी प्रतिकूल
मम सरधा पापन नारिके सनने गहि
ताहिको देहु पषंड मतिधार
भाषाटी॰ हे पति बडा प्रसाद है तोभी म
हाराज हमको कछु आज्ञाकरे महामो
हकहै है हेप्रिये जैसे प्रकटकीने होइ
ऐसेगाकरके तुम सब जगाविषे विचरती

प्र० चं०
भा० टी०
१३१

131

तीहै तैसाही तुमने रहणा चाहीये है
प्रिये ऊंरभी बात तुमसुणउ इह जो दा
सी कन्या श्रद्धाहै सो विवेक राजेके सा
थ उपनिषदनामस्त्रीको मिलाउणेवा
ले दलाली भावको प्राप्तहोईहै इसी
कारणते ५५ तुम उस श्रद्धानामरंडी
को केशोंविषे षैंचले करके पाषंडिलो
कोंविषे वैठाउ सो कैसीहै हमारेलोको
विषे विपरीत आचार रचाउणेवालीहै
ऊंर उहकुलते उतपत होईहै ऊंर पापी
है ऊंर पाप पुरुषोंको पिछे चलनेवा
लीहै ॥९९॥

मूल॥ मिथ्यादृष्टिः पदह मनके विवि।
सप्रश्रलंमहीणा अहिणिवेसेण वञ्चण
मेतकेणछेव भहिणा दासी सद्धा अणं
करिस्सदि साउ मश्रेस्यां धम्मे मिथ्यामे

रखो मिथ्यावे श्रमष गोमिथ्यासङ्गवि
या श्रराधि मिथ्या सत्य पल विदाई मि
थ्या स्वगाफल विजेति भणिजतीपवे
श्रमर्गाजेव पलिहलि स्सादि किंडएा उ
वणि सदं श्रविश्रवि सश्राएा दविश्रक
मोरखेदो माण देस श्रंतीप डवणि स
दो विविरता करिस्सादि श्रपिरं मणम
स्हा॰ ॥
मिथ्यादृष्टोवाच॥ चौपई॥ यह कारजकी
चिंतनकीजे ममवचननते भयो पिषी
जे मेरावचन सुने जवरंडी तजे वेदपा
थभजे पषंडी मेरो जीवन जबलगहो
ई वसे पषंड ग्रहते पदधोई मिथ्याध
रम मिथ्या गुरुकनि मिथ्या वेद मया उ
गनि॥ दोहा॥ याविधि मेरे वचन सुनि
तजे वेद पथ सोइ जन वेदन सरधा।

प्र.चं.
भा.टी.
१३२

132

मिटे कहि उपनिषतमै होइ ॥ सवैया ॥
जहं थान सुपानन नी सुषहै वह मो
षकहो कन आवतकामा परलोकन
ही सुषहोइकहो उलटे सुननारि जाव
तधामा जगवंचनके हितबयो नरवी
जनहरत वेदधरे तिननामा सरधा स
निया पाथिवेदतजे सुप षंडनके वस
है वहवामा ॥ १६२

भाषाटी॰ ॥ मिथ्यादृष्टी कहैहै हे प्रिये हे
प्रिये इतने मुडे कार्यमात्र विषेभी जो
वहुत यत्नकरके तुमारा आज्ञावचन
है सोरहे जिसकारणते इह श्रो दासी
श्रद्धाहै सो हमारे वचनमात्रकरकेही
आपदी आज्ञावहुत आदरकरके करे।
गी हे प्रिये तुम निश्चयकरके इहवा॰
तजानो जिसवेले मेउसश्रद्धाको ऐसी

वातकहेंगी क्या इहजो धर्महै सोमि
थ्याहै अरु मोक्षभी मिथ्याहै अरु वे
दमार्गभी मिथ्याहै अरु शास्त्रोंकाजो
वकवादहै सोभी मिथ्याहै अरु संसा
रके सुखोंका विघ्नकरणेवाले जो सा
धूलोकोंकेवचनहै सोभी मिथ्याहैन
अरु जो स्वर्गभोगोंकी विभूतिहै सोभी
मिथ्याहै इतनीयां वातां सुणकरके
उसीवेले सो श्रद्धा वेदमार्गकोही त्या
गकरेगी फेर उपनिषदके मिलनेकी
कोई वातभी नहीहै हे प्रिये और वात
भी तुमसुणो इहजो उपनिषदहै सो
मुक्तीका कारणहै मै उपनिषदते अ
त्यंत वैराग्यवाली होईको इस श्रद्धाको
शीघ्रही रचोंगी जिसकारणते मैंलोकों
को इसमुक्तीविषे कहांसवेहै इहस

प्र॰ चं॰
भा॰ टी॰
१३३

स्त्रीकैसीहै विषयभोगका जोआनंद
है उससेरहितहै

महामोहः यद्येवं सहृमेप्रियं
संपादितं प्रियया पुनरालिंग्यतुंवति

महामोहउवाच चौपई ऐसेकरे प्यारीज
वही मेरो इष्ट सिधि जगनवही इम
कहि प्रेमभयो अधिकाई पुलकहृमयो
गहि कंठलगाई

भाषाटी॥ महामोह कहैहै हे प्रियेजब
तुम ऐसीबातकरेगी तदतुमजानो
इहहमाराकार्यसंपण्णहोयोहै उसते
उपांत महामोहराजा स्त्रीके साथ फे
रभी आलिंगनकरके उसके अवेकों
छुमताभया ॥

मूल॥ मिथ्यादृष्टिः भद्दिग्णापआमे
विपचे पडत्तेन लज्जेमि

मिथ्यादृष्टोवाच भूपतिहै यह नहि रीति
रहैहै मेरोचीत सबहत लजैहै
भाषाटी॥ मिथ्यादृष्टीकहैहै हेप्रिय सारे
सभालोकोंके सामने ऐसा ब्यवहार
करणेवाले तैने करकेमें लजतीहो
मूल॥ महामोहः नङवत्त वासागारसे
वशविशगवः इतिश्री प्रबोधचंद्रोदय
नाम्निनाटके हितीयोंकः २
महामोहः महामोह नबकीन उचारा ध
सयोवने अव भूप अगारा ॥दोहा॥ ऐसे
ऋषी बषानके गए अषाडे त्याग पिष
भूपति बिसमैभयो गुलाबसिंघ वड २
भाग करुणा सषी समेत भनि सांति
हसीलउदार जैहै सरधा सोध हित जा
ग सम मंघ मकार ॥१८॥ इतिश्रीमनमान
सिंघचरण सिषनगुलाबसिंघेन विरचिते

प्रबोधचंद्रनाटके द्वितीयोंऽकः ॥ २ ॥

महामोह कहै है हे प्रिये तद होवे चलो
मंदरको टडीविषे दोनोही जने प्रवेश
करेंगे ऐसा वचन कहकरके सो दोई
हीजने निकल गये ॥ इति श्री प्रबोधचंद्रो
दयनाटक भावार्थदीपिकायां महामोह
राज्यव्यवहारो नाम द्वितीयोंकः ॥ २ ॥

मूल ॥ ततः प्रविश्यतिशांतिः करुणा
च शांतिः सास्रेमाता ः क्वासि देहि शि
ये दर्शनं ततः शांतिः १

दोहरा ॥ माया जिह जग मोहियो बहुत
कुपंथ भ्रमाइ वह रघुनाइक दासके
होवहि नीत सहाइ ॥ १ ॥ दोहरा ॥ जिहि वि
धि कलियुग फैलयो सगल भ्रमाय लो
इ गुलाब सिंघ नृप सभामो प्रगट
दिषावन सोइ ॥ सवैया ॥ तेइह भांतिगय
जबही तब सांति तथा करुणा तहि
आई ऊंच बुलावतहो जननी मम उ
तर देहि कहा मम माई सांति सुनै ने
ननीरबहे कहिमातगई नहिदेत दि
षाई तो विन जीवन मोह कहां अब
प्राणतजो सलगे उषदाई १

भाषाटी ॥ तिसते उपरांत एक शांती श्री

प्र.चं.
भा.टी.
१३५

135

रहजी करुणा क्याद्या इह दोनो
रंगभूमीविषे प्रवेश करते भये प्रा
ती अस्तपातोंके समेत कहनेलगी
हे माता श्रद्धे तुम कहा गईहै तुमसे
देको कोईवचनदेउ वडाविषादहै १

मूल॥ श्रुत्वा तेकऊरंगकाननभुवःशै
लाःस्खलन्निर्झराः पुण्यान्यायतनानि
सेततनयो निष्ठाश्च वैखानसाः यस्या
प्रीति रमीश्र साच भवती चंडाल वेश्मा
दरे प्राप्तागौः कपिलेव जीवतिकथं
पाखंडहस्तंगता २

सवैया॥ मृगरंजित कानन प्रीति ऊ
ती जल सैलनमे तवप्रीतनई अति
पावन थान नप्रीतहूती तप सोतन
मेलि वली नभई जिम भोन चंडाल
गऊ कपला तिममान पखंडन हाथगा

ई अवजीवन मातको होतकहो तउ
ऊर इहां यमलोकगई चित्रनोहि पि
सोपाटी॥ हे माता अहे देषो इह बनभू
मीयां हैंन कैसीयां हैंन त्यागकरिया
दुःखकी शोका जिनोने ऐसे ऋषेराजि
नोविषेहें और इह पर्वतहें कैसेहें
चारोतरफ वगने वालीयां जलधारां
जिनोकेविषे ऐसेहें और इह पवित्रता
वाले देवत्याके मंदिरहें और इकवान
प्रस्थलोकहें कैसेहें अविछिन्न तप
विषेही निष्टाकरा स्थिती जिनोको ऐ
सेहें हेमाताः जिस तेरेको इनों इनों
पदार्थोविषे सदाही पूर्वकालविषे प्री
तीहोतीथी सोई तुमकेसा प्रकारकर
के अब इसवेले पाषंडिलोकोंके हथ
कोप्रासहोईहै हेमातः जैसे चंडालोके

वरविषे प्राप्त होई कपिला गौ करुक
रके हीजीवती है तैसा ही तुमभी पाष
डिलोकों कि वरविषे कहांजीवेगी २

मूल॥ अथवा अलं जीवन संभावनया
यत: २ मामनालोक्यन स्नातिनभुंक्ते
नपिवत्यय: तमया रहिता अद्या अह
तेमपिजीवति ४ तहिनाप्रहया अह
तेमपिशांते जीवने विडंबन मेव तत्स
विकरणे मदर्थे विना मारचय याव
दचिरमेव हुताशन प्रवेशेन तस्या:
सहचरी भवामि

सवैया॥ विन मोहि पिषे नहिनावतथी
अहनाहि कछुजननी भषपाए नहि
सोवत मोहि विना कविही न हि मो
हि विना पयि माहि सिधाए सरधा
विन मोहि पिषे मरती नहि एक मह

रति प्राण रहाए अबतो बिनु जीवन
मोहि विडंबन प्राणवने यम धाम ।
सिधाए करण सजनी अव सांति म
रे जगते मम देहु चिता रचनाई अ
व मोहि विलंब सहातनही तनु देउ
हुतासन माहि जलाई जन चीन निवा
सनजो सजनी नहि जाउ जाहां सुगई
मममाई सुनि सांत विलाप महां क
रुणा द्रिगनीर बयहयो सुलई गलला
ई ॥ ६ ॥
भाषाटी॰॥ अथवा तुमारे जीवनेकी शे
काभीरहे जिसकारणते १ तूं मेरे वि
ना स्नानभी नही करतीथी ओर मेरे
विनानही घाउतीथी ओर मेरे विना स्ना
नभी नहीकरतीथी ईतनीयां वांतांभी
क्याहैन सो तुम अउ मेरे विना अर्थात

प्र॰ वे॰
भा॰ टी॰
१३०

णकेभी नही जीवतीथी सो लछमे
रीमाता अद्रा अबभूयही मतहोईहो
णी तिसीकारणते हेमाता अद्रेतेरे
विना मुहूर्त मात्रकोभी हमको जीव
णहासाहीहै ध तिसी कारणतेहै मा
तश्रद्रेतेरे विना मुहूर्तमात्रकोभी ह
मको जीवणहासाहीहै तिसी कार
णते हेसखी करुणी लछमेरेवास्तेवि
लारचो तिसकारणते मे शीघ्रही वि
ताविषे अग्निप्रवेशकरके तिस माता
अद्राकी सहगमही होजावोगी
मूल॥ करुण सासे साहि पवे विसमञ
लण जाला उल कणि कड्डु ड्डःसहाइं
अर खिवाइं जेवतीसवधा विल्लतजी
विइं मकेरासितायमी दड्ड अडनके
धारे उजीविइंपि असही यावइंहो नदो

प्रणेयस्य अमसे संप्रति अणसमाउ
लै समाइ रथीतीरे स्वनि उण निहवे
अस्तिः कथावि महामोह भीवांकहिं
वियच्छंस्माणिवसति
करुणाहवाच सवैया॥ सजनी इहभांति
कहै सुष अषर ज्वाल मनोरु दवानल
की सनि प्राण विलान टरात नही उ
र मोहि भयो मछुली थलकी सुरू
रति प्राणधरो सुष कंज प्रसन नहो ह
लकी अब सोध लहै जगमै सरधान सु
ई कछु वाति भई कलिकी इत आउत
सुन अरंन्यपिछे सुन आश्रम जो सुनपो
वनमाई नट गोमतीके यमुना तटमै
कि वसी सुभगी रथीके तटमाही सुक
चरित मोह महीप डरी छपजाइ वसी
गिरकंदरमाही करजांगलके मघ सा

प्र॰ वै॰
भा॰ टी॰
१२८

लनमें सरधाकहुं जाइवसी जगमाही
भाषाटी॰॥ कहणाइह सखाकरके अस्तु
पातोंके समेतकहें हें हेसखी शांती न
म मेरेको सारे प्रकारोंकरके नाशकीने
होइ जीवितवालीको करतीहै जिसका
रणते नम बहुत शोककरके वचनोंको
कहतीहै कैसेहैं नवचन बहुतदाह
कारी अग्नीहै उसकीयां जो ज्वालाहै
न उनोंके न्याईहैं न अरु कैसेहैं न कणों
विषे कोड़े होनेवाले अत्यंत डःखकरके
सहारणे जोग्य अक्षर जिनोंके विषे ऐ
सेहैं न हे प्रिय सखी जिसी कारणते न
म मुहूर्तमात्र कालको अपने जीवित
को धारणेवास्ते प्रसन्नहोवो यावत्पर्यं
न इदर उदरमें इह जो भागीरथी गंगा
केनटहै इनोंविषे जो मुनी जनोंकरके

भरेहोये पवित्रआश्रमहै उनोविषे इस
श्रद्धाको अछी प्रकारकरके ढूंढेंगी है
सखी मै जानतीहों इह श्रद्धा किसी आ
श्रमविषे गमनकरके महामोह राजेके भ
यकरके बैठी होइगी शांती इसवचन
को सुनकरके वैराग्यभावको दिखाइक
रके कहने लगी ॥

मूल॥ शांतिः सखि किमन्विष्यते ५ नी
वारांकितसैकतानि सरितां कूलानि वै
खानसै राक्रांतानि समित्रषालवमस
त्यामाप्स्यद्गृहयज्वनां प्रत्येकंच निरूपिताः
प्रतिपदंत्वत्कारणाद्वाश्रमाः श्रद्धायाः क्वचि
दप्यदो खलुमया वार्तापि नाकर्णिता ६

शांतउवाच॥ दोहरा॥ सखी निहारेगी कहां
सरधा कथा न लेस मै कुरुषेत्र गोमती औ
रपिषे समदेस ॥ सवैया॥ सरता तटमे व

134

इह भांतिविषे तपसी जिनमांहि अनेक
रहाए पुनि मोहि मिमांसक धामवि
षे चमत्काकट रूपस्थान बनाए पुनि
अम वार निहार रही दिन कोटिन कोटि
सुजान गनाए नहीवात सुनी कहूं का
ननमै सरधा सजनी कहि ठोर बनाए १॥

भाषाटी॥ हे सखी करुणी तमकहो उस।
श्रद्धाको ढूंढेंगी तुममेरा वचन सुणो
इह जो नदीयोंके तट हैन सोकैसे हैन
तीवारजो मुनीयोंके अन्न हैं उनोंकरके
चिकनीतेहोये रेतके स्थल जिनोंके वि
षे ऐसे हैन अरु कैसे हैन वानप्रस्थ लो
कोंकरके भरे होइहैन और जो यज्ञकर
णेवाले लोकोंके घर हैन सो कैसे हैंन
समिधाकरके अरु कुशांकरके अरु य
ज्ञपात्रोंकरके चारोंतरफ भरेहोयेहैन

हे सषी मैंने इनो स्थानोके पैर पैर जगा विषे प्रति पुरुष चाहीं आश्रम परीक्षा कीते होइ हैंन तुम निश्चैकर के जानो मैंने किसी जगा विषे श्रद्धाकी वातभी नही सुणी है इह बडा विषाद है ॥९॥

मूल॥ करुणा सहिएवं भणामि जमज्जे वसन्तइ सद्धा नदा ताराणएवं सीङ। गोदिसंभावेमिएं स्वनारसी पुण्णाम धीन्नप अमसी असंभावणिज विवति आणइह वेति ॥

करुणावाच॥ चौपई॥ सषी कहो सरथा है जोई पषडनके वस परैन सोई जे अति शुभ वनी जगनारी नेधा विपतिन लहे पिआरी ॥९॥

भाषाटी॰॥ करुणाकहइहै हे सषी मैं तुम को इहवात कहतीहों जदसोई ही साचि

अ.वे.
भा.टी.
१४.

140

कीश्रद्धाहै तद तिसको ऐसी दुर्गतीमे
नही प्रतीत करतीहां जिसकारणते
निश्चैकरके तिसश्रद्धाके समान जो
गुणवालीयां स्त्रीयांहैन सो ऐसी प्र
तीतविषे नही आउणवाली विपदा।
कों नही प्राप्तहोतीयांहै

मूल॥ प्राप्तिः सखि किम्नु प्रतिकूले विधा
तरि न संभाव्यते ७ देवी श्रीजनकात्म
जा दशशिरस्यासीद्गृहे रक्षसो नीता
चैव रसातले भगवती वेदत्रयी दान
वैः गंधर्वस्य मदालसा च तनया पा।
ताल केतुच्छला हैत्येंद्रोपि जहार हंत
विषमा वामा विधेर्वृत्तयः ८

सांतोवाच॥दोहरा॥ सखी कहोइ बात ह
नि जोधाता प्रतिकूल कहो असंभव
कोनगति वै सब आपदामूल १३ सवैया

जनकात्मजा ग्रहरावणके सवसी
दुषभांति अनेकभरे वस दानव देव
ई सभई तिन जाइ रसातल वासकरे
पुनि गंधर्वकी दुहिता पति दैतहरी
समदालस रूपवरे विध वोम भए
जगमै सजनी कहु आपदको नन सी
सधरे ८॥

भाषाटी॥ शांतीकहतीहै हे सषी इहवात
तमसुणउ जदहैव उलटाहोवेगा तद
कौनसी विपदानहीं आउतीहै इसवा
तविषे तम सर्वहमांतभी सुण १ रा
मचंद्रजीकी जो भार्या राजेजनककी
कन्या सीतानामवालीथी सो सर्वकाल
विषे रावणके घरमें राक्षसाने वलेटी
होई चिरकालपर्यंतकै देषानेविषे वै
ठीहोईथी और दानवोने सर्वकालवि।

श्र वे भाटी १४१

षे तीनवेदोंकी विद्याभगवती पाताल
कोलईथी औरपूर्वकालविषे गंधर्व
राजेकी कन्या जो मदालसानामवा।
लीथी तिसको पातालकेतु नामवा
ला दैत्यराजा छलकरके हरलेताभ।
या ८॥॥

मूल॥तद्वत्तु पाषंडालयेष्वेव तावद
उसराव: ॥

दोहरा तोतेचले पषंडग्रह सधा तहां।
जिहोइ कहणाकरहूहो यो खचल सषी
इमकहि चालीदोइ १४

भाषाटी॥हेसषी वडा विषादहै इहजो
देवकीयो हानीयांहैं सोबहुत विषम
है होवे तोभी इनोपाषांडीयोंके घरो
विषेही तिसश्रद्धाके चलकरके देषो
गी ॥॥

मूल॥ करुणासखि एवं भो इति परिक्रा
मतः करुणा सखासे द्विरववेसा २
सवैया॥ करुणा तहि अत्र विलोकउरी
सजनी मम राघस नैन निहारे॥
भाषाटी॥ करुणा कहैहै हे सखी ऐसी
वात करणी योग्य है ऐसा संवाद कर
के सो दोई जनीयां ऊर तरफ चलगयी
यों करुणा भेकर के कहने लगी हे स
खी राक्षस है राक्षस है
मूल॥ शांति [illegible] कासो राक्षसः
सवैया शनि सांतिकह्यो कहि राक्षस
है करुणा तव पीठह्न पीठ उचारे
भाषाटी॥ शांती कहै है हे सखी कौन
राक्षस है॥
मूल॥ करुणसखि पेरवजो २ योएसा
गलंत मलपंक पिछल वीर छडपर

प्र वै
भा॰टी॰
१५२

रयदेह छवी उलंघि उरअकवसण्ड।
दंसणेग्ग सिद्धि सिद्दं ठपिछि अहस्या श्दो
जेव अहि वहदि

सवैया मलपंषगिरे अुषदंतनते तनमें
उवगंध भयानकभारे अुकता कढि
कछु मलीन महाइह मूड पिसंग सवंके
उषिलारे ॥ १५ ॥

भाषाटी॰॥ कहणाकहैहै देषो देषो व
म इह कोई पुरुष मोरदीपंष हथविषे
लैकरके ईदरही आउतादै कैसाहै व
हन वनजो मलरूप विकडहै उसकर
के चिकनाई वाली बहुतभयानक
दुःखकरके देषने योग्य देहकी शो
भाइसको ऐसाहै अरु मुंडनकीने हो
इकेस तिसको ऐसाहै अरु त्यागक
रिहैं वस्त्र जिसने ऐसाहै अरु दुःखक

देषनेयोग्यहै ॥

मूल॥ शांतिः सखिनायं राक्षसः निर्वीर्यः खल्वयं

दोहरा सुक्कि सिषंड सकर विषे आवत है इनओर नैन निहारन मे सकोचीत डरतहै मोर सांति कह्यो राषसनही दुदगलहै वलहीन ॥

भाषार्थ· शांतीकहैहै हे सषी इह नही राक्षसहै जिसकारणते निश्चैकरके इहकोई वीर्यरहित पुरुषहै ॥·

मूल॥ करुणा नाकोपसो भविस्सदि

दोहरा॥ करुणाकहै सकोन पुनि ये सो परम मलीन ॥

भाषार्थ·॥ करुणाकहैहै हे सषी फेर कौनइहहै ॥

मूल॥ शांतिः सखि पिशाचइति शंके ।

प्र वे
भा टी.
१५३

143

दोहरा॥ सांतिकरहयो सपिशाच यहि ग्रै
से मोमनभाइ

भाषाटी॥ शांतीकरहै हे सखी इह पिशा
च है ऐसीही शंका हम करती हैं

मूल॥ करुणा मरिच फुरंत महाहरुम
लद्वासि अभ्र अणंतरे जलदि पचंड मंड
मंडले कधं पिसा आणं अवआसो

दोहरा॥ करुणा करि पिसाच नहि वरि
निसमे प्रगटाइ सूरज माहि प्रकास मै
किरण प्रकासे लोइ ऐसे समे पिशाच
काकहि अवकास सहोइ

भाषाटी॥ करुणाकरहै हे सखी इसवे
ले दिन विषे कहो पिशाचोंकी जगा है
इह दिन कैसा है बहुत चिमकनेवाली
यांजो बडीयां किरणांकीयां मालाहैं
उनो करके बहुत प्रकाशवाला कीता

होय। भुवनोका मध्यजिसने ऐसा दे
दीप्यमान कठोर सूर्यमंडल इसविषेहे

मूल॥ भ्रांतिः नहि अनंतरमेव नरकवि
वराडत्तीर्णः कोपि नारकी भविष्यति
विलोक्य विचिंत्य आशोते महामोह
प्रवर्तितोयं दिगंबर सिद्धांतः तत्सर्व
था हरे परिहरणीय मस्य दर्शनमिति
पराङ्मुखो भवति॥

दोहरा॥ सोतिकह यौज्ञ पिसाच नहि
तो यह पापी आहि निकसयो अब
ही नरकते आवत है पथमांहि बड़
रो सांति विचारकरि अबमें लषयो
नितांत महामोह पटयो अयो यह ज
गजैन सिधांत याको दरसन हर तदि
यह अतिपति तिम लीन ऐसे सांति
वषान फिरचाली मुषदीन॥

प्र चं
भाटी
१४४

भाषाटी॥ शांतीकहैहै हे सखी नव प्रब
ही नरकके रंथते ऊपर चढियाहोया
कोई नरकी पुरुषहोवेगा तिसतेउप
रांत शांती देवी देषकरके कहनेल
गी हे सखी मैने इह जानलैयाहै इ
हमहामोहराजेने आत्ताकीनाहोया
दिगंबर सिद्धांतहै तिसीकरणते सा
रे प्रकारोंकरके इसकादर्शन हरने
ही त्यागकरणे योग्यहै ऐसावचन
कहकरके शांती और तरफ मुखरख
तीभई ॥

मूल॥ करुणामहि कहूनेके विवजा
वश्य सिद्धे असेस सामिडमे तथास्थि
ते ततःप्रविशति यथानिर्दिष्टो दिगं
बर सिद्धांतः ~~दिगंबरः~~ दिगंबरः नमो
अलिहंरतानेणि २ णवद्वाल चल म

ज्ञे अष्णादीव इव मंत्र वोपसे जिणव
ल मध्येमारखेदि परिक्रामति आका
षेलेले साचका सएज्ञा ४

करुणउवाच ॥ दोहरा ॥ संषी महरति षि
र रहो सरधा लेहि निहार यही पषंडी
भाषय मति याभेन मकार गुलाब
सिंह इनभाषकरि दोनो षरी इकान
तव न्रपसभा प्रवेशकर बोलयो जैन
सिधांत नमो नमो अर्हंत मतजे जैन
चले उदार भुवान गुकति दोनो लरे
मे अब करो उचार ॥ कवित्त ॥ नवहै उया
रतन भोनके मकार पुनि अतम प्र
काम दीपनाहि मे सहाइ है जैनवर
भाषयो सिधांत सइकांत यह गहे
जन जोई जग सूष मोष पाइ है ॥

भाषादी ॥ करुणाकहै है हे सषी तम

प्र चं
भा टी.
१४५

145

मुहूर्तमात्रको ठहरो यावत्पर्यंत इस
स्थानविषे श्रद्धाको मैं ढूंढेगी ऐसाव
चन कहकरके सो देई जातीयां तैसा
ही तिसीस्थानविषे स्थितहोईयां ति
सते उपरांत मलीन शरीरवाला अरु
मुंडित केशोवाला अरु नग्नशरीरवा
ला मोरकी पंख हाथ विषे लेकरके दि
गम्बर सिद्धांत प्रवेश करताभया दि
गम्बर सिद्धांत तिसते उपरांत लोकों
के प्रतिकहनेलगा नमस्कार नमस्का
र पुनः पुनः नमस्कार हमारे मतको
दिखावनेवाले जो अर्हंत ऐसे नामवा
लेजैनदेव उनोंके ताई होवे हे लोको
हमारे मतको कहनेवाले जो अत्यंत
श्रेष्ठजैनहैं उनोंके वचन तुमी सुणो
इहजो आत्माहै सो इस नवद्वारोंवा।

ले शरीर रूप घर विषे दीपक जैसा जा
नना चाहीए इस बातका तात्पर्य का
निकल्या जैसे दीपक जो थोडा प्रका
श वाला सो घटविषे रखनेसे घटको
ही अंदर प्रकाश करता है जिस जिस
पदार्थविषे दीपकको रखीए उसी उसी
पदार्थको दीपक प्रकाश देता है जि
स कारणते इह जो दीपक है सो अल्प
प्रकाशवाला है तैसाही इह जो आत्मा
है सोभी जिस जिस शरीरविषे पति
त होया है तिस तिस शरीरविषेही चे
तनतावाला होता है जिस कारणते इ
ह आत्मा जिस जिस शरीरविषे पतित
होया है तिस तिस शरीर परिमाणवा
ला है कीटके शरीरविषे कीट परिमा
णवाला ई है हाथीके शरीरविषे हाथी

३ वे
भारी.
१४६

परिमाणवालाईहै आत्माजोहै सो व्या
पकहै नही इहु लोकोका इहु जो जैनशास्त्र
कुजाननेवालेयोंके मध्यविषे श्रेष्ठपु
रुषोने कह्याहोया सिद्धांतहै सोईही प
रमार्थहै कैसाहै इहलोकविषे सुखदे
नेवालाहै अरुइसदेहउपरांत मोक्षदेने
वालाहै ऐसावचन कहकरके औरत
रफ सो दिगंबर चलनेलगा चलकरके
आकाशविषे आवाज मारनेलगा अरे
इसमतको सुणनेवाले हमारे सेवको
नसी इहु वचन सुणउ सुणउ ५
मूल॥ मल मय पुग्गल पिंडे सुअल जले
हिं विकेलिसी सुद्धी अप्पा विमल स
हावेसि परिचलणेहिं जाणवो किंभण
धकेलिसि पलि अणंतेना सुणध ॥·
कवित्त॥ अरे सुनि श्रावक सुवाकमे व

घानो तम मलय पवाणते सुदेह उपजा
इहै मूढनर सुधकरे सीतजल सींसुध
रे होवतन सुधजल कोटिन नवाइहै ॥

दोहरा॥ आतम विमल सुभाव है रिष से
वतिह गयान रिषसेवा कैसी करो सुन
हु करो वषान ४२

भाषाटी०॥ इह जो शरीरहै इसकी शुद्धी सा
रे तीर्थों के जलों करके भी कैसी होवेगी
जिसकारणते इह शरीर मलमूत्रकफ
इत्यादिक वस्तों करके भरिआ होयाहै
जो अत्यंत अपवित्र पदार्थ होवेगा इस॰
की शुद्धता करणी होसकदी है परंतु आ॰
त्मा जो निर्मलस्वभाववाला है सो इही
ऋषी जो जैनहैं उनैंके सेवन करके ज्ञान
ने योगहै अब सुणउ सेवा कैसी चाहीए

मूल॥ हलवलण संपणामो किय सकाले

प्र॰ चं॰
भा॰टी॰
१४०

147

वभोश्रणे मिवेइस्समले णकज्जे लिसा।
णंदालेण मंन्नाणे नेपथ्याभिमुखं मवं।
लोक्य सवैंइदोदाव २ उभे सभयमाले
कयतः ततः प्रविशति नदवस्थरूपवेषा
श्रद्धाकिं श्राणवेडिलाउले शांतिमुष्ठि।
ता पतति दिगंबरासिद्धांतः सावकाणं
उले श्रद्धतेसे क्खविमापलिहल सहि
श्रद्धायं श्राणवेदिलाउले इति निष्क्रांता
सवैया।। हूर ह्रते पद पंकजको अभिवंध
सीस निवाइकरो भोजन जो मिष्टानम
हो तिनहि त्रिवा वड जोरकरो घरभीत
र जोरिखवासकरे मनमै नहि रंचक
दोषधरो गोपऊतो मतषाल करह्यो
इह भांतिकरो भव सिंधतरो मुनिने
पथ ऊर विलोक कह्यो सरधे इतश्रा
उ कहां विरलाय कम्णांनहि सांतनि

हारतथी इन पेषन कोंन कनोंत हला
ए सरधानहि आइ समाज वरी हनिजै
न समान सवेस वनाए कहि आइ स
मोह सवेगकरे सनि सोंत डषी म
नमें सुरकाए षिषएकउवाच ॥दोहरा
आवग निषल ऊठेवको सरथे तू ग
हि आज कवहू महूरतन तजी सिध
होहि ममकाज ॥दोहरा॥ जोहारसु सो
ईकरी राज ऊलीन महान इमकहि
निकसेवै दोउ करुणा सोंत वषान
भाषाटी ॥ सेवक प्रहषोने ऋषीयोंके
चरणका प्रणाम हरनेही करुणाचा
हीर अरु अत्यंत आदरकरके ऋषी
योंको मिष्टाभोजनभी देणा चाहीर
अरु ऋषीयोंके स्त्रीयोंका क्रीडाकर
के सषदेनेवाले प्रहषोंके प्रति ईर्षा

प्र० चं०
भा० टी०
१४८

नहीं करणी चाहीइ तिसते उप्रांत सो
दिगंबरसिद्धांत रंगभूमीके बाहरस्था
नविषे हस्तीपाइके आवाजमारणेलगा
है अहे तुम प्रवेशआउ इह बात स्रवण
करके सो दोईजनीयां एकशांती अ
रुहसरी करुणाभी भयकरके देषने
लगीयां भईयां तिसते उपरांत दिगं
बर सिद्धांतके समान रूपवाली ताम
सी श्रद्धा प्रवेश करती भई तामसीश्र
द्धाकहेहै हे प्रिय हमकोकोई आज्ञा
करो इह वचन स्रुनकरके शांती मू
र्छाको पाइकरके भूमी विषे डिगपर
तीभई दिगंबर सिद्धांतकहेहै हे श्रद्धे
तुमहमारे सेवक लोकोंके घरोंको
एक मुहूर्तमात्रकोभी मथ त्यागकरो
तामसी श्रद्धाकहेहै हे दिगंबर जो हम

1426

को आज्ञा करेंगे सो हमने करणी है
मूल॥ करुणासमस्सुतं २ फि असही
णं खुणामे मनकेण विपि असही
पमेदहं जदोसुदं मप् अहिंसा सआस
दोजं अपि पासंडाणं वितस्स सदा स
देति तेण पसा तामसी सद्धाइविस्स
दि श्रांति समासासस सवि पवमेतन
करुणउवाच॥ दोहरा॥ सषी पधारी धीर
धरकाहे तुं डरपार नाम मात्र सरधा
कहेहै कछु डोर वलाइ॥ चौपई॥ अहिं
सादेवी मोह सुनाई पषंडधाम सर
सा रकपाई पक वङ अंवा तेहे आन
नामसी सरधाकरे वषान दोहरा॥
तांते सरधा तामसी यह तूं क्यों डरपा
र ऐसे करुणा भाषयो अब उनि सो
तमलाइ॥ १०

प्र चं
भा टी.
१४२

149

भाषाटी॥ ऐसा वचन कहकरके सो ना
मसी श्रद्धा निकलगई करुणा कहै है
हे प्रिय सखी शांती तुम अपना शरीर
संवालो निश्चय करके तैने श्रद्धा ऐसे
नाम मात्रकरकेवी नही डरणा चाही
ए जिसकारणते मैने अहिंसा नाम
वाली जो हमारे कुलविषे श्रेष्ठ सखी है
उसते ऐसा वृतांत सुण्या है क्या इह
जो पषंडी लोक है न उनोके घरविषे
तमोगुणकी कन्या श्रद्धा है तिसी का
रणते हे प्रिय सखी शांती इह जो तै
नी देखी श्रद्धा है सो सोई तामसी श्र
द्धा होवेगी शांती इस वचनको सुन
करके नवीन जैसा जीव पाइकरके
कहनेलगी हे सखी करुणी इह वा
त ऐसी ही है सो तुम सुणा

मूल॥ तथाहि दुराचारा सदाचारा दुर्द
र्शाः प्रियदर्शना अंबा मन सरोऽयमापा दुरा
शा न कथंचन ॥ तद्रवत्व तावत्सोग
तैश्च सावन्निष्पन्नं शांति करणे परि
कामतः ततः प्रविशति भिक्षु रूपः १
ल्लकहस्ता बुद्धागमः

शांतिरुवाच॥ चौपई॥ सावधान सजनी मे
होई जैसे कहे वात है सोई याह प्रतिदु
राचारुणीहु यै अंबा सदाचार रति पथे
यह हर दरसन रूप मलिनी अंबा प्रि
य दरसन सुषभीनी ऐसो रूप ताहि
नहि होई संसा मनमे करो न कोई अं
बायाके वसनाहि होई जो तू कहि सत
है सोई चले अगारी सोगतधामा तहा
मिले जे वहि अभिरामा यो कहि चली
अगारी तवही भिक्षुक एक निहारयो

तवही पुस्तक हाथविषे दरसायो
बोध सिधांत सभा महिआयो

भाषाटी॥ इह जो दुष्ट आचारवाली अरु
दुःखकरके देखनेमें आउतीहै अरु नि
ष्ठुरवाली है इह किसी प्रकार क
रकेभी हमारी माईका नही समानहो
तीहै हमारी माई जोहै सो सदाचार
वालीहै अरु सुंदरदर्शनवालीहै ॥
हे प्रियसखी करुणी तिसी कारणते
चलो तुमभी इहजो इहां बोधहैन इ
नोविषेतावत् उसश्रद्धाको ढूंडेंगे
ऐसावचन कहकरके सो दोई जनी
यां और तरफ चलीगईयां तिसते उप
रांत भिक्षुरूप धारकरके पुस्तकहाथ
विषे लेकरके बोद्ध सिद्धांत प्रवेशक
रताभया ॥

मूल॥ भिक्षुर्विचिंत्य भोभोः उपासकाः
साक्षात्क्षणक्षयिण एव निरात्मकाश्च
मायार्पिता बहिरिव प्रतिभांतिभावाः
सैवाधुना विगलिताखिलवासनत्वा
द्धीसंतति स्फुरति निर्विषयोपरागा १३
भिक्षुकउवाच॥ चौपई॥ छिण भंगर सग
ल पदारथ हृये है भीतर बाहर समप
ये आहि निरातम माहि गयान दरप
न अघ समहे होवे भान सो बहु गया बा
सनाहीन फुरे विषे चित्र लखे प्रवीन
योकहि पोथी आगे धरी सीक्षनि बा
र प्रक्रमा करी १२
भाषाटी॥ बौद्धसिद्धांत प्रवेश करके
किंचित्काल मनविषे चिंतन करके
लोकोंके प्रति कहने लगा १२ हे उपा
सक लोको इह वचन तुसी सुणो इह

जो आत्मा ऐसा वाद है सो कोई भी नही
है जिस कारणते केवल ज्ञानपंक्ती
ही भासती है इस ज्ञानपंक्तीके अंदर
विषेही कल्पनामात्रकरके ठहरा ह
है जो इह पदार्थ समूह हैं न सोई ही
पदारथ केवल भ्रांतीकरके वादरथ्या
नविषे जैसे भासते हैं सो पदारथ कैसे
हैं न क्षणमात्रकरकेही नाशपाउणे
वाले हैं और स्वरूप करकेबी इनो प
दारथोंको कोई सत्ता नही है केवल
अविछिन्न ज्ञानपंक्तीही चलती है अ
ब इसवेले हमको संसारका कारण
होइ जो इह वासनाजाल है उनोंके छे
द करणेते शुद्धज्ञानपंक्ती फुलती है
कैसी होई है हरेहोया है अनेक नील
पीतादिक विषयोंके आकारोंका स

वंध जिसविषैऐसीहै इसीकारणते
मैं सर्वज्ञहो है लोको ऐसाही मान
नाचाहीइ ॥१३॥
मूल॥ परिक्रम्य ततः सख्यावृंदा सा
धुरंधैसौगतधर्मः यत्रसौख्यं मोक्ष
स्य तथाहि १ष आवासोलयनं मनोह
रमभिप्रायाउत्पावणीरभार्यावांछि
तकालमिष्टमशनं धाण्याःस्वइअल
राः श्रद्धाएवे श्रुपासिताः श्रुवतिभिः
ल्लभांग रागोत्सव क्रीडानंदभरे र्वै
जंति विलस ज्योत्स्ना ज्वला रात्रयः१ ५
चौपई॥ अहो साध यह धरम सुहायो
जो निज श्रवने बुधिवनायो जामे सु
षमोष जगदोई भेद विनाजन पावे
सोई सेवकके निजभोन मकारे सं
द वाहसमाहिचोवारे मनअनहूल

प्र० वं०
भा० टी०
१५२

152

वणिककी नारी बहुविध भोजनधरे सवारी कोमल सेज सबणिक वि छाइ जोर दोऊ कर दए विराइ सरधा सहित उपासिक जेते युवती सहित भजे पद तेते ॥ दोहरा ॥ अंगराग तन लाइके वणिक मनोहर नार भजे निसा ससि उजली पद निज १ पाणि मझार १५

भाषाटी० ॥ बौद्ध सिद्धांत और तरफ जाइ करके वडे आग्रह करके कहते लगा है लोको इह जो बौद्ध धर्म है सो बहुत शोभन है जिस धर्म ते इह लोकविषे सुख है अरु इस देह ते उपरांत मोक्षभी है इह वात सुण १४ इस बौद्धधर्मविषे वैठनवाले प्रथम सुंदर मनोहर घर है अरु अपने मतवल।

को पिछे चलने वालीयां सुंदर सुंदर
वेश्यां हैं अरु जिसवेले चाहीए उसी
वेले मिष्टभोजन खाउनाहै अरु कोम
ल विछावने वाली सेज्या हैं अरु श्रद्धा
पूर्वक आराधना करके राणीयांभी स
दा चलनीयांहैं कैसीयां राणीयांहैन
चिमकनेवाली उज्वल चानणी जिना
के विषे असीयांहैं अरु कीताहोया जो
संगार हैं उसका जो उत्सव है उसका
जो खेलना है उसकरके आनंदफल
वालीयांहैन ॥१५

मूल॥ करुणा सहि कोपसो नरुण
ताल नरुपलंबो लंब नकसा अप सं
ग चीवरा शुंडि दस चूर शुंड पिंडो र
दोजेवद्या अच्छादि॥

करुणउवाच॥सवैया॥ सजनी यह कोन

अग्रहि इहां तउ ताल समान अजाहि
लंबायो अपि संग कषाइ धरे तउ ग्रे
वरु अषम जो धरमै लटकायो पुनि
भाल अकिंचन मुंडन है किपिषो क
वमूलहने उपडो इमक्काल विसाल
अनालधरी नयनी नहि जानपरे रस
कायो ॥ ५५॥

भाषाटी॰॥ करुणा देषकरके कहनेल
गी हे साखी शांती इह कौन पुरुष
इदरही आउता है कैसा है तरुणता
ल हलजैसा लंमा है अरु लम्बायमा
न होया गेरी करके रंग्या होया कपि
लवस्त्र जिसका ऐसा है अरु मुंडन
कीना होया शिखा समेत सारा शरी
र जिसने ऐसा है ॥

मूल॥ शांतिः सखित्वद्रागमः पषभिरु

शांतोवाच॥ दोहा॥ बोधागम सजनी इहै
भिक्षुक रूप बनाइ वंचित हैं सभ लो॥
क को यो मेरे मन आइ ४९

भाषाटी॥ शांती कहै है हे सखी करुणी
इह बौद्ध सिद्धांत है बौद्ध सिद्धांत आ॥
काश विषे आवाज मारणे लगा

मूल॥ आकाशे भोभो उपासकाभिनव
स्य श्रूयतां भगवतः सुगतस्य वाक्यामृ
ते पुस्तके वाचयति पश्यामहे भिक्षु॥
वोदिते न चक्षुषा लोकानां सुगतिं दु॥
र्गतिंच संक्रियंते क्षणिकाः सर्व संस्का
राः नास्त्यात्मा स्यादीन स्मा द्विवेश दा
रानाक्रमन्स्व नेर्षितव्यं चित्तमलं हि न
यदीर्ष्यालाम नेपश्यामि शुभमवलो
क्य ॥

अभिक्षुकोवाच॥ दोहा॥ यती उपासिक श्री

ग्रं
भा.टी.
१५४

र सभ सुनो सु निज निज कान वाक सु
धारस बंधहूर करे सुगति भगवान
यो कह पुस्तक लीनकर षोल निवाया
सीस शलाव सिंह पेषत सबे राज स
माज महीस दिवनेन सभको पिषा ग
ती सुभा सुभदोइ षिणमंगर सभभा
वहै थिरु नहि आतमकोइ ॥ सवैया ॥
रमजानत जो सभ मोह जितो निज दा
रन और अगारन माही भिक्षुक जो
घरमाहि रमे न बेहै षन रंचक रोमन
माही मन कोमलतो इह भांति मिटे
पुनि ने पथ पेष कह्यो शुषमाही सर
धे रतन आउ विलंबकहा सु प्रवेस की
यो सरधा षिणमाही ५०॥
भाषाटी॥ हे उपासकलोको तुसी बुद्धा
वतार भगवानका वचन रूप अमृतसु

ए ऐसा कहकरके पुस्तकको वाचने
लगा कहतभयाहै हमारे उपासको
भिक्षु लोकोंमें दिव्यनेत्र करके लोकों
की एक सुगतीको और दूसरी दुर्गती
कोभी देषताहो इह जो सारे पदारथ
है सो क्षणमात्र करकेही क्षयपाउणेवा
लेहैं आत्मा नामवाला कोई स्थायी प
दारथहैनही ऐसा प्रकार निश्चयविषे
होणेवाले जो इह भिक्षुक लोकहैं सो
जदभी पर पुरुषोंकीयां स्त्रीयांको गम
नकरणे वालेहैं तोभी इनोंके विषे ई
र्षानही चाहीए जिस कारणते इह जो
ईर्षाहै सो चित्तकामलहै हे लोको वि
चार करके तुसी देषो इस्त्रीयोंके गमन
विषे केवल परोपकारहीहै इस विषे
ईर्षाका कोई कारणहै नही ऐसा प्रकार

प्र वं
भा टी.
१५५

निस्थयविषे होणेवाले जो इह भिक्षक लोकहैं उन्होंके विषे हे लोको ईर्षा न हीकरणी चाहीए इह जो भिक्षक लोकहैं सो जदभी परगृहस्थोंकीयों ह्वीयोंका गमनकरणेवाले हैं तोभी इनों के विषे ईर्षा नही चाहीये जिसकारण ते इहजो ईर्षा है सो चित्तकामलहै हे लोको विचारके तसी देखो इह्वीयोंके गमनविषे केवल परोपकारही है इसविषे ईर्षाका कोई कारणहै नहीं ऐसा प्रकार पुस्तकका वाचन करके रंगभूमीके बाहरस्थानविषे दृष्टी पाइके कहनेलगा

मूल॥ अह्वे इतस्ताव न्नाविष्य अद्धा आणेवेडलाउक्ले ॥

शांतोवाच॥दोहा॥ वोधा गम सज्जनी रहे

भिक्षुक रूप वनाइ वंचित है सभलो
कको यो मेरे मन आइ देवकरो आइ
सप्रगटकरो कोन अवकाज मै षिन
मे सोई करो तुम सभके सिरताज
भाषाटी॥ हे अत्री तुम ईदर आउ अत्राप्र
वेश करके कहने लगी हे स्वामी तु
म हमको आज्ञाकरो
मूल॥ भिक्षुः उपासकान् भिक्षूंश्च चिर
मालिंग्यस्थीयतां ॥
भिक्षकोवाच॥ दोहरा॥ बोधकहेहै हे अत्री
तुम उपासकोंको अरु इनो भिक्षु
क सेवक सगल जे ताको गहि निज
हाथ सोहि मानि प्रति थिर करो स
मे निवावे हाथ॥ ५१॥
भाषाटी॥ बोधकहेहै हे अत्री तुम उपा
सकोंको अरु इनो भिक्षुक लोकोंको

प्र॰ चं॰
भा॰ टी॰
१५८

भी आलिंगनकरके स्थितहोउ
मूल॥ श्रद्धा जे आणवेउलाइल्ले इतिनि
ष्क्रांता॥
सरधोवाच॥दोहरा॥ जो आइस्स सोई करै॥
ऐसे बषाने बैन निकस चले बैसभाते
सांति निहारे नैन॥
भाषाटी॥ श्रद्धाकहैहै हे प्रिय जो हमको
आज्ञाकरोगे सो हमनेकरणीहै ऐसा
वचन कहकरके श्रद्धा निकलगई
मूल शांतिः सखि इय मवि तामसी श्रद्धा
शांतोवाच॥दोहरा॥ सजनी यहभी ताम
सी सरधा जानी मोहि॥
भाषाटी शांति कहैहै हे सखी करुणी
इहभी सोईही तामसी श्रद्धाहै
मूल॥ करुणा पज्जोणदं खपणकः भि
क्खमालोकय उच्चैः शाक्ष्यात् अलेलेभिक्खु

ग्राइ दो दाव किंपि पुछ्छिस्सं

दोहरा करुणा कहयो सुप वहे भली पछानी नाहि यह अवसर षिपणाक अप लावो डील सुहाइ भिक्षुकजा नो हेरकै उचे लयो अलाइ रे भिक्षुक इन आउ तम कछ पूछो अब नाहि ते री तेरी मेधामै पिषा प्रगटि वषाना माहि ५८

भाषार्थः करुणा कहैहै हे सषी शांती रह वचन तैने यथार्थ कहाहै तिसते उप्रांत दिगंबर बौद्धको देषकरके ऊचे शब्दकरके तिसके प्रति कहनेलगा अरे भिक्षुक तूं इदर आउ मैने तेरेको कोई बात पूछनी है

मूल॥ बौद्धः स क्रोधं आः पाप पिशाचाकते किमेवं प्रलपसि॥

प्र चं
भा टी.
१५०

157

दोहा॥ सुनि भिक्षुक पुनि कोपयो बोध
वचन कठोर हा पापी मलपंक धरले
ड परीक्षामोर

भाषाटी॥ बोद्ध क्रोधपूर्वक कहने लगा
अरे पिशाच जैसे शाकलवाले पापी का
ते बकताहै ॥

मूल॥ क्षपणकः अले शंचकोहं ममा
गदं पुच्छामि

षिपणककहै सुक्रोध तजि करो वेग
अतिरोध॥

भाषा॥ दिगंबरकहैहै अरे बुद्ध तुमक्रो
धकोत्यागकरो मैं तुमको कोई शास्त्र
की कथा पूछताहौं

मूल॥ भिक्षुः अरे क्षपणक शास्त्रकथा
मपिवेत्सि भवतु श्रनीमस्तावत् उपस्त
न्य किं पृच्छसि ॥

दोहरा॥ शास्त्रगत कछु पूछेहो काहेक रे क्रोध। क्षिपणक तूं कछु जानहै शा स्त्रकथा उदार भवत प्रतीत महु पू छहै अब भाषयो क्रोधनिहार

भाषार्थ॥ बोधकहनलगा अरे दिगंबरतू मशास्त्रोंकी कथाभी जानताहै मनवि षे विचार करनेलगा अच्छाहोवे असी भी इसके समीपजावेंगे समीपजाइ करके कहनेलगा हे दिगंबर तूं क्या पूछताहै ॥

मूल॥ क्षपणकः भगवदावरवणवि णासिपणक पकमक पवदेधालीअदि

क्षिपणकोवाच॥ चौपई॥ क्षिपण भंगर तव श्रानमञहै काहि निमित व्रत तवगहै याकोउत्तर प्रथम उचारो क्षिपणकअ न्मा किहि विध तारो ॥

प्र॰ चं॰
भा॰ टी॰
१५८

भाषाटी॥ दिगंबर कहैहै हे बोद्ध तुम इहबात कहु तुमप्रथम ल्हणविना थीहै तैने इहव्रत किस प्रयोजनवा स्ते धारण कीयाहै

मूल॥ भिक्षुः अरे श्रयतां असत्संततिपतितः कश्चिद्विज्ञान सगुच्छिन्न वासनो मोक्ष्यते ॥

भिक्षुकोवाच॥ अरे अरे श्रवकेरा वषान मेरा मता सुनो श्रवकान विग्यान लषण आलमहै जोई रहे संतान मरे षिण सोई ॥दोहा॥ असमत पंक त्रिपरे मुनिक सचित गयान सुहोइ न ष्टवासना उजला मुकति लहे गोसीइ ॥६२॥

भाषाटी॥ बोधकहैहै अरे दिगंबर इस प्रश्नका उत्तर सुण इह जो ब्रतहै इ

सकरके कोई जो इस ह्लण विनाशी ह्ला
न परंपराविषे पयाहोया ज्ञानह्लणहै
सोईही छिन्नहोयां वासना जिसको
ऐसा हो करके शुद्धहोवेगा ॥
मूल ॥ क्षपणकः अलेशुविवज इकस्मि
विमस्सं नलेके विसुको भवस्सिदिन
दोदेसंपहे पणसस्यक र्देकेलिसे अव
अलेकलिस्सदि अणंच सुक्कामिकेण
चेईलिसे धम्म उच्चदित्ते ॥
षिपणोवाच ॥ चौपई ॥ सुन मूरषजनमां
नरमाही जो आतमको शुकनलहा
ही तो अब नष्ट कलेवर धारा कोन।
लाभको तब उपकारा सुक्ले और स
नो मनलायो किन तब ऐसा धरम व
नायो अरु सरवग बुधहे जोई ताहि
कह्यो यह धरमस सोई ॥ दोहा ॥ बुध।

प्र० चं०
भा० टी०
१५९

159

भयो सर्वग जब कैसे जानयो तोहि ।
याको उतर होइ जो प्रगट वषानमाहि
भाषाटी॥ दिगंबरकहैहै अरे मूर्ख जद
किसी मन्वंतरविषे कोई अर्क होवेगा
तद इसीवेले नष्ट होया जो तुमहैं ते
रेको सो कैसा उपकारकरेगा हे बौद्ध
और वातभी मैं तुमको पूछता हों तेरे
को किसने ऐसा धर्म उपदेशकीता है
मूल॥ भिक्षुः ननु सर्वज्ञेन भगवता बु
द्धेनोक्तः अयमेवधर्मः॥
भिक्षुकोवाच॥ चौपई बुधबनायो यागम
जोई तामे कह्यो सरवग्य सोई तो
ते तो सरवग्य न जाने बुधवाक यह
प्रगट वषाने ॥
भाषाटी॥ बोधकहैहै हे दिगंबर सर्वज्ञ
जो भगवान् बुद्धावतार है उसने मेरे

को ऐसा धर्म उपदेश कीताहै

मूल॥ क्षपणकः अले सवणा बुद्धोपि तिकथं क्षपणादं

क्षिपणकोवाच॥ सवैया॥ बुधके वाकनते स रवग स्व बुध जवै तिन्ह बुध पछाने

भाषाटी॥ दिगंबर कहैहै अरे बौद्ध तुम इह बातकहो तैने किस प्रकार कर जान्याहै बुद्धावतार सर्वज्ञहै

मूल॥ भिक्षुः ननु रेतदागमेरेव प्रसिद्धो बुद्धः सर्वज्ञ इति

सवैया॥ तो सरवग समोहलषा जगमे सभ भूत भविषतजाने

भाषाटी॥ बौद्ध कहैहै अरे दिगंबर तिस बुद्धावतार भगवान के ग्रंथनेही इहवा रहप्रसिद्ध चल्याहै क्या इह बुद्धावतार भगवान सर्वज्ञहै

मूल॥ क्षपणकः अले रज्ज अबुद्धियाजर्ई
तस्सभासिदेण संखणत्तणे पडि वज्जे
सिता अहं विसवज्जानामित्त मपि पिदा
महे हिसहं सत्ते उलिसि हिंदासोत्ति

सवैया॥ पित्र पितामहि सातकुली लग
तूं ममदासनहीं ममज्ञाने हनिकै
यहबात दिगंबरकी सुनि भिक्षुकची
नवडे सुनसाने

भाषाटी॥ दिगंबर कहै है अरे सरलबुद्धी
वाले बौद्धजदिति सद्बुद्धावतारके व
चन करके तिस बुद्धावतारकीवचन
करके सर्वज्ञताको तुम प्रतीतकरता
है तद इस मेरे वचनकोभी तूं प्रतीत
करो क्या दिगंबरभी सर्वज्ञहैं और
येक तुम बौद्ध अरु तेरापिता अरु ते
रा पितामह अरु तेरीयां सतपीडीयां।
भी मेरेदासहैं ॥

मूल॥ भिक्षुः सक्रोधं अग्रः पाप पिशाच म ल पंक धर नवाहं दासः

भिक्षकोवाच॥ दोहा हा पिसाच पापी बडे मोको कहे सुदास देत पंक धर मल न अति बुरी सुते ननवास॥

भाषाटी०॥ बोध क्रोधपूर्वक कहने लगा अरे पापी पिशाच जैसे शरीर विषे कि कड समान मैलधारणेवाले क्या मैं ने रा दास हों

मूल॥ क्षपणकः अले विहालदासी ओ अंग डः च पव ज्जि अहि हंदे मए पसे दोसिदे तापि अंदेवी सद्धं भणामि ब हंसासणं पलिहलि अलिहंनाएउ सा सणं अण सलेने दिश्व बलवद जंबधा रेहु भवं॥॥

खिपणकउवाच॥ चौपई॥ रे विहारि दासी

प्र चं भा टी १८१

केपयारे यह एक मम दृष्टांत उचारे
कोपनतू मनभीतर आन तेरोहित
अबकरो वषान ८३

भाषाटी॥ दिगंबरकहेहै अरे बोद्धोंके
घरविषे दासीपते दुष्टमेंने तेरेको इह
दृष्टांतदेषायाहै क्यातेरेको गुसाहोया
है हे बोद्ध मैं तेरेको विश्वासकरके प्रि
यवचन कहताहों क्या तुम इस बोद्ध
शास्त्रको त्यागकरके हमारे जैनशा
स्त्रको ग्रहणकरके दिगंबरव्रतकोही
धारणकरो॥

मूल॥ भिक्षुः श्रा: पापस्वयं नष्टः परान
पि नाशयितु मिच्छामि ८६ स्वराज्यं प्रा
ज्यं त्रुतुच्छलोके निंदामनिंदिता अभि
वांछति कोनाम भवानिव पिसाचतो
अपिच अर्हतोपि धर्मवेदने कः श्रद्धते

दोहा बुध अऊसासन हरनज अरु हैत
मतो सुदार मोह दिरीअ पाद लड़ देह
सु वसन उतार ७० भिक्षुकोवाच॥ चौपई
हापापी तू भयो सुनष्ट औरन नासवके
अनिष्ट मतो मसान पिसाचह आयो
यो नवपेषलोक डर पायो लोक अनिं
दन जो वडभागी अपनो राज सुष वड
त्यागी तेरो वेस पिसाच सुजोई कोन
वहै भवभीतर सोई ७२ दोहा॥ अरहंत
नहि सरवग यो धरमकहे कहि सोई
तो विन सरधा नाहि मतकहो सुकाको
होई ॥ ७३॥
भाषार्थ॥ वौद्ध कहै है अरे पापी दिगंवर
तुम आपनष्ट होया है क्या तुम औरको
भी नाश कराउणेको चाहता है १८ कौ।
तुम आप निंदा रहित पुरुष दान दया शील

प्र. चं.
ना. टी.
१८२

162

क्षमावीर्य ध्यान प्रांनी बल उपाय ज्ञा
न जो दशप्रकार बल हैं इन्होंकरके
श्रेष्ट बुद्धावतार भगवानके प्रसाद
करके पाये होइ स्वतंत्रभावको त्या
गकरके सारेलोकोने निंदाकीती
होई तेरी जैसी पिशाचताको चाहै ९
हे दिगंबर और बातभी तूं सुण इह
जो जैनोंका धर्मज्ञान है उसको कौन
बुद्धीवाला श्रद्धाकरेगा जिस कारण
ते सो तेरे मतका गुरु अर्हन भी किंचि
ज्ञानवाला है

मूल॥ क्षपणकः गहण रक्खसवालवेद
हलोपला अत्रकलाह पला मस्मणा
संवाददंसणे णगिालू विरंभ अवदो
रवस्मतणं अलिईहनस्स

क्षिपणकोवाच॥ चौपई॥ यह निश्चय सगल

हुजाने चंद्र रविको ग्रहण वषाने नष्ट
लाभ पुनि भावी गयान पाछभई स
करे वषान गण नामहि अंतर नाहि र
हे अती देव सत्व ज्ञान वडकहे ताते
है सरवग अरंत ऐसे माने जे जग संत
कविवाच॥दोहा॥हुनि भिछुक अतिसै
हसयो भूपति सभ मझार गुलाव सिं
घगति औरही लागो करन उचार ७८
भाषाटी॥दिगंबर कहते है बौध तुम
अर्हण भगवान कोभी सर्वज्ञता वाले
कोही जान जिसकारणते ग्रहजोहै न
क्षत्रजोहैं अरु चंद्रसूर्य ग्रहणजोहै अ
रु शुक्रजोहै अरु राहुजोहै इन्हो ग्रहों
का हम्मांन जैसा अर्हन् भगवान् सर्वज्ञने
कहताभयाहै तैसाही प्रत्यक्षसारेलो
कदेषतेहैन इसी कारणते अर्हनभग

प्र० वे०
भा० टी०
१६२

163

वानसर्वज्ञहै
मूल॥ भिक्षुः विहस्य ग्रे अनादिप्रकृते
न ज्योतिषा तींद्रिय ज्ञानप्रतारितेन भ
वते दमनिकष्ट व्रतमाश्रिते तथाहि
ताते वपुःपरिमितः ह्यमते त्रिलोकीं
जीवःकथं कथय संगति मंतरेण श्रा
कोति कुंभनिहितः ह्यशिखो नदीपो भा
वात्यकाशयित मथुदरेरहस्य २९ त
स्माल्लोकद्वय विरुद्धा दार्हतमताद्वरे
सुगतदर्शन मेव साद्यान्न खिवहम
ति रमणीयं पश्यामः॥
भिक्षुकोवाच चौपई॥ अनादि कालको
जोतिकजोई तींहैगयान कहेजगसो
ई तो परतारक तुम जगभए कष्टव्रत
सिरपरधरलए और कहो इककरोव
चान तुवमत जीवशरीर प्रमान विन

संबंध त्रिलोकी गयान तांको किह
विधहोइ सभान कव पिहत दीप
कहै जोई यदपि सिषावडी निह होई
ग्रहमै ग्रहे पदारथ जेते कवी प्रकास
सके नहिं तेते तांते ग्रहंत दरसन
जोई उभै सलोक विरोधी जोई जो
गति दरसन अति सषकारे वहह
म संदर नैनहारे ॥८॥
भाषाटी॥ बौद्ध हासकरके कहनेलगा
ग्रे दिगंबर अनादी चले आयाहे।
या जो ज्योतिषशास्त्रहै उसकरके
जाननेमैं आउता जो परोक्षज्ञानहै
उसकरकेही क्या तेरेको अर्हनूमत।
ने वंचनाकीतीहै बडाखेदहै तैने
किस प्रयोजनने अत्यंतकष्टवाला
व्रतधारणकीताहै अरुभीतूंस्नाण १८

प्र चं
भा टी.
१८४

अरे दिगंबर तेरे जैनमतविषे कह्या
होया जो शरीर परमाणवाला जीव
है सो ज्ञानादिक संबंधते विना इस
त्रिलोकीको जाननेवास्ते कैसे सम
र्थवाला होवेगा इसविषे दृष्टांत है
जैसे घरके मध्यविषे घटके मध्यज
गायाहोया शोभन ज्वालावाला
दीपक कैसे पदार्थोंको बाहरस्था
नविषे प्रकाशकरेगा तैसाही शरी
र परिमाणवाला जीवकैसे सर्वज्ञ
होवेगा इह बातत्तूंकहो १९ ति
सीकारणते दोनो लोकोंविषे विरु
द्ध जो जैनशास्त्र इसते श्रेष्ठहै इसते
श्रेष्ठबौद्ध शास्त्रकोही सोज्ञान्त्वव
देनेवालेको अरु अत्यंतरमणीय।
को हमलोक जाणतेहैन

मूल॥ शांतिः सखिअन्यतो गच्छावः
शांतोवाच॥ दोहा सजनी सरधा नहि
रहो चले ठौर अव आन
भाषाटी०॥ शांति कहै है हे सषी करु-
णी चलो और तरफ जावेंगीयां
मूल॥ करुणा एवं भोइयति परिक्रा
मतः ॥
दोहा करुणा कहयो सपव कर आ
गे कीयो पयान ८१
भाषाटी०॥ करुणा कहै है हे सषी शां
ती ऐसाई होवे ऐसा संवाद करके
दोई जनीयां और तरफ चले गयीयां
मूल॥ शांतिः पुरोविलोक्य पश्य पुर-
स्तात्सोमसिद्धांतः भवत्वेत्रा पिता।
वदनुसरावः ततः प्रविशति कापा
लिकरूपधारी सोम सिद्धांतः परिक्र-

प्र. वे.
भा. टी.
१६५

165

दोहा॥ सांत रस आगे देष करि बोली व
वन उदार सोम सिधांत रस यह षडो
आगे सषी निहार भवन तथा क
रुणा करयो चले समीप रस यारि
मन रथा तहि होइ पुनि अवलो पे
षीनाहि नवै कपालक रूपधर सो
म सिद्धांत प्रवेस कीनो सभा मकार
तहि कीरति वरम नरेस ३०

भाषाटी॥ शांती हरहटी पाइकरके क
हनेलगी हेसाषी करुणी इस साम
ने सोम सिद्धांत आउता है होवे इस
के सामने भी नावत्पर्यंत चलीयां
जावेंगीयां तिसते उपरांत कापालि
क रूपधारणेवाला सोम सिद्धांत प्र
वेश करताभया पुनः प्रक्रमादेक
रके कहनेलगा ३०

मूल॥ नरास्थिमाला कृतभूरिभूषणः
श्मशानवासी न्ट कपाल भोजनः
प्रयामि योगांजन सुद्ध दर्शनो जग
न्मिथो भिन्न मभिन्न मीश्वरात् ४८
सवैया॥ नरहाडनकी गल मालधरी स
वदंतनके स्रुति कुंडल गाय भुजअंग
दहाडउकस धरे निसको समसानन
माहिवषाय मजन छारे विषे सकेरे
ननमे समसानकी छार लगाय अति
भीषन आहि प्रकारवडो नर मूढक
पाल सभाजन पाय॥ दोहा॥ योगाजि
न सोमे पिषो जो कछु जगति मका
र भिंनाभिंन सुईसते लीने जगति
निहार ४८
भाषाटी॰ हे लोको जैसे सुहिका कट
क कंकण कुंडल आदलेके पदार्थो

प्र॰ चं॰
भा॰ टी॰
१६६

को परस्पर भेदे होते संतेभी सुवर्ण
ते अभेदहीहैं तैसाही परस्पर भेदवा
ले इस जगतका ईश्वरते अभिन्नकार
ही भेदेषताहो मैं कैसाहो मनुष्यों
कीयां जो अस्थिमालाहैं उन्होकर के
कीतेहोये रमणीय भूषण जिसने
ऐसाहो अरु श्मशानवासीहो अरु
मनुष्य कपालविषे भोजनकरणेवा
लाहो अरु योगरूप अंजन करके शु
द्धदृष्टी वालाहो ॥ ४ ॥

मूल ॥ क्षपणकः अले एसे कपालि अ
वदं शुलिसे धाले दिताएं विशुद्धि
से उपहन्य अलेलेकावाली अण
लह्रुतुंडे धालिआ केलि सेन्नह ध
म्मके केलि सेन्नह मोरवके

कविवाच ॥ क्षपणक ताहि विलोक ।

करि भिक्षुक कीन उचार पहु कपा।
लकव्रती नर पूछि नाहि विचार
क्षिपणक भिक्षुक पूछ्यो नाहि समी
प सु जाइ कपाल करेन मूड हमे ध
र हमे सदेह वताइ हमहे डर सं
सा भयो धर्म सुते मन कीन तबैक
पालिक बोलयो महाअमंगलभो॥
भाषार्थ दिगंबर कहेहै अरे बौद्ध इह
पुरुषकापालिक व्रतको धारताहै
तिसीकारणते इसको मै कोई वात
पूछोंगा समीपजाइके कहने लगा।
अरे कपालिक मनुष्योंकीयां अस्थिमा
ला धारणवाले तेरा धर्म कैसाहै अरु
तेरे मनेविषे मोक्षकैसाहै
मूल॥ कापालिकः अरे क्षपणकधर्मं
तावदस्माकमवधारय २२ मस्तिका

प्र०चं० ना०टी० १८

क्तवसाभिचारित महामांसाहुती र्जु
हतां वह्निब्रह्म कपाल कल्पित सुरा
पानेननः पारणा सद्यः कृत कटोर
कंठ विगल क्कीलालधाराज्वलै र
र्थ्योनेः पुरुषोप हार वलिभिर्देवोम
हाभैरवः २३ भिक्षुः कर्णौपिधायपु
द्व २ अहो दारुणा धर्मचर्या

कपालकोवाच॥कवित्त॥सुनि छिपनक
अब तोहको बषानकरो सुनिकै हृ
मारो धरम चीतमाहि धारये वाल
के कपाल माहि चरवी बिसाललगी
मासकी अहूती माहि पावक सुडा
रये भूसुर कपालडार मदरा बिसा
ल पुनिकीजे मधपान इत व्रतको उ
पारये काटनर मुंड हम वैर विरु
कंठभजे स्रोणनकी धार पावभै रवि॰

पधारयो ११ कवित॥ सुनिके सुभिक्षुक दवाइ दोउ कान लए षिपणक उर धुनि ऐसे तरु लायोहै सनो बुधबुध वेत संतहो महंत वडे दारुण सुधरम यो कपालिक बतायोहै

भाषार्थः॥ कापालिक कहता भया अरे दिगंबर तुम प्रथम हमारे लोकोंका धर्म सुणो जिसकारणने मोक्ष दुःख करके जानने आउताहै उसका उत्तर प्रथम है हम लोकोंका ब्राह्मणोंके कपाल कीते होइ सुरापान करके तृ मी होतीहै हम लोक कैसे हैं मगज करके भरी होई जो चरभी है उसकर के चिकणाई वालीयां जो बडे मांसकी यां आहुतीयां हैं उनोका अग्नीविषे हवन करणे वाले हैं अरु हमलोको

प्र.वं
भाटी
१९८

ने प्रकृष्ट प्रहार वलीयोंकरके महा
भैरव देवपूजनीयहैं कैसीयांवली
यांहैं तल्पणान्छेदकीते होये जोकठो
रकंठहैं उन्होंते निकलीयांहोईयां जो
रुधिरधाराहैं उन्होंकरके उज्वलहैं ॥ ॥
वोह इहवचन सुणकरके कर्णाको
छुपाइलेकरके अपणे देवका स्मरण
करताभया हे बुद्धभगवन् बुद्धभगव
न् बडाखेदहै इह कैसी कठोर धर्मचा
र्याहै ॥ ॥

मूल॥ क्षपणकः अलिहंत २ होणपाव
कालिणा विविध्य लधे बलाय

कवित॥ छिपणक नांको प्रकार जनमा
हि कह्यो घोर पापकारी किने याहि
को ठगायोहै गुलाब सिंह सुनत क
पालक कराल प्रति कीने द्विगलाल

मन माहि धुनसायोहै ५१

भाषाटी॥ दिगंबरभी अपनेदेवकासमर
णकरताभया हे अर्हन् हे अर्हन् भग
वन् घोर पाप करणेवालेकिसी उरुष
ऋषने इह विचारा वंचनकीताहै

मूल॥ कापालिकः सक्रोधं आः पाप पा
षंडापसद मुंडित मुंड चंडाल वेषके
श लुंचक अरे विप्रलंभकः किल च
तुर्दश भुवनोत्पत्ति स्थिति प्रलय प्र
वर्तको वेदांत सिद्धांत प्रसिद्ध विभवो
भगवा न्भवानीपतिः दर्शयामासहि
धर्मस्यास्य महिमानं पश्य हरिहर सु
रज्येष्ठ श्रेष्ठान्सुरानहमाहरे वियति व
हतां नक्षत्राणां रुणध्मि गती रपि स
नग नगरांसंभः पूर्णां विधाय मही
मिमां कलश पाकले भूय स्तोयं क्षणे

प्र० चं०
भा० टी०
१६५

169

नयि वामि नत्‌ २५

कपालकोवाच॥कवित्त॥ मुंडन समंडरे
चंडाल भेष पापी वडे वडेही पषंडी
सिरकेसन छुटाइहे लोकनके ठाग
रे सभागने पलाइ गए सिवको महा
न पथि ताहि मैन आइहे चारदस भो
न जोई षिनमै पाला इलष करे प्रति
पाल पुनि षिनमै पषाइहे वेदांत
के सिधांतमै प्रसिधहै प्रभाव जाहि
हरन भवानी पति लोकवेद गाइहे
ताहिको सम नलये जाहिको प्रभा
व नयो धरमको महानमसो नैन देष
लीजिये विस्मादिजे सम्रो सुरेस आदि
वडे देवनैनके निहारो कहा इहां आ
नदीजिये नभि रवि वेद ओ निषत्रके

कदंबजिते कहा याहि गने धरवैदेही
हकीजिये कहा नरनागर सभूमिज
ल सरदयो कहा षिन भीतर सतोय
सम पीजिये ४३

भाषाटी॰॥ कापालिक कोधक बके कह
णेलगा अरेपापी अरु पाषंडीयोंवि
षे नीच अरु मुंडनकीने होये मुंडवा
ले अरु चंडालजैसे वेशवाले अरु के
शोंको खोडणेवालेहै दुष्ट रह जो च
तुर्दश भुवनोंका उत्पत्ति स्थितिप्रल
य चलाउनेवाला सर्वसिद्धांतोविषे
प्रसिद्ध विभववाला महाकालीका
पति महेश्वरहै सोभी क्या वंचकहै
अबमे तुमारे तांई इसधर्मका महि
माको दिषावोंगा सुणतुम ४४
मै इसधर्मके प्रभावते विस्नु शिवब्र

प्र बं
भा टी
२०

170

आग्रादलैके देवतयोंको ग्रासकरेंगा
अरु आकाशविषे चलनेवाले नक्षत्रों
कींगतीयांकोभी वंधकरेंगा अरु प
र्वतांकरके नगरोंकरके समेत इह
पृथ्वीकोभी क्षणमात्रतेही जलकर
के भरीहोईकों करेंगा अरु फेर उस
सारे जलकोभी क्षणमात्रते पीवले।
वेंगा २५ ॥

मूल॥ क्षपणकः अलेकावालि अदोज
भणामि केणवि इंदिआलिणा इंदि
आलमायदासिय विप्पलद्धेसि

क्षिपणकोवाच॥कवित॥ रेनरे कपालि।
क रेमई मति वालक रेमानवको
मूढ तव करम ऊनायोहै कहूं इंद्रजा
लक रेमायाको दिषाइ तव मोह म
नलयो उरतोरको भमायोहै ॥

भाषाटी॰॥ दिगंवरकहहै अरे कापालिक ऐसे कारणतेही मै तुमको कहताहों क्याते किसी इंद्रजाल जाननेवाले पुरु षने इंद्रजाल मायाको देषाइकरके वेचनाकीताहै॥

मूल॥ कापालिकः आः पाप पुनरपि प रमेश्वरं ऐंद्रजालिक मित्या क्षिपसि न त्वमर्षणीयमस्यदौरात्म्यं त्वदुमाकण्ठ नद हमस्य २६ पतत्कराल करवाल निकृत्तकंठ नालोच्छलद्बहल फेनिल बुद्बुदौघैः साईंडमतुमहडं कृति हूत भूतवर्गेण शहिणी रुधिरैर्धिणोमि शंति त्वद्भ ग्रयच्छति २२

कवित॥ ऐसो सुनि कानसु कपालिक महान अति दाव दोउ कान मन माहि सुनमायोहै इंद्रजाल वेत भगवंतको।

प्र.चं.
भा.टी.
१७१

समूहकही तीन लोक जाहि विन प
कमे बनायोहै तोहि दाहांत मता मो
हते न सही जाइ काउगै अब करमै उ
टाइहो कराल कर वारसो उतार भा
ल तेरो अब कंठ नव नालने खोलोहू
को झुभ्राइहो उमडू बजार धुनि भूत
किल काहि संग काट नव शुंड हम
वानीको चढाइहो श्रोणितकी धार
छुटे फेनऊार झुंट उटे मैषघ धुषहूमे शि
वघतिनी दिकाइहो ४५
भाषाटी॥ कापालिक कहिनाभया ग्रे
पापी दिगंवर का तुं फेरभी परमेश्वर
को इंद्रजालिक ऐसा नाम करके नि
दा करतेहै तिसी कारणते मैने इसकी
उगाम्मतानही सहारणीहे ऐसा कह
के खङ्गको षैचले करके फेरकहनेल

गा २८ में इस दिगंबरके रुधिरों कर
के महाकालीको तृप्तकरेंगा अरु
इस शोहायमान उसहके डाकारशा
हकरके आवाहनकीतेहोइ भूतसमू
हकोभी तृप्तकरेंगा कैसेरुधिरहैं
इहजो हमारे हाथ विषे तीक्ष्णखड्गहै
इसकरके तुरत छेदकीता जोइसका
कंठहै उसते उपर चडियाहोया बड्
त बुडबुधावाला फेन जिनाके विषे ऐसे
हैं ऐसावचन कहकरके खड्गको उ
ठावताभया २७

मूला॥क्षपणकः सभयं महाभाग अ
हिंसा परमो धर्मस्तस्य इति भिक्षोरेवं प्र
विशति भिक्षुः कापालिकं वारयन् भो
भो महाभाग कौतुकप्रयुक्तेवा युक्ता
हैनयुक्त मेतस्मिं तपस्विनि प्रहर्तुं ।

प्र० बं
भाटी०
१७२

कापालिकः खेद्धं प्रति संहरति खप
णकः समाश्वास्य महाभाग ग्रजर सेहु।
लिद बोलतो सवैसे संवृत्त तदोह्ला किं
विज्ञछिद मिक्लामि कापालिकः एछ
खपणक सहैतस्याणं पलमे धम्म प्र
धकेलिसे मारएव मारएवे

दोहा॥ ग्रैसे सुषी उचारके लीनो षग
निकार षिपणक षिष उरभे भयो
लागो करन उचार षिपणकोवाच
ग्रहिंसा ष्रिम सुधम है महाभाग इम
जान वरयो सभिक्षक ग्रेकमै ग्रैसे
सुषी वषान तव भिक्षक कपालिके
वारन कीनो ग्राप महाभाग मै रविभ
गति षिपणक है निहपाप कोलाकि
कयो निमित्त ग्रव हनो न याको ग्रा
ण कपालिक ग्रैसे सुनत ही कीनो

षगमियान षिपणाक स्वमन सहे।
इकर वड़र पछे विषयात महाभा॥
ग यद्दपि कपे तदपि पुछेवात १००
कह्यो कपालिक हछि श्रव षिपण
प्रभ सकीन मे हनियो तमरो धरम
ग्रहे स्वपरम प्रवीन कैसे तबमन सु
षहै कैसो मोष तहार मेउरमे संसाभ
यो नीके करो उचार १०२

भाषाटी॰ दिगंवर देषकरके कहनेलगा
हे कापालिक ग्रहिंसाजोहै सो परम
धरमहै ऐसावचन कहकरके बौद्ध
के गोदीविषे भयकरके बेठताभया
बौद्ध उठकरके कापालिकको विन॥
यपूर्वक समजावनेलगा हे महाभा
ग्य कापालिक विनयपूर्वक समजा
वनेलगा इह जोकौतककरके परस्प

प्र चं
भा टी
१२३

123

र कीना होया वाणी का कलह है इ
तने मात्र करके ही तैने इस विचारे को
नही फटदेणा योग्य है कापालिक
विनती का सुणकरके खड्ग को हटाव
ता भया दिगंबर श्वास संचालकरके
कहने लगा हे महाभाग्य कापालि
क जदतैने कठोर क्रोध दूर कीना है
तद हम तेरे को कोई बात पूछने को
चाहता हो कापालिक कहे है हे दिगं
बर पूछो तुम दिगंबर कहे है हे कापा
लिक तुमारा परमधर्म सुण्या है अब
कहो तेरी मोक्ष कैसी है

मूल॥ कापालिकः श्लोक २७ दृष्टं क्वा
पि सुखं विना न विषयै रानंद बोधो
ज्झिता जीवस्य स्थिति रेव मुक्ति रुपा।
ला वस्था कथं प्रार्थ्यते पार्वत्याः प्रतिरू

पयादयितया सानंदमालिंगितो मुक्तः
क्रीडति चंद्रचूडवपुरि सूची स्वज्ञानीय
तिः २९ ॥

कपालकोवाच ॥ चौपई विषै विना सुष्क
बहुन पेषै अनिद वाध विषै मे लेषै
तांते विषै भोग है जोई वही रूपकछु
और न होई आतमस्थित मोष वषाने
ते पसु बुध महा अज्ञाने उपल अवस्था
वहु जग वहे बुधवंत तिह किह विध
चहे अपनी वयकीजो अनुरूपा युव
ती मिले सुमोष अनूपा यापर संमति
तोहि दिषाउ तेरा सभ संदेह मिटाउ
पारवती प्रतिरूप नवीना ता संग वहे
सदा सुषभीना चंद्रचूड सिव युकति
भनीजे क्रीडा करे दरस उष दीजे ८

२८

सुगातम

भाषाटी० ॥ कापालिक कहैहे

प्र॰ चं॰
भा॰ टी॰
१७४

174

हे जनो तुसी बुद्धी करके विचारो की
विषयभोगोंसे विना किसी जगाविषे
सुष देष्याहै इह जो और मतवादीयो
ने कही होई मुक्तीहै क्या दुःखोकी
निवृत्तीही मुक्तीहै ऐसी मुक्तीको कौ
न चाहेगा जिस कारणते आनंदका वो
धविना जो जीवकी स्थितीहै सो पाषा
ण अवस्थाहै इनो वैदिकोंका ज्ञानिता
त्यागकरके पाषाणपदवीका चाहना
अत्यंत आश्चर्यहै ऐसाही मत सो भग
वान् कहिता भया सो मक्या कहीइ
पार्वती सहित भैरव उसका सिद्धांत सो
मसिद्धांत कहीये हे लोको और भी देषो
इह जो वेद शास्त्र शिवहै सोभी अपने
समान रूपवाली पार्वतीने आलिंगन
कीताहोया आनंद करके रात्रदिनको॥

डाहीकरताहै इहभी भक्तजनोंका ह

षोंतहै २१

मूल॥ भिक्षुः महाभाग अश्रद्धेयमेत

द्वीतरागस्य भुक्तिरिति

भिक्षुकोवाच॥ सरधा लाइक न अहे म

हाभाग यह रीति विषे राग वीत यो

नही भुकत कहा तहमान ९०

भाषाटी.॥ शांतीकहैहै हे सखी करुणी

अब पापकी बातभी कोईनही रही जि

स कारणते पापभी भ्रष्ट अब होगा

याहै हे सखी करुणी क्या ऐसे श्रा

वकोभी शिव भगवान् करताहै उस

न्मजनोनेही सारे तरफ जयकीताहै

मूल॥ क्षपणकः अले कावालि अज्ज

इणलू सत्ति तदो भणामि सलीली

सालंगी भक्कोव अविलब्वं कापालि

प्र चं
भा टी॰
१२५

125

कः स्वगतं श्रद्धा हि मम मनयो ऽन्तः
करणं भवत्वेवं तावत् प्रकाशं श्रद्धे
इत स्तावत् ततः प्रविशति कापालि
नी रूपधारिणी श्रद्धा
षिपणकोवाच॥ अरे कपालिक रोष त
जि एक्को वात प्रसिध अह सरीरी
प्रकति पुनि यह मत वड्डन विरुध
हनत कपालिक मनविषै कीनो इ
ह विचार याके अंतह करणमे अधि
असर धानार निजमत सरधा आज्ञ
पुनि लीजे वेग बुलाइ सुषा वषान
यो प्रगट तिन सरधे तूं इत आइ
भाषाटी॰॥ वौद्ध कापालिकके प्रति क
हनेलगा हे महाभाग्य ऐसा वचन
नही श्रद्धा करणीय है इह संसारि
क लोकोंका वचन है दिगंबर कहै

है अरे कापालिक जदतूं नहीं रोष
करेगा तदमैं कहताहों एक प्रथम
शरीरवालाहोकरके अरु रागवा-
ला होकरके पुरुषधर्म है इह वचा-
न अत्यंतविरुद्ध है कापालिक सुण
करके चिंतना करणेलगा क्या इनो
दोनो पुरुषोंके चित्त विषे श्रद्धा है न
ही होवे ऐसा चिंतनकरके वाहर आ
वाज मारणेलगा हे श्रद्धे तुम अंदर आ
उ ततः तिसते उपरंत कापालिकके
समान रूपवाली श्रद्धा प्रवेश करा-
ती भई ॥
मूल॥ करुणा सखि पेरखय सहजस्प
दं सहं यप साविशाद नीलप्पलले।
ललोअणा ३. नरास्थिमाला कृतचा
रु भूषणानि संवीणत्यण भालम

प्र.वं.
भा.टी.
१२९

176

यला विहारदिगंण लोइ सुही विला
सिणी अडा परिक्रमय पसालि अणा
वीउ सामी ३१

दोहा॥ तब आई सरधा तहां नृपक॥
पालिकधार करुणाना को हेर क
र कीना सांति उचार सषी रंजो ग
णकी सुता सरधा याहि पछान ॥
लाव सिंव कवि नृप तिह आगे करे
वषान ॥ सवैया॥ नीलसरोज विलो
ल महादिग मांग संहर सुहर बना
ई सुंदर भूषण आहि बने नरहाउ
नकी गलमाल सुहाई पीन निते
बस पीन उचा कटि मधिम आनन
चंदलजाई आइ प्रदछण ताहि दई
कहि स्वामिन आइ सदेह बलाई ३१

भाषाटी॥ करुणा कहेहै हे सषी श्रां

ती देषो त्वम इह रजोगुणकी कंन्या
श्रद्धा राजसी श्रद्धा है सो विलासोंकर
के शोभती है इह कैसी है फुलेहोये
नीलोत्पल पुष्पके न्याई चंचल नेत्रों
वाली है २. अरु मनुष्योंकीयां जो
अस्थिमाला हैंन् उनोंकरके कीने हो
ये सुंदर भूषण जिसने ऐसी है अरु
नितंवके भारकरके अरु मोटे स्तनो
के भारकरकेभी आलसवाली है अ
रु पूर्णचंद्रमाके न्याई मुखवाली है
राजसी श्रद्धा प्रक्रमादेकरके कहने
लगी हे स्वामिन् इहमैं आनप्राप्त हो
ईहों मेरेको आज्ञाकरो ३॥
मूल॥ कापालिकः प्रिये पश्येउ रभि
मानिड्रे भिक्षुं तावत् गृहाण अद्याः
भिक्षुमालिंगति भिक्षुः जनांतिकेसा

प्र. वे.
भा. टी.
१७७

नेदं परिष्वज्य रोमांच मभिनीय अहो
स्पर्शः कापालिनी तथाहि ३४
रंडाः पीन पयोधराः कतिमया चंडाऽ
रागाङ्गुज दोर्दंड पीडित पीवरस्तनभरं
गाढ मालिंगिता बुद्धेभ्यः शतशः
शपे यदि स्वनः क्वापि कापालिनी
पीनोत्तुंग कुचोप गूहनभवः प्रामः
प्रमोदोदयः ३५

सवैया॥ है अबि मान बडो इनको अब
भिक्षुक को गहि लेउ पिआरी यो स
निबान कपालिक कीह स भिक्षुक
अंक मिली भुजडारी भिक्षुक मानि
द अंक लई तन रोम षडे सजगे सि
व आरी सु अहो सुष याहि कपाल
निका हम धंनि भए इम बात उचारी
पीन पयोधर नारि कहू जिनके म म

नाममम ग्रंथकछहाई भूलपिछो तव मा
रकरे अरु दोष जनावत ग्रंथ सुनाई
श्रावका श्रोतिन ग्रंथनको सतवार धि
कारवडे उपदाई अरु कपालिन पीन
उचा कुहि मोटवडे सुवडी सुषदाई
भाषाटी॥ कापालिक कहैहै हे प्रियतम
इसउष अभिमानवाले बोउको नावतु
हणकरो अद्धाउटकरके रोमहर्ष देषा
इ करके कहनेलगा वडाआश्चर्यहै के
सी इह कापालिकी सुखकरणेवाले
स्पर्शवालीहै २२ मैने पूर्वकालविषे
किननीयो गाढकरके आलिंगनकी
नीयांहैं सो कैसीयांथीयां मोटेस्तनो
वालीयांथीयां अरु बडुतरागवालीयां
थीयां अरु हमने दोनोंभुजोंकरके पी
डेहोये मोटेस्तनोंकाभार जिनोंका थे

प्र०चं०
भा०टी०
१७८

सीयोंयीयों अब इसवेलेमें अपने बडे
वौढकी सेवा करताहो क्याहमने आज
दिन पर्यंत इस कापालिनीके मोटे ऊं
चे कुचोंके आलिंगनसे उत्पन्नहोया
आनंदका उदयनही किसीस्थानवि
षे प्राप्तकीयाहै २२

मूल॥ अहोवुण्एवं कापालिके चरिते अ
होआख्यः सोमसिद्धांतः आश्चर्योयंधर्मः
भोमहाभाग सर्वथा बुद्धानुशासनम
स्माभि स्तत्त्वहे प्रविष्टाः स्मः पारमेश्व
रे सिद्धांते तदाचार्यस्त्व शिष्यास्ते भवे
शायें मो पारमेश्वरी दीक्षां

सवैया॥ अहो अहो सच पुंन कपालिकके
जिनके मत याविधको सच पये स्वअ
हो यह सोम सिधांत बडो जिनके सम
और न हम रहये पुनिहै यह धरम अचं

वडभाग स्हेनो स्कहा शुषगये अव
मै दिठ आवग पंथ तजो कवहूं तिन
के मति भूलन जये परमेस्वरको घर
सोम सिद्धांत स्ह नाहि विषे अवमै च
ल आयो अव तू गुर सिष स्ह मोहि पि
षो गुर दीष दिजे सधरो नव पायो पि
षनाहि दिगंवर कोपभयो स्ह कपालि
न सो तव अंग छुहायो

भाषाटी॥ वडा आश्चर्य है कैसा इह का
पालिक चरित्र पापवाला है अरु इ
ह सोम सिद्धांत श्लाघा करणे योग्य
है अरु इह धर्म आश्चर्य है हे महाभा
ग्य कापालिक सारे प्रकारो कर के मै
ने वौद्ध शास्त्र त्याग करिया है इस वे
ले परमेस्वर सिद्धांत को प्रवेश करो॥
गा तिसी कारणते हम आचार्य हो मै

प्र॰ चं॰
भा॰टी॰
१२५

शिष्य होंउ तुम मेरे को परमेश्वर की
दीक्षा देउ ॥

मूल॥ क्षपणकः अले भिरवु आ का
वालणी पलस हसिदेक्ष मंता हले
अपसल ॥॰

सवैया॥ पिषताहि दिगंबर कोप भयो
स कपालिन सो तव अंग छुहायो स
ट भिक्षुक हूरचलो अनिहषन कैं म
म आवत है निकटायो

भाषाटी॰॥ दिगंबर कहै है अरे बौद्ध तुम
कापालिनी के स्पर्श करके दोषवा॰
ला होया है तिसी कारण ते तुम हूर
जाउ

मूल॥ भिक्षुः आः पाप वंचितो सि रे का
पालिन्याः परिरंभ महा महोत्सवेन

दोहा॥ तव भिक्षुक षिपणक कह्यो

वंचयो पाप विसाल याहि कपालिन
संग स्वष कहां तमारे भाल

भाषाटी॰ वौद्ध कहै है अरे पापी दिगंवर
तेरेको इस कापालिनीके आलिंगन से
पवडे उत्सवने वंचनाकीनी है

मूल॥ कापालिकः प्रिये क्षपणकं गृहा
ण कापालिनी क्षपणक मालिंगति

चौपई तव भिक्षुक पुनि यह उचारी क्षि
पणकको गह वेग पिआरी षिपणक
कह वेग पिआरी षिपणक अंकमिली
ह्विगषाले भयह मेंच स्ब षिपणवबोले

भाषाटी॥ कापालिक कहै है तम इस दि
गंवरकोभी ग्रहणकरो अहाउटकरके
दिगंवरको आलिंगन करतीभए

मूल॥ क्षपणकः अरे रोमांचे अहो अलि
हेत २ कावालिनीयं मस्त्रहे संदलिदे

प्र० चं०
भाटी०
१८

सद्भाव गुणेण अंकवालिकापालिनी
तया करोति क्षपणकः स्वगतं अलेम
हे नेत्त ईदि अवि आलेडवाम्रिदे ता अ
प्यिका विडवाणा कि पम्पिज्जदि भोडवि
कृपापढं किस्से तथा कृत्वा ॥

सवैया॥ मुख हेरि हारि रसावग रसावग
ने सकपालिनि संग बड़ा सुखदाई अ
ति संदर देह सनेह बडे गहि फेर मिले
भुजदंड लेभाई मन आवग सुख मद्य
न भयो यह अमृतकी सु विरंच बनाई
अवजाइ इकंतर मैा इन सो इनसा इम
गूढ लिने मनमाहि नताई ४८

भाषार्थ॥ दिगंबर रोमांच देखाइकरके
कहनेलगा हे अर्हन् हे अर्हन् इस का
पालिनीका स्पर्श भाव अत्यंत आश्चर्य
है तिसी कारणते कौन इसका उपाइहै

अब्बाहोवे इसमोरके पंखकरके मै
इंद्रियको छिपावलैंउगा ऐसा चिंत
नकरके मोरदे पंखकरके इंद्रियको
छिपावलैकरके दिगंबर कहनेला
गा हे कापालिनि जद तुम मेरे साथ
क्रीडा करेगी तद हमको इह अडावा
ली दिगंबरोंकी सभा क्या करेगी ॥
मूल॥ अथि पीन थणा छुणा मोहणी प
रितच्छऊलेग विलोअणाज इलि मसि
कावालिणि भाव किना किंकलिस्स
दि सावकी अहो कावालि अपकंदस
णं मोरख मोरख साहणं भो आवालि
अग्गे तुफो किंकले संपदे संडामो मंपि
महाभैरवाणउ सामणो दिरत्वठाणे
ण ॥ ॥
सवैया॥ थन पीन पयोधरसो भिन नूं न्ह

ग सावक भीत सुनैन निहारे सुक
पालिनि जो मम संगर मे तव साव
गको डर नाहि हमारे सुकपालि
क आगम धंन अहो जिन भीतर मो
ष स्वरूप अपारे सुकपालिक आजु
अचारतें हम दास भए तव पाद नि
हारे ॥२१॥ दोहा ॥ भैरवके अनुसासने
सिद्धादी जे माहि मे सब पंथ निहार
सरन पेषा ताहि ॥ २२
भा॰टी॰॥ तुमकैसीहै मोटे अरु चंच
लोचन हैं उनोंकरके शोभायमान
है अरु भयवाले कुरंगके न्याई लो
चनों वालीहै वडाआश्चर्यहै इह ए
ककापालिक शास्त्रही सबकों अ
रु मोक्षको साधने वालाहै हे आचा
र्य मैं इसवेले तेरा किंकर होयाहों

तम मेरेकोभी भैरव शास्त्रकरके दीक्षाकरो ॥

मूल॥ कापालिकः उमाविश्यतां उ भौ तथा ऊरुतः कापालिको भाज ने समादाय ध्याने नाटयति

दोहा॥ कह्यो कपालिक देनको बैठो मो ढिग आइ तब षिपणक भिक्षु क तबै बैठि मोलि झुकाइ

भाषाटी॥ कापालिक कहेहै हे बौध दिगंवरो तसी दोईजने अंदर झटीवि षे प्रवेशकरो तिसते उप्रांत दोई बौ द्धभी दिगंबरभी अंदर झटी प्रवेश करतेभए कापालिक सराके पात्र को हाथविषे लैकरके भैरवका ध्यान करताभया॥

मूल॥ श्रद्धा प्रभवं सुरिदं सरापभाश्रणं

प्र बे
भा टी
१८२

182

कापालिकः विलोक्य पीत्वा शेषं
भिक्षुक्षपणकयो र्ददाति १४ इदं प
वित्रमम्रतं पीयतां भवभेषजं पशु
पाशसमुच्छेदकारणं भैरवेणोदितं
दोहा॥ कपालिक भाजन हाथ है बै
ठो लाइ ध्यान सरधा तबै कपालि
नी ल्याई सुरा महान १४॥ सवैया॥ भ
गवंत महंत वडे जग संत सभै मद
सो यह इरन कीयो तब नैन उघर
विलोक भली विधि आप कपालिक
सो मद पीयो कछु सेष रह्यो मद
भाजन मै तिन भिक्षुक और दिगंबर
दीयो यह पावन अम्रत पान करो
सम्बंध तजो सब सो सुख जीयो १५
तथा च तंत्रे॥ पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा या
वत्पतति भूतले उथाय च पुनः पीत्वा

पुनर्जन्म नविद्यते॥१॥ सवैया॥ भव भेष
जहै पशु पास कटे मद्यपान सु भैरव
आप वनाये।
भाषाटी॥ श्रद्धा कहे है हे भगवन् इह
सुरा का पात्र भरिया होया है कापा-
लिक देखकर के प्रथम आप पीवले
करके शेषको वोह दिगंबर के देता
ई देता भया देने वेले इस मंत्रको प
ढता भया इस मंत्रका अर्थ क्याहै
इह पवित्र अर्हत नसी पीवो इह
कैसा है संसार का औषध है अरु जी
वों के पाशों के छेदका कारण है इ
ह भैरव का मत है २५
मूल॥ ऊर्मीर्भाविम्हश्रूपनतः क्षपणकः श्र
द्धाणं अलिहंताणं सासणे सलापा
णोणाम्यि भिक्षुः स्वगतं कथं कापा-

प्र॰ चं॰
भा॰ टी॰
१८३

1963

लिको बिक्षुष्ठं सुरां पास्यामि कापालि
कः किं विस्मृयसि अहे पशुत्व मण
यो नोपाण्यपनीयत तेन अस्मद्वदन
संसर्ग दोषादपवित्रां सुरामेतौ मन्ये
ते तद्भवती स्वयं का मवसतो कत्वा
अनयोरुप नयतु यतस्तीर्थिका अपि
वदंति हीसावेव मदारुचीति

सवैया हमरे मतमै मदपान नही सु
अरहंत गुरु गुहि आप कुडायो किह
भांति कपालिक जूटपिवो मदरा
इह भांति सुभिक्षु कगायो सुकपा
लिक भेष कहयो सरधे सुविचार
करे मनमै सुकचाय अबलो मति
याहि मलीन अहे पसुभावनही उ
नके सुमिटाय हमरे गुरु संग सदा
स अपावन याहु सुरा मनमै टहराय

प्रवर्त्त ग्रुप्त ग्राम ग्रामव स्मरणैकै १
न देहि संगादु इने भ्रम जाप १२

भाषाटी॰ तिसते उपरांत होइजने विचा
र करतेभये प्रथम दिगंवर विचार॥
नाभया मैंकापालिक उच्छिष्ट स्वरा
किस प्रकार पीवेंगा कापालिकक
हैंहे हे बौद्ध दिगंवरा तुसी क्या वि
चारकरतेहो हे यहै इनादोनाको॥
प्रजेभी पशुभावनही हरहोयाहै
तिसीकारणकरके इह दोनो जने
मेरे गुरुके संगकरके पवित्रहो
इका इस स्वराका मानलेतेहैं ति
सीकारणते तुम अपने गुरुकरके
पवित्रहोई मदिराको इन दोनाको
पिलाउ जिस कारणते तैर्थिक जो
सरतीयां का जाननेवालेहै सोभी॥

प्र चं भा टी० १८४

कहतेहैं क्या स्त्रीका स्वभाव सदापा
पिचहै ॥ ॥

मूल॥ श्रद्धाजभवं प्रणवे दिति पा
नपात्रं गृहीत्वा पीतशेषं गुरुपनयत

सवैया॥ स्वमदाचि नारिनको गुनहै
इह भांति कहै कवि वेद वीयो सर
धा स्त्र कपालिक जोर उं करनाथ
कहो स्त्रवने प्रवकीयो

भाषाटी०॥ श्रद्धाकहैहै हे महाभाग्य
जो तुम आज्ञाकरोगी सो मैंने कर
णीहै श्रद्धा सुरापात्रकों लै करके
प्रथम आप पीव करके शेष बौद्ध
के हाथविषे देतीभई

मूल॥ भिक्षुः महाप्रसाद इति चषकं
गृहीत्वा पिबति श्रहो सुरायाः सौ
दर्य्यं निपीताः वेश्याभिः सहनक।

निवारान् सुवदना सुवोच्छिष्टासा
मि विकच वकुला मोद मधुरा कपा
लिम्पा वक्रासव सुरभि मेतोत्र मदि
रा मलक्षाजानीमः स्पृहयन्ति सुधा
यै सुरगणाः

सवैया॥ मदभाजन लै सुष पानकरे
सुनि सेष सुभिक्षुकके करदीयो सु
हि आज्ञ प्रसाद महान भयो इम भा
ष सुभिक्षुक सोमदपीयो सु अहो
आसव गंध वडी मष पानकरे मनमे
विगसाई नहि वार वधू संग पानक
रे सुष गंध सरोज समान सुहाई स
कपालिनिके सुषगंध मिली अब पी
व सुरा सभमे सुध आई सुरसाव स
धा उर चाहतहै अब मोहि त्रिलोक सु
देत दिषाई २५

प्र. चं.
भाटी.
१८५

185

भाषाटी॥ बौद्धकहैहै महाप्रसादहै सु
रापात्र हाथ लेकरके पीवने लगा
पीवकरके कहने लगा बडाआनंद
है कैसा इस सुराका सौंदर्य है मैंने
पूर्वकालविषे कितनी वेरी वेश्यायों
के साथ मदिरा पीता है कैसी मदिरा
थी स्त्रियोंके मुखकरके वहुत मधु
रीथी अरु वकुल पुष्पोंकरके सौ
गंधवालीथी अव इसवेलेमें इस सु
गंधतावाली कपालिनीके मुखम
दिराको नही पाइकरकेही अमृत
की वांछा कीनी है जद सो देवगण
इस मदिराको नही पाइकरकेही ल
भनेथे फेर कहां सो अमृतकी वां
छा करनेथे॥॥
मूल॥ क्षपणकः अलेभि खलु आमा

मवे पिवकाचालिनीव श्रणमलम
मदिले ममविधालेरुः भिक्षुः क्षप
णकाय चषक मुपनयति
खिपणकोवाच॥दोहा॥ रेभिक्षुक मत पी
व सम भयो प्रसादित्तु तोहि याहि
कपालिनि जूत मद देऊ कृपाकर
मोहि ३९ तव भिक्षुक मद चष कर
पुनि दीनो षिपणक हाथ पीव प्र
सनहोइ मन बोलयो कोकरुमाथ
भाषाटी॥ दिगंबर कहैहै अरे दिगंबर
नमस्कारी मदिराको मद्य पीवो मेरे
कोभी कापालिनीके शुवकरके
रसवाली मदिराकोदेउ बौद्ध दि॰
गंबरके ताई सुरापात्र देताभया
मूल॥ क्षपणकः पीत्वा अहो सुला
प मङ्गलनाण अहो मादा अहो गंभो

प्र. बे.
भाटी.
१८६

186

अहो अलि सन्नणं चिलेत्र अलिहो
नाएअ मासेण रहिदो पडि वेविदाण
स्लि ईदिसेण अलेभिरखुआवेष्ठो ले
तिमे अंगारंतास विसं भिन्नः पवे
ऊर्वः तथा ऊक्तः
सवैया॥ ह अहो मद स्वाद महा मध
रो ह अहो मध गंध वडी सुखदाई
चिरदेव सुखया सुखते सुरहयो सु
अहंत करी शुहि भूरनगाई सत्रु मि
छुक मै छिग छूमनहै सम अंगनमै
उपजी अमाई अब सैनकरो प्रति
भिक्षुकनो अव पव करे सुखवान अ
लाई १३२
भाषाटी॥ दिगंवर पिवकरके कहनेल
गा वडी इस सुराकी मधुरताहै वडा
स्वादहै वडा सुगंधहै मैं चिरकालप

थंत जैन शास्त्रविषे पयाहेयाहों
तिसीकारणते निश्चेकरके मेरेको श्र
से मदिराके रसने वंचनाकीतीहै श्र
रे बौद्ध मेरे श्रंग भ्रमतेहै तिसीकार
ने मे निद्राकरेंगा बौद्धकहेहै हे दि
गंबर श्रैसाही दोईजने करेंगे तिस
ते उपरांत दोईजने निद्राकरते भये
मूल॥ कापालिकः प्रियेश्रमूल्यक्रीतं
दासद्वयंलब्धं तन्नृत्यावस्तावत् उभे
नृत्यतः॥
सवैया॥ वह दोन तहा तब मोद रहे
रु कपालिक यो शुभ माहि उचारे
प्रियप्रह कपालिन दोन परे बिन मो
ल भए श्रब दास हमारे श्रब नाचा
करे तब दोउ नचे प्रियताहि दिगंब
र जैन उचारे भिक्षक रे शुक संग क

प्रं चं
भाटी
१८७

पालिन नाचत पेष महानमवारे
भाषाटी॥ बौद्धकहैहै हे दिगंवर ऐसा
ही दोईजने करेंगे तिसते उप्रांत
दोईजने निद्राकरने भये कापालि
क कहैहै हे प्रिये इछ्या वरवने विना
ही इहदो दासलभेहैन तिसी का
रणते तावत् दोई जने नृत्यकरेंगे
तिसते उप्रांतयेककापालिक ग्रह
कापालिकी नृत्य करनेभये दिगंवर
शुद्र स्मरणाकरके कहनेलगा
मूल॥ क्षपणकः अले भिरवु ग्रापसे
अधवा आवालिआ कावालिनीपस
उं सोहंतं णाचे दिनाप मद्दे अस्स वि
णड्वामः
सवैया॥ इनके संग आउस नाचकरे
कह भिख्यकरे विगमाप मदह्नमने

न मनाचकरे विविके पदयो शुष
माहि मनाय। घन पीन पियोदर
चंदमुषी मृगनैन कपालिक तोहि
लजाय

भाषाटी॥ अरे बौध कापालिक अथवा
आचार्य कापालिनिके साथ शोभन
नृत करताहै तिसी कारणते हम
दोजनेभी इस कापालिनीके साथ
नृतकरेंगे॥

मूल॥ भिक्षुः एवं कुर्वः ततःमदस्ख
लितं नृत्यतः क्षपणकः अपि पीन
घन कुच इत्यादि गायति॥

सवैया॥ घन पीन पयोदर चंदमुखी
मृगनैन कपालिक तोहि लजाय
कवि सिंघ गुलाव लहे गति यो जिन
केउरहै महामोहप्रभाव ३४ कविता

प्र० वै०
भाटी
१९८

१८

व॥सवैया॥ जिनके मनमै हरि ध्यान
नही सभ पेखनते मिट जावैगे न
जि संजम नेम असे करहे जगभीतर
सिधकहावैगे तजि पंथ सनातन
माहि कलू मन वांछत पंथ चलावै
गे जग फैलहि गोरहू भाति कलू
सभसंत अनादर पावैगे॥३५
भाषाटी०॥ वैस्नकहेहै हेदिगंबर असा
ही करेंगे तिसते उप्रांत दोई जने
मदकरके आलसवालान्दन करते
भये दिगंबर गानेलगा अरे कापा
लिनी जद तुममेरे साथ क्रीडा करे
गी तद हमको इह आडावाली जैनों
की सभा क्या करेगी तुमकैसा है
पीन अरु घन जो स्तन हैं उनों करके।
शोभायमान है अरु भयवाले ऊरंग

के न्याई लोचनवालीहै ॥

मूल॥भिक्षुः आचार्य महाश्चर्यमे।
तत् दर्शने यत्रा क्लेश मभि मता
र्थ सिद्धयः संपद्यंते ॥

भिक्षुकोवाच॥दोहा॥अदभूत आगम प
हहै कहे कपालिक सोइ विनु क
लेस जिहमतविषे अभिमिति सिधि
सहोइ ३६

भाषाटी०॥बौद्धकहेहैहे आचार्य इह।
मार्गवडा आश्चर्यहै जिस मार्गविषे।
क्लेश विनाही इष्ट प्रयोजनोंकीया सि
द्धीयां प्राप्तहोतीयांहैं

मूल॥कापालिकः किंयदे तदाश्चर्यं
पश्यसि अत्राज्ञफित वक्त्रादि विष
यासंगेपि सिध्यंत्य मूःन्या सत्र महाद
य प्रणपि नामष्टौ महासिद्धयः वर्ष्यं

प्र चं
भा टी
१८५

कर्ष विमोहन प्रशमन प्रक्षोभण
उच्चाटण प्रायाप्राकृत सिद्धयस्तवि
उषां योगांतरायाःपरं ॥ २३ ॥

कपालकोवाच ॥ दोहा ॥ किया प्रदभूत
नाते पिवी और पिषा प्रब मोर वा
छन विषे सभागये बहुर सिद्धि स
भहोर अणिमा महिमा आदिजे अ
सिदि सिधि प्रधान ने समया मत
मै विना भेद पहिचान वसआकर
षण मोहणी अर प्रमाथ जान प्रक्षो
भन उचाटनं प्राकृत सिध पछान
जोग विघन यह लगका चाहे नहि
तिहि धीर पर प्रसंगक आइहै अै
सो मनो गंभीर ॥ २४ ॥

भाषाटी ॥ कापालिककहैहै इह कित
ना आश्चर्य है अब हम इस मार्गका

महात्महोंणा ३६ इस हमारे मार्ग
विषे जदभी इंद्रियोंकरके विषयों
का भोगनही त्याग करणाहै तोभी
अष्ट महासिद्धीयां सिद्ध होतीयांहैं
अरु वशीकरण अरु आकर्षण अरु
स्तंभन अरु क्षोभकरणा अरु उच्चाट
न आदलेकरके जो नीच सिद्धीयांहैं
सोभी सिद्धहोतीयांहैं परंतु इह सि
द्धीयां विद्वान जनोंको योगका विघ्न
हीहैं विद्वानजनकैसेहै बहुत निक
ट आनहोया जो मोक्षहै उस विषेही
प्रीति जिनोंके ऐसेहैं ॥३७॥
मूल॥ क्षपणकः अलि कावालि अ
विस्पृष्ट अले आचालि अविस्पृष्ट अ
धवा आचालि अराजकुल आवालिश्र
षिपणकोवाच॥ चौपई॥ अलि कवलि या

प्र॰ चं॰
भा॰टी॰
१९०

यो उपगायो षिपालक वड्र विचार
ह्व ग्रायो अथवा अले अचाले भावे
अपाल पालकम अहे ह्वाले ॥
भाषाटी॥ दिगंबर कहै है मल्लहोरके
हे कापालिक इतना वचन करके
फेर विचार करके कहने लगा हे राज
कलाचार्य मै अति आकुल होया है
मूल॥ भिक्षुः अलमनया मानिस्थाय पी
नया मदिरया ह्वर अन्मनी कृत स्वप
स्वी नत्क्रियनामस्य महाप नयने
सवैया॥ षिप भिक्षुक नाहि हसे उपमै
ह्व कपालिकके प्रति यह उचारे म
दरा वड़पान करी तपसी मति भूल
गई सभ पमति वारे
भाषाटी॥ बोद्ध कहै है हे कापालिक इ
ह दिगंबर विचारा अत्यंत करके पी

पीतीहोई इस मदिराकरके बहुतशो
त चित्तवाला होयाहै जिसी कारण
ते तुसी इसको मद हटाउ

मूल॥ कापालिकः एवं भवतिति स्व
शुखोच्छिष्ट तांबूलं क्षपणकाय ददा
ति ॥

सवैया॥ शुषवाकस्य वियाकुल एह भ
यो मदको उनमाद सु एहु निवारे
होनि भिक्षुक वात कपालिक तो शुष
भीतरते सु तंबूल निकारे ४२

भाषार्थ॥ कपालिक कहाहै ऐसाही
होवे रह वचन कहि करके कापालि
क अपने शुषका उच्छिष्ट तांबूल दि
गंवरके ताई देता भया

मूल॥ क्षपणकः स्वस्थी भूय आचालि
अप देव सुक्कामि जादिसी तुसाए

प्र वं
भा टी.
१६१

१९१

सलाय आह्लाद सिद्धी किंनादिसी
इम्रिया मुलिसे सविग्रस्य ॥
सवैया ॥ ऋषसीन नंवोलिकपालिक
नो सदिगंवरको निजहाथदयो
मदको मउ हर भयो षिनमै धर सी
न तेहल चवाइ लयो कर जोर गयो
गुरके ढिग तो मन भीतर सो सव
धान भयो गुर मुसकाते पद कंज ल
हे रुक एखन नोहि संदेह नयो जि
मते मउरा मम चीत हरे गहि वेग स
भैरवके मतलाय यह सिधि वडी
निजनैन पिषी तिम आर कहो कछु
है नफ पाप कुमती स मनो हरपे
ष जवे गुरजो तव सेवक चीत लभा
प यह आनसको कि नहो जगमे रु
र संक वडी गुरु देइ मिटाय ४४

भाषार्थ॥ दिगंबर स्वस्थ चित्त होकरके कहनेलगा हे आचार्य मैं ऐसीबात आपको पूछतोहौं क्या जैसी तुमलोकोंको इह मदका हरण सिद्ध है तैसी क्या स्त्रियों विषे अथवा पुरुषों विषेभी हरणसिद्ध है

मूल॥ कापालिकः किं विशेषेण पृछ्यते पश्य २८ विद्याधरीं वाथ सुरांगणां वा नागांगनां वाप्यथ पालिकस्मै यद्यन्ममेष्टं भुवनत्रयेपि विद्यावलान्तदुपाहरामि २९

कपालकोवाच॥ दोहा॥ पूछत कह विशेष पुनि सगल वषानो तोहि विद्याजाल सभको हरो छीलन लाग न मोहि॥ विद्याधरी सुरंगिना सर पपषकानारि तीन भवन भावन

प्र चं
भाटी
१९२

मनो त्यावो भोन मकार

भाषाटी॥कापालिककहैहै हे दिगंव
र तुम विश्वास करके कौं सुनता है
सुण तुम हमारी सिद्धी जो कोई वि
द्याधरीहै अथवा देव स्त्रीहै अथवा
नागांगनाहै अथवा यक्षकन्याहै अ
थवा देवस्त्रीहै इनोंतीनों भुवनोंविषे
जो कोई पदारथोंकोमैं विद्या केवलतें
अपने हाथविषे करताहों ॥ १९

मूल॥क्षपणकः भोइदं मए गणिदेण॥
एणादंजे समचे अहो महामोहस्स किं
कलेति॥

षिपणकोवाच॥चौपई॥मैं जो तिक पढ
यो वहुवारा कीन गणित मम पढ नि
हारा हम सभ महामोहके दासा ध
रम पंथ सभ करे विनासा १२०

भाषाटी॥ दिगंबर कहैहै हे कापालि
क मैने गणित विद्या करके इह जा
न्याहै क्या हम लोक सारे महामोह
राजेके किंकर हैं

मूल॥ उभौ यथा स्थित माध्यमतापवे
मेतत् ॥

कपालिकोवाच॥ चौपई॥ आयुषमान
यथा तव जानयो साच अहे नहि
झूट वषानयो षिपणक कहयो भू
पको काज करे विचार भले कछु
आज॥१४८॥

भाषाटी॥ कापालिक कहैहै हे दिगंब
र तैने यथार्थ जान्याहै इह बात ऐसी
हीहै दिगंबर कहैहै तिसी कारण त
सी राजेके कार्यका भी कोई सलाह क
रे कापालिक कहैहै सो कौन कार्यहै

प्र॰ चं॰
भाटी
१९३

मूल॥ क्षपणकः धर्म्मस्यैव मत्राम
हाला श्रस्य श्रणाय श्राहलि श्रउनि

चौपई॥ कपालक कह्यो कौनवहै का
ज खिपणक कहै वतावो श्राज मन
मना सरधा है जोई भूप क ही गहि
ल्यावो सोई॥

भाषाटी॥ दिगंबर कहै है धर्मकी कन्या
जो श्रद्धा है उसको तुम महाराजके
श्राज्ञा करके हरलेउ॥

मूल॥ कापालिकः कथय कासौ दा
स्याः पुत्री पषना मचिर मेव विद्या
बला उपहरामि

चौपई॥ कपालिक कहै सो करो उचार
दासी सुता कहा वहि नारि विद्या
बलसै श्रबै दिखाउं ताको वेगके स
गाहिल्याउं १५०

भाषाटी॥ कापालिककहै है दिगंवर नम कहो सो दासी कन्या श्रद्धा कहांहै ३ हमै कापालिक तिस श्रद्धाको शीघ्रही विद्याके बलते हरलैडगो

मूल क्षपणकः खटिका मादाय गणयति॥

चौपई॥ षिपणक धरतव पटा आगे लै कठिनी पुनि गणन सुलागे

भाषाटी॰ दिगंवर धूर्पटा लेकरके हाथ विषे वर्ती लै करके गिननेलगा

मूल शांतिः सखि श्रद्धा गत मिह हता शाना मालापं क्षणोमि तदवधानेन तावत्कर्णयावः

चौपई॥ शांति तवै पुनि कीन बषान करुणा सषी सुनैदे कान यह हतश्रा सतुकरे विचार ममम्मात ताको नाम

प्र वे
भाटी
१९४

उकार होइ इकार संनो पिआरी करु
णा कहयो सभली उचारी

भाषा॥ शांतीकहेहै हेसषी करुणा इ
नोउष्ट श्राशावालेयोंका इहवचन मे
रीमाना श्रद्धाके उपर जानतीहो ति
सीकारणते सावधान होकरके तावा
त इह हमांत दोजनीयां सुणोगीयां

मूल॥ करुणा सहिपद्वे करेम: उभे
तया ऊरुत:

दोहा॥ तदोनो हाठी तहा चीत इका
गर धार करगणनी छिपणक लबै
लागा करन उचार

भाषाटी॰ करुणाकहेहै हेसखीशांती
श्रेसाही करेंगीयां तिसते उपरांत दो
ईजनीयां ऊटीके हारविषे कणलगा
वनीयां भईयां

मूल॥ हपणाकः णाम्यिजले णाम्यिथ
ले णाम्यिगिलि वले णाम्यिपायाले
वङ्गनी पसहि दावसइ हि अपमहण्णा
णे ॥
चौपई॥ नहि जल नहि थल नाहि प
हारन सरधा नाहि रसमाहि पतार
न विस भगतके संग मिलाइ वसी
महातम उरजाइ
भाषाटी॥ दिगंवरकहेहै श्रद्धानहीजल
विषैहै नाथलविषैहै नापर्वत॥
विषैहै नापातालविषैहै केवल वि
सभक्तीके साथ महात्मा जनोंके ह
देविषे वसतीहै
मूल॥ करुणा संनंदं सहि दिस्यावद
सि विङ्गभत्तीप देवी पुणासपलिपन
णी सहेति शांतिः हर्षं नाटयति

प्र॰ चं॰
भा॰टी॰
१५५

195

चौपाई॥ करुणा सानंद कीन उचार भ
लाभया सजनी लहुसार सरधा वि
सभगतिके पास वसे महातम उर
लष रास लनि कर सांति हरष उर
भयो वडर कपालिक वचन अलयो
भाषाटी॰॥ करुणा आनंद समेत कहने
लगी हेसखी शांती वडा आनंद है
तुमको वधाई है जिसकारणते ते
रीमाता श्रद्धा विस्नुभक्ती देवीके पा
सरहनेवालीहोई है शांती हर्षक
रके रोमांचवालीहोई
मूल॥ भिक्षुः अथ धर्मस्य कामादपको
तस्य ऊचकृतिः क्षपणकः पुनर्गण
यित्वा णान्यजल इति पठति कापा
लिकः सविषादं अहो महत्कष्टमा
पतितं महाराजस्य तथाहि ध॰

चौपई॥ कामविहीन धरउ पुनि जोई
धिपणाक कहो कहा अव सोई धिप।
णक अंकमाल विसधारी गणतीक
र पुनि कीन उचारी जलथल गिर प
ताल सनाही अहै महातमके उरमा
ही कपालिक सनित विषादहकयो
मोह महीप कसट अतिभयो
भाषाटी॥ बौद्धकहेहै हे दिगंबरमै तम
को और वात पूछताहों क्या कामते ह
रगया जो धर्महै उसकी हमी कहांहै
दिगंबर गुसे होकरके कहनेलगा ध
र्मजलविषे नहींहै थलविषेभी नही
है केवल विसभक्तीके साथ महात्मा
जनोंके हृदयोंविषे वसताहै कापा।
लिक विषादकरके कहनेलगा हह
महाराज महामोहको वडाकष्ट प्रात

प्र॰ चं॰ भा॰ टी॰ १९९

प्राप्तहोयाहै सो तसी कहत ॥ ४॥

मूलं॥ मूलं देवी सिद्धये विश्वभक्तिस्तो व श्रद्धानुव्रता सत्वकन्या कामान्युक्त स्तत्र धर्मोप्यभूद्धेतुस्तिद्दं सत्ये तद्विवेक स्यहत्ये ॥ ४॥

चौपई॥ देवी विश्वभगतिहै जोई सभ सिधिनकी मूल सु सोई सत सुत स रधाहै जोई ताहि समीप वसी अब सोई काम विरकति धरम कहि जव ही वसे ग्रहस्थ होइ सुमतवही विवे क भूपके कारन जेते यदपि सिधिहो हिंगे तेते ॥

भाषाटी॥ सिद्धी जो ज्ञानका उत्पत्तीहै उ सका प्रथम विश्वभक्तीकारणाहै जद सत्वागुणकी कन्या श्रद्धाभी उसीका पिछे चलनेवाली होईहै अरु कामते

196

पृथक् होया धर्मभी जद उसीको पि
छे चलनेवाला होयाहै तद हम इस
वात मानताहै क्या विवेक राजेकी
कार्य सारी वणी होईहै ४९

मूल॥ तथापि तावदस्मत्प्रयत्नेनापि स्वा
मिनः प्रयोजनं मनुष्ठेयं तन्महाभैर
वीं विद्यां धर्मश्रद्धयो राहरणाय प्र
स्थापयाम इति निष्क्रांताः शांतिः स
खि आवामपि हताशानो व्यवसायं
देव्यै विस्रंभ कौ निवेदयावः इति
निष्क्रांताः सर्वे ॥ इति प्रबोधचंद्रनाट
के पाखंडविडंबनोनाम तृतीयोंकः ३

चौपई॥ तदपि महामोहको काज करे
होइजे ताको कछु आज ताके ले॥
न वहुत दिन धाए ताहि तुमरो ज
गत जस पाए ताते प्राण जाहिंतो।

प्र चे
भा टी
१८०
[19]

जये स्वामिकाज वललाइ सुकये
सह्हा भैरवी विद्या सार अवी पठये
होइन वार सरधा धरम डभे हरल्या
ए महातम जनङ्क झपंथ चलाए दो
हा॥ महामोह अनुचर सभे गए अषा
डोत्याग गुलाव सिंह अव सोति पु
नि भाषतहैं वड भाग मम माताके
हरन हित हुतासन आस सुकीन
विस भगतिका नाइ अव कहिए सबी
न इस कहि करुणा सोति पुनि भए
अंतरध्यान कीरत वरमा देव पिष
भयो सभा सभ सान॥दोहा॥ विसभ
गति आई सुनो सरधा रहा कीन
विवेक समीप पठाइगी होहि सग
ल अविषीन॥ ॥इति श्री मनमानसिं
चचरण सिषन गुलाभसिंघेन विरचि

ते प्रबोधचंद्रनाटके पाषंडविडंबनोनाम तृतीयोऽंकः॥ ३॥ ॥

भाषाटी॥ इस वातका तात्पर्य क्याकि कल्या बोधके उत्पत्तिके वास्ते निष्का मकर्मकरणेवाले सात्विक श्रद्धावाले पुरुषहै उनोंको विष्णुभक्ती करा के अंतःकरणशुद्धी द्वारकरके विवेक करके विद्याउत्पन्न होतीहै कापालिक विचारकरणे लगा क्या जदभी प्रत्रूकोही जय जानने में आउताहै तोभी प्रथम प्राणनाश पर्यंत यत्न करकेभी महामोह राजेका प्रयोजन वणाउणाहै जिस कारणते महामोह राजा हमारे लोकोंका स्वामीहै तिसी कारण धर्मके अरु श्रद्धाके ग्रा सकरणेवास्ते महा भैरवी विद्याको

प्रस्थानकरावेंगा ऐसावचन कहक
रके कपालिक शिष्योंके साथ निक
लगया शांतीकहैहै हेसखी करणी
हम दोजनीयांभी इनों दुष्ट आशावा
लेयोंका ऐसादुष्टउद्यम विष्णुभक्ती
देवीके कहोंगीयां ऐसा कहककें
दोईजनीयांभी निकलगईयां ॥ ४८

इति श्रीप्रबोधचंद्रनाटकेभाषाटीकायांतृ
तीयोंकः ॥ ॥३॥ ॥